ZO-08

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

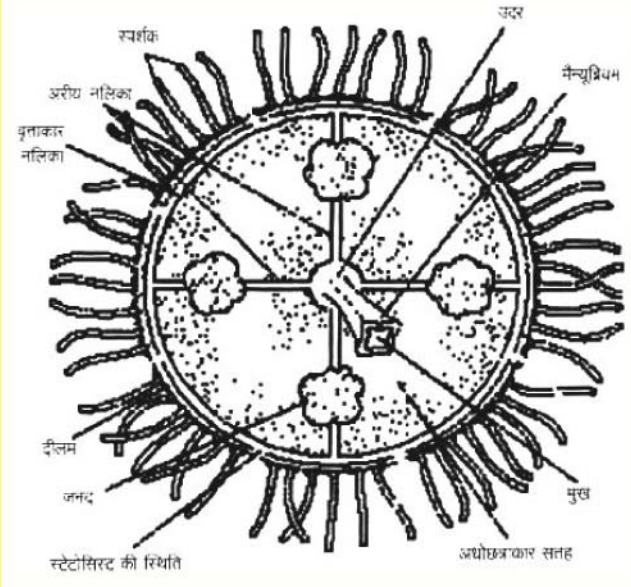

प्रायोगिक प्राणि–विज्ञान

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रायोगिक प्राणि–विज्ञान

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक / समन्वयक एवं सदस्य

संयोजक

प्रो. (डॉ.) ए.एल. भाटिया
प्राणी-शास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

सदस्य सचिव / समन्वयक

डॉ. अशोक शर्मा
सह आचार्य, राजनीति विज्ञान
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

1. **प्रो. संतोष कुमार**
   भूतपूर्व कुलपति
   डॉ. एच.एस. गौड़ विश्वविद्यालय, सागर एवं बर्कुतुल्लाह विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
2. **प्रो. नीलिमा गुप्ता**
   डीन, प्राणि- विज्ञान एवं विभागाध्यक्ष
   एम.जे.पी.रोहिल खण्ड विश्वविद्यालय, बरेली
3. **प्रो. एम.एस. शर्मा**
   प्राणी-शास्त्र विभाग
   मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय,उदयपुर
4. **डॉ. आर. एस. बेडवाल**
   प्राणी-शास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
5. **डॉ. एस.बी. लाल**
   सेवानिवृत्त प्रो.
   मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय,उदयपुर
6. **डॉ. अनिमेश मोहपात्रा**
   विभागाध्यक्ष, प्राणी-शास्त्र विभाग
   क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, पुष्कर रोड, अजमेर
7. **डॉ. अजय वर्मा**
   विभागाध्यक्ष, प्राणि- शास्त्र विभाग
   राजर्षि शासकीय महाविद्यालय, अलवर
8. **डॉ. नरेन्द्र जैन**
   बी.बी.डी. राजकीय महाविद्यालय,
   चिमनपुरा (जयपुर)
9. **डॉ.रश्मि सिशोदिया**
   प्राणि-शास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
10. **डॉ. एस. तायल**
    प्राणि-शास्त्र विभाग,
    अग्रवाल पी.जी. महाविद्यालय, जयपुर

सम्पादन तथा पाठ्यक्रम-लेखन

प्रो. (डॉ.) ए.एल. भाटिया
प्राणी-शास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

लेखक

1. **डॉ. अर्णिमा शर्मा**
   सूक्ष्म जैविकी विभाग
   महात्मा गांधी इंस्टीट्यूटऑफ एप्लाइड साइंसेस, सीतापुरा, जयपुर
2. **डॉ. नरेन्द्र जैन**
   बी.बी.डी. राजकीय महाविद्यालय
   ,चिमनपुरा (जयपुर)
3. **डॉ. मंजू शर्मा**
   प्राणि-शास्त्र विभाग
   राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर
4. **डॉ. मृदुला चतुर्वेदी**
   प्राणि-शास्त्र विभाग
   वैदिक कन्या महाविद्यालय, जयपुर
5. **डॉ. ए.एस. अंसारी**
   प्राणि-शास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
6. **डॉ. सुबोध कुमार जैन**
   प्राणि-शास्त्र विभाग
   डॉ. हरीसिंह गौड़ विश्वविद्यालय सागर (म.प्र.)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो. (डॉ.) अनाम जैतली
निदेशक
संकाय विभाग

प्रो. (डॉ.) पी. के. शर्मा
निदेशक
पाठय सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन मार्च 2009 ISBN - 13/978-81-8496-010-5

इस सामग्री के किसी भी अंश को वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में 'मिमियाग्राफी' (चक्रमुद्रण) के द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय , कोटा

प्रयोगिक प्राणि-विज्ञान

अनुक्रमणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई 1 :	स्थायी सूक्ष्मदर्शीय स्लाइड निर्माण (Preparation of Permanent Slides)	**7–15**
इकाई 2 :	स्थायी स्लाइड : निर्माण एवं अध्ययन (Permanent Slides : Preparation and Study)	**16–36**
इकाई 3 :	जैवरसायिनिकी (Biochemistry)	**37–47**
इकाई 4 :	प्राणि-कार्यिकी (Animal Physiology)	**48–75**
इकाई 5 :	सूक्ष्म जैविकी (Microbiology)	**76–101**
इकाई 6 :	संग्राहलय निदर्श का अध्ययन (Study of Museum Specimens)	**102–154**

प्रस्तावना

प्रस्तुत पुस्तक **"प्रयोगिक प्राणि - विज्ञान"** वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा द्वारा प्रस्तावित पाठ्यक्रमानुसार बी.एससी. भाग द्वितीय के प्राणि-शास्त्र के अध्ययन अध्यापन हेतु सृजित की गई है । आधुनिक विज्ञान के विषय सूक्ष्मजैविकी एवं जैव- प्रौद्योगिकी अपनी विषय-वस्तु के कारण क्लिष्ट है अत: इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए पुस्तक की भाषा-शैली को सरल, रोचक एवं सुग्राह्य बनाने का अथक प्रयास किया गया है । आवश्यकतानुसार, समानार्थी अंग्रेजी शब्द, फ़्लोचार्ट,नामांकित चित्र एवं सारणियाँ भी दी गई है । पुस्तक की विभिन्न इकाइयों को विद्वान लेखकों द्वारा लिखा गया है । लेखकों ने पुस्तक को तथ्यपरक बनाने के लिए प्रामाणिक ग्रन्थों की सहायता प्राप्त की है तथा इन रचयिताओं के लिए कृतज्ञतापन इस प्रस्तावना के माध्यम से प्रस्तुत करते है । इसकी रचना करते समय यथासंभव यह भी प्रयत्न किया गया है कि यह पुस्तक विद्यार्थियों के लिए प्रतियोगी परीक्षाओं हेतु भी सही मार्गदर्शन प्रदान करने में सहायक हो ।

पुस्तक को अधिक उपयोगी एवं प्रमाणिक बनाने हेतु प्रबुद्ध पाठकों एवं जागरूक विद्यार्थियों के रचनात्मक सुझाव सादर आमंत्रित है ।

इकाई 1 : स्थायी सूक्ष्मदर्शीय स्लाइड निर्माण (Preparation of Permanent slides)

यहाँ जन्तु -सामग्री के स्थायी माउन्ट (mount) अर्थात् स्लाइड (slide) बनाने की विधियों का वर्णन किया गया है जिससे सूक्ष्मदर्शीय संरचना का अध्ययन सुलभता से किया जा सके ।

सामग्री एवं उपकरण (Material and Equipment)

1. जन्तु अथवा जन्तु सामग्री : जीवित, ताजा मरा हुआ, अपरिरक्षित (unpreserved) ।
2. परिरक्षक (Fixatives) : फॉरमेलीन 10%, बोइन्स का घोल (Bouin's fluid), शॉडिन का घोल (schaudin's fluid) ।
3. सामान्य अभिकर्मक (common reagent) : नॉर्मल सेलाइन (normal saline), रिंगर - घोल (ringer solution), अम्लीय - जल (acid water), अम्लीय ऐल्कोंहॉल (acid alcohol) KOH अथवा NaOH का जलीय घोल, ऐल्कोंहॉल श्रेणियाँ, जाइलीन (xylene), कैनेडा बाल्सम (Canada balsam) अथवा DPX मेयर - एल्बुमिन (mayer albumin).
4. अभिरंजक (stains) बोरैक्स कार्मीन (borax carmin), ऐसीटोकार्मीन (acetocarminer) ऐसीटो - ऑर्सीन (aceto-orcein), हीमेटॉक्सलीन -इ ओसीन (Haematoxyline-eosin) ।

हनन एवं स्वापन (Killing and Narcotization)

स्थायी स्लाइड बनाने हेतु जीवित प्राणी का हनन कर उसका शीघ्र परीरक्षण करना महत्वपूर्ण होता है । इस प्रक्रिया के कारण जन्तु की सूक्ष्म संरचना लगभग उसी दशा में रहती है जिस समय वह जीवित था ।

बहुधा जीवित प्राणी को मारने से पूर्व । उसको अचेत करना आवश्यक होता है (जैसे- हाइड्रा) । क्योंकि इसका शरीर अति संकुचनशील (contractile) होता है । अचेत होने के पश्चात् प्राणी का हनन किया जाता है ।

प्राणी को अचेत एवं हनन करने हेतु स्वापक - पदार्थ प्रयोग में लाये जाते हैं । जैसे - मैन्थॉल (menthol), क्लोरोफॉर्म (chloroform), ईथर (ether), ऐल्कोहॉल (alchol) आदि ।

परिरक्षण एवं परिरक्षक (fixing and Preservation)

ताजी प्राणी -सामग्री. को पहले किसी परिरक्षक अर्थात् फिक्सेटिव (fixative) में रखा जाता है जो प्राय : किसी 2 या 3 विशिष्ट रसायनों का घोल होता है । ऐल्कोहॉल एवं फॉरमेलीन (formalin) स्वयं अति सामान्य पीररक्षक होते हैं, अत: इन्हें विशिष्ट प्रकार के पीस क्षक - घोलों में अन्य रसायनों के साथ मिलाया जाता है । पीररक्षक, सामग्री को अपेक्षाकृत कड़ा (hard) कर देते हैं तथा साथ ही कोशिकाओं एवं ऊतक के संघटकों का स्कन्दन (coagulation) कर उन्हें घोलकों में अघुलनशील कर देते हैं । इसके अतिरिक्त पारीर क्षक

प्राय: कोशिकाओं एवं ऊतकों के संघटकों को अपेक्षाकृत पारदर्शक भी कर देते हैं जिसके फलस्वरूप उनका सूक्ष्मदर्शी में परिरक्षण सुलभ हो जाता है ।

साधारणतया, प्रयोगशाला में विच्छेदन किए जाने वाले प्राणी फॉरमेलीन में परिरक्षित किए जाते हैं, अत: जिस भी जन्तु - अंग अथवा ऊतक की स्थायी स्लाइड बनाई जाती है, उन्हें परिरक्षित करने की आवश्यकता नहीं होती है ।

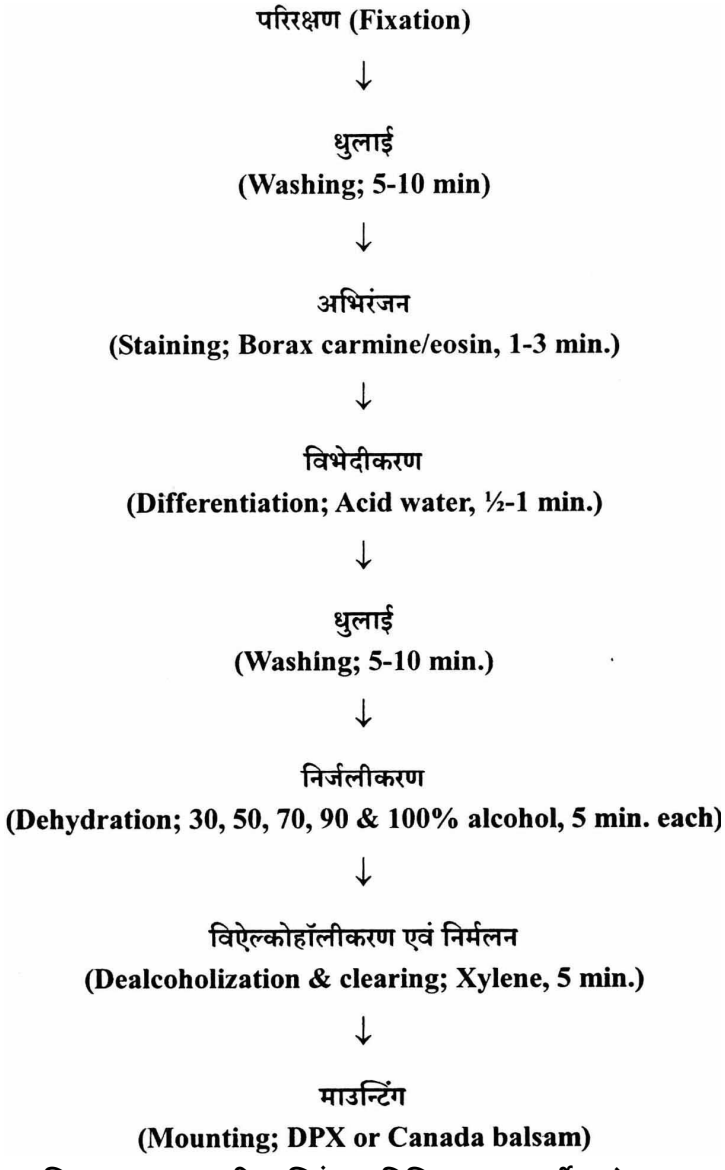

चित्र 1.1 : एकाकी अभिरंजन विधि का क्रमदर्शी आरेख ।

ताजे मारे हुए जन्तु अथवा उसके ऊतक की -परिरक्षण की प्रक्रिया जरूरी होती है । उदाहरणार्थ, ताजे प्रोटोजोआ सदस्यों को अभिरंजित करने से पहले उनका परिरक्षण जरूरी होता है । सूक्ष्म प्रोटोजोआ जन्तुओं की पूर्व-परिरक्षण-प्रक्रिया निम्नलिखित है :

ताजे जीवित पैरामीसियम, अमीबा, यूग्लीना अथवा मेंढक के मलाशयी सीलिएट आदि को पहले स्लाइड पर मेयर -एज्यूमिन द्वारा चिपकाया जाता है तथा फिर परिरक्षण किया जाता है । सर्वप्रथम स्वच्छ स्लाइड पर मेयर-एल्ब्यूमिन (Mayer albumin) की एक बूँद लेकर स्लाइड पर पूरी तरह फैला लीजिए ।

अब उपयुक्त सामग्री को इस स्लाइड के मध्य में रख दीजिए । अतिरिक्त जल हटाकर स्लाइड को पूरी तरह सुखा लीजिए और सामग्री का परिरक्षण कीजिए ।

धुलाई (washing)

इस प्रक्रिया के अन्तर्गत सामग्री को परिरक्षित करने के पश्चात् भली प्रकार से धोकर इसे साफ किया जाता हैं । यदि परिरक्षक का माध्यम ऐल्कोंहॉल है तब जन्तु -सामग्री को ऐल्कोहॉल से ही धोया जाता है तथा यदि पीररक्षक जलीय माध्यम है तब इसे जेल से धोकर हटाया जाता है।

निर्मलन (clearing)

बहुधा सामग्री के अपारदर्शी होने की स्थिति में इसे पारदर्शी बनाने हेतु 5 - 10% KOH अथवा NaOH के जलीय घोल में उबाला जाता है ।

अभिरंजन (Staining)

ऊतकों एवं कोशिकाओं के विभिन्न भाग भिन्न - भिन्न वर्णों (dyes) द्वारा अभिरंजित होते हैं। वर्ण अर्थात् अभिरंजक (stains) जन्तु -सामग्री की भौतिक -संरचना को अधिकाधिक स्पष्ट करने हेतु प्रयोग में लाये जाते हैं ।

दो प्रमुख प्रकार के अभिरंजक सामान्यतया प्रयोग में लाये जाते हैं :

(i) **केन्द्रकिय - अभिरंजक** (Nucler Stains) : ये केन्द्रक एवं कोशिकांगों को अभिरंजित करते हैं उदाहरणार्थ- हीमेटॉक्सीलीन ।

(ii) **कोशिकाद्रव्यी - अभिरंजक** (Cytoplasmic Stains) : ये कोशिकाद्रव्य को अभिरंजित करते हैं । उदाहरणार्थ- इओसिन (eosin), बोरैक्स कार्मीन, सैफ़ानिन, आदि ।

एकाकी अभिरंजन विधि के अन्तर्गत प्राय: केवल एक अभिरंजक का ही प्रयोग किया जाता है । उदाहरणार्थ- बोरैक्स -कार्मीन, ऐसिटो -कार्मीन इत्यादि ।

प्राणी -सामग्री की औतिक -संरचना के अध्ययन के लिए दोहरी - अभिरंजन तकनीक (double-staining technique) का प्रयोग किया जाता है । इस तकनीक में दो प्रकार के अभिरंजक - घोलों का प्रयोग किया जाता है, प्रथम घोल कोशिकीय - केन्द्रक को अभिरंजित करता है तथा दूसरा कोशिका -द्रव्य को वर्णित करता है । हीमेटॉक्सीलीन -इओसिन अभिरंजकों का प्रयोग दोहरी - अभिरंजन तकनीक में किया जाता है ।

विअभिरंजन अथवा विभेदीकरण (Destaining or Differentiation)

अभिरंजन -क्रिया के अन्तर्गत अनेकों बार वर्णक कोशिकाओं में आवश्यकता से अधिक आ जाता है अर्थात् ये अधिक अभिरंजित हो जाती हैं । इससे सूक्ष्मदर्शी द्वारा परीक्षण में अत्यन्त कठिनाई आती है? । अत: विअभिरंजन -प्रक्रिया में अम्लिय -जल (acid water) अथवा अम्लीय -ऐल्कोहॉल (acid alchol) द्वारा जन्तु -सामग्री से अतिरिक्त अनावश्यक वर्णक को

हटाया जाता है । यदि अभिरंजक -घोल जलीय है तब अम्लीय -जल का प्रयोग किया जाता है तथा यदि अभिरकर घोल का माध्यम ऐल्कोहॉल है तब विअभिरंजन हेतु अम्लीय ऐल्कोहॉल को प्रयोग में लाया जाता है ।

निर्जलीकरण (Dehydration)

स्थायी स्लाइड बनाने हेतु जन्तु - सामग्री से पूरी प्रकार से जल निकाला जाना आवश्यक है । यह प्रक्रिया निर्जलीकरण (dehydration) कहलाती है तथा इसके अन्तर्गत सामग्री को ऐल्कोंहॉल की विभिन्न आरोही श्रेणियों (ascending grades) अर्थात् 30% 50% 70% 90% एवं 100% एल्कोंहॉल से क्रमवार गुजारा जाता है ।

विऐल्कोहॉलीकरण अर्थात् निर्मलन (Dealcholization or Clearing)

निर्जलीकरण करने के पश्चात् ऊतक को पारदर्शक बनाने हेतु उसका निर्मलन किया जाता है । इस क्रिया के लिए जाइलीन का प्रयोग किया जाता है । चूँकि ऐल्कोंहॉल कार्बनिक -घोलकों में घुलनशील होता है इसलिए यह जन्तु सामग्री से घुलकर बाहर आ जाता है, किन्तु जाइलीन उसमें चली जाती है ।

परिरक्षण (Fixation)

↓

धुलाई
(Washing; 5-10 min)

↓

अभिरंजन प्रथम पद
(Staining Step I; Haematoxylin, $\frac{1}{2}$ – 2 min.)

↓

विभेदीकरण
(Differentiation; Acid water, $\frac{1}{2}$ – 1 min.)

↓

नीलन
(Bluing; Tap water, 10 – 30 min.)

↓

निर्जलीकरण
(Dehydration; 30, 50 & 70% alcohol, 5 min. each)

↓

अभिरंजन द्वितीय पद
(Staining Step II; Eosin, $\frac{1}{2}$ – 1 min.)

↓

निर्जलीकरण

चित्र 1.2 : दोहरी अभिरंजन विधि का क्रमदर्शी आरेख ।

माउन्टिंग (Mounting)

यह स्थायी स्लाइड बनाने का अन्तिम चरण है । इसके अन्तर्गत कैनेडा-बाल्सम अथवा DPX (डाइस्ट्रीन प्लास्टीसाईजर जाइलीन) की 1 - 2 बूँदें डालकर उस पर कवर -स्लिप सावधानी से रख दी जाती है तथा एक सूखी अर्थात् स्थायी सूक्ष्मदर्शीय स्लाइड तैयार हो जाती है ।

अभिरंजन की सामान्य विधियाँ

I. एकाकी अभिरंजन विधि (single staining technique)

1. **परिरक्षण** (fixation) : अगर जन्तु -सामग्री ताजी एवं अपीररीक्षत है, तब सर्वप्रथम इसे उपयुक्त परीरक्षक में पररीक्षत करें ।
2. **धुलाई** (washing) जन्तु -सामग्री को अच्छी तरह से धोकर उससे अनावश्यक परिरक्षक हटाए ।
3. **अभिरंजन** (Staining) : सामग्री को अभिरंजन - घोल (staining solution) जैसे बोरैक्स कार्मीन (borax carmine) में उचित समय तक रखकर अभिरंजित कीजिये ।
4. **विभेदीकरण** (Differentation) : अभिरंजन - घोल के माध्यम के अनुसार सामग्री को अम्लीय जल या ऐल्कोंहॉल में 1/2 से 2 मिनट रखकर अनावश्यक रंग हटाकर सामग्री को पारभासी (transluscent) बनाइए ।
5. **धुलाई** (washing) सामग्री को अच्छी प्रकार से (जल अथवा ऐल्कोंहॉल से) धुलाई कीजिए ।
6. **निर्जलीकरण** (Dehydration) : सामग्री को क्रमश : 30, 50, 70, 90 तथा परिशुद्ध ऐल्कोंहॉल श्रेणियों में 5 - 5 मिनट रख कर निर्जलीकरण कीजिए ।
7. **विऐल्कोहॉलीकरण एवं निर्मलन** (delcoholization and clearing)) : सामग्री को जाइलीन (xylene) में 2 मिनट के लिए रखिए ।
8. **माउन्टिंग** (Mounting). स्लाइड पर उपस्थित जन्तु -सामग्री पर कैनेडा -बाल्सम अथवा DPX की एक -दो बूँद डालकर उस पर सावधानी से कवर - स्लिप रखें । अब स्थायी - स्लाइड अध्ययन हेतु तैयार है ।

II. दोहरी अभिरंजन तकनीक (हीमेटॉक्सीलीन - इओसीन अभिरंजन तकनीक)

[double staining Technique (Haematoxylin Eosin Staining Technique)]

1. **परिरक्षण** (fixation) : अगर जन्तु - सामग्री ताजी एवं अपररीक्षत है, तब सर्वप्रथम इसे उपयुक्त परिरक्षण में परिरक्षित करें
2. **धुलाई** (washing) : जन्तु -सामर्ग्रो को अच्छी प्रकार से धोकर परिरक्षक हटाइए ।
3. **अभिरंजन** - I: हीमैटांक्सीलीन घोल में अभिरंजित कीजिए ।
4. **विभेदीकरण** (Differentation): अभिरंजित सामग्री को 30 सेकण्ड अम्लीय -जल में रखकर उससे अनावश्यक वर्ण हटाइए ।
5. **वर्ण -** विकास (colour development) : हीमैटॉक्सीलीन से वर्णित -सामग्री लाल - भूरी अथवा गहरी भूरी सी दिखाई देती है । नीलन अर्थात् ब्लूइंग (bluing) प्रक्रिया के अन्तर्गत

इस सामग्री को पानी (water) से 10 से 30 मिनट तक धोइये जिससे अन्त में सामग्री नीले रंग की हो जाए ।

6. **निर्जलीकरण** (Dehydration) सामग्री को क्रमश : 5 - 5 मिनट 30, 50 तथा 70 प्रतिशत ऐल्कोंहॉल में रखकर उसका आशिक निर्जलीकरण कीजिए ।
7. **अभिरंजन -** II: अब द्वितीय अभिरंजन हेतु सामग्री को 1/2 से 1 मिनट इओसिन घोल (eosin solution) में रखिए ।
8. **निर्जलीकरण** (dehydration) : सामग्री को 5 - 5 मिनट 70%, 90% तथा परिशुद्ध (100%) ऐल्कोंहॉल में रखकर सम्पूर्ण निर्जलीकरण कीजिए ।
9. **विऐल्कोहॉलीकरण एवं निर्मलन** (Dealcholization and clearing) : अब अभिरंजित सामग्री को 2 - 3 मिनट के लिए जाइलीन में रखिए ।
10. **माउन्टिंग** (Mounting) : स्लाइड पर जन्तु -सामग्री लीजिए एवं इस पर कैनेडा -बाल्सम अथवा DPX की एक - दो बूंद डालकर उस पर सावधानी से कवर - स्लिप रखें । अब स्थायी सूक्ष्मदर्शी स्लाइड बनकर तैयार है ।

सामान्य परिरक्षण, अभिरंजक एवं अभिकर्मक (common Fixatives stains and Reagents) परिरक्षक (Fixative)

1. फॉर्मेलिन (formalin) :

फॉर्मेलिन (formaline) 40 प्रतिशत फॉर्मेल्डीहाइड (formaldehyde) का जलीय घोल होता है। संगठन एवं निर्माण विधि (composition and method of preparation): (1) फॉर्मेलिन - 10 मिली; (ii) आसुत - जल (distilled water) - 90 मिली । आसुत -जल में 10 मिली फॉर्मेलिन डालिए एवं अच्छी तरह से दोनों को मिलाइये ।

प्रयोग-विधि (use) : परिरक्षित की जाने वाली सामग्री को कम से कम 24 घण्टे तक इस परिरक्षक में रखिए तथा इसके उपरान्त जन्तु -सामग्री को लगभग 3 घण्टे तक बहते जल (running water) से धोकर साफ कीजिए ।

2. बोइन्स - द्रव (Bouin's fluid) :

निर्माण हेतु आवश्यक सामग्री :

(i) पिकरिक अम्ल (picric acid) का संतृप्त जलीय घोल (Saturated aqueous solution) 75 मिली

(ii) ग्लेसियल ऐसिटिक अम्ल (glacial acetic acid) 5 मिली

(iii) फॉर्मेलिन (formaline) 25 मिली

निर्माण विधि :

संतृप्त पिकरिक अम्ल का घोल : इसे आसुत जल की विशिष्ट मात्रा लेकर उसमें पिकरिक अम्ल की अधिकाधिक मात्रा डालकर बीकर में घोल कर तैयार किया जाता है । बीकर को एक स्थान

पर स्थिर रख दिया जाता है तथा कुछ समय बाद ऊपरी पारदर्शक संतृप्त घोल को एक अन्य बीकर या बोतल में पृथक् कर लिया जाता है ।

अब इस घोल की 75 मिली मात्रा लेकर उसमें एक के बाद एक 25 मिली फॉर्मेलिन तथा 5 मिली ग्लेसियल ऐसिटिक अम्ल घोले जाते हैं ।

विधि : इस परिर क्षक द्वारा जन्तु -सामग्री की औतिकी (histoligy) का अध्ययन किया जाता है। परिमाण के अनुरूप जन्तु - सामग्री को इसमें 6 से 24 घण्टे तक परिरक्षित किया जाता है। बहते जल से तदुपरान्त कम से कम 24 घण्टे तक उसे धोया जाता है ।

अभिरंजक (stains)

1. बोरेक्स - कार्मीन (Borax carmine)

निर्माण हेतु आवश्यक सामग्री :

(i) बोरैक्स (borax) 4 ग्राम

(ii) कार्मीन (carmine) 3 ग्राम

(iii) 70% ऐल्कोंहॉल 100 मिली

(iv) आसुत जल (distilled water) 100 मिली

निर्माण विधि :

(i) बोरैक्स (4 ग्राम) को 100 मिली आसुत जल में डालकर बीकर में घोलिए ।

(ii) इस घोल में 3 ग्राम कार्मीन डालकर 30 मिनट तक उबालिए ।

(iii) इस मिश्रण को 2 - 3 दिन के लिए ढक कर रखिए और समय -समय पर इसे एक छड़ द्वारा हिलाते रहिए ।

(iv) (iv) इस काल के बाद घोल की मात्रा मालूम करिए तथा फिर उसमें उतनी ही मात्रा में 70% ऐल्कोहॉल मिलाइए । एक घण्टे तक मिश्रण को किसी जगह स्थिर रख दीजिए । फिल्टर करके तैयार अभिरंजक को प्रयोग में लाइए ।

प्रयोग विधि (use) : बोरैक्स -कार्मीन मुख्यत: कोशिका -द्रव्य को वर्णित करता है । इस क्रिया में पहले सामग्री को आवश्यकता से अधिक अभिरंजित कर फिर उसका अम्लीय -ऐल्कोहॉल में विभेदीकरण किया जाता है । विभेदीकरण के अन्त में रंग चमकदार पारभासी गुलाबी हो जाता है।

2. एसिटोकार्मीन (Acetocarmine):

निर्माण हेतु आवश्यक सामग्री :

(i) कार्मीन 1 या 2 ग्राम

(ii) आसुत जल (distilled water) 55 मिली

(iii) ग्लेसियल एसिटिक अम्ल 45 मिली

निर्माण विधि :

(i) बीकर में (45 मिली) ग्लेसियल ऐसिटिक अस्त लेकर उसमें 55 मिली आसुत जल घोलिए।

(ii) कोनिकल - फ्लास्क (conical flask) में इस घोल को उबालिए व मन्द गति से उबलते घोल में धीरे - धीरे कार्मीन पाऊडर डालकर इसे काँच की छड़ द्वारा घोलिए ।

(iii) जब कार्मीन पूरी तरह घुल जाय तब इस मिश्रण को कमरे के तापमान तक ठंडा कीजिए तथा फिल्टर कर उस थोक - घोल (stock solution) को संग्रहीत कर लीजिए ।

(iv) परिरक्षक के लिए घोल में लोहे के बुरादे की एक चुटकी डाल दीजिए ।

प्रयोग विधि : यह अभिरंजक केन्द्रकयि - अंगकों को वर्णित करता है । गुणसूत्रों आदि के अध्ययन हेतु स्क्वॉश (sqash) एवं स्मियर (smear) बनाने हेतु इसे प्रयोग में लाया जाता है।

3. ऐसिटोऑर्सिन (Aceto-orcein) :

निर्माण हेतु आवश्यक सामग्री :

(i) आसुत जल (distilled water) 55 मिली

(ii) ऑर्सिन (orcein) 1 ग्राम

(iii) ग्लेसियल ऐसिटिक - अम्ल 45 मिली

निर्माण विधि :

बीकर में (45 मिली) ग्लेसियल ऐसिटिक - अम्ल लेकर उसमें 55 मिली आसुत -जल मिलाइए। तदुपरान्त कोनिकल - फ्लास्क (conical flask) में इस घोल को उबालिए एवं ग्लास की छड़ की सहायता से धीरे - धीरे ऑर्सिन - पाउडर इसमें घोलिए । ऑर्सिन के पूर्ण रूप से घुल जाने पर इस मिश्रण को कमरे के तापमान पर ठंडा कर लीजिए । इस थोक - घोल (stock-solution) को फिल्टर कर लीजिए तथा परिरक्षण हेतु इसमें लोहे के बुरादे की एक चुटकी डाल दीजिए ।

प्रयोग-विधि : यह अभिरंजक केन्द्रकों को अभिरंजित करता है । गुणसूत्रों के अध्ययन हेतु स्कॉश (squash) अथवा स्मियर (smear) बनाने के प्रयोग में भी इसे लाया जाता है ।

4. **हीमेटॉक्सीलीन अभिरंजक (Haematoxylin stain) :** हीमेटॉक्सीलीन से अनेक प्रकार के अभिरंजक बनाए जाते हैं । एक सामान्य अभिरंजक हेरिस - हीमेटॉक्सीलीन घोल (Harris's haematoxylin solution) है जिसको निम्नलिखित विधि से तैयार किया जाता है।

निर्माण हेतु आवश्यक सामग्री :

(i) हीमेटॉक्सीलीन 0. 5 ग्राम

(ii) आसुत जल 100 मिली

(iii) मक्र्यूरिक ऑक्साइड 0. 25 ग्राम

(iv) अमोनियम अथवा पोटैशियम ऐलम 10 ग्राम

(v) परिशुद्ध ऐल्कोहॉल 5.0 मिली

निर्माण विधि :

(i) हीमेटॉक्सीलीन पाऊडर को परिशुद्ध ऐल्कोहॉल में हल्का गर्म करके घोलिए ।

(ii) पृथक बीकर में अमोनियम या पोटेशियम ऐलम को जल में गर्म करके घोलिए ।

(iii) एक बड़े बीकर में दोनों घोलों को मिलाकर प्राप्त मिश्रण को जल्दी से उबालिए ।

(iv) बीकर को आग से हटाकर उसमें मर्क्यूरिक ऑक्साइड डालिए व घोल को शीघ्रता से ही ठण्डा कर लीजिए ।

प्रयोग-विधि : यह भी एक अति सामान्य केन्द्रकीय अभिरंजक (nuclear stain) है एवं केन्द्रकीय अंगकों को गहरा नीला अभिरंजित करता है ।

5. इओसीन घोल (Eosin stain): यह अभिरंजक 1 ग्राम इओसिन पाऊडर को 200 मिली 70% ऐल्कोंहॉल में घोल कर बनाया जाता है ।

यह कोशिका द्रव्यी - अभिरंजक (cytoplasmic stain) है । हीमेटॉक्सीलीन के साथ यह दोहरी अभिरंजन तकनीक में प्रयोग में लाया जाता है ।

अभिकर्मक (Reagents)

1. नॉर्मल सेलाइन (Normal saline) :

(i) मेढक हेतु (0.75%)

सोडिक्य क्लोराइड (sodium chloride)	0.75 ग्राम
आसुत जल (distilled water) घोलें ।	100 मिली

(ii) स्तनी हेतु (0.9%)

सोडियम क्लोराइड (sodium chloride)	0.9 ग्राम
आसुत जल (distilled water) घोलें ।	100 मिली

2. रिंगर विलयन (Ringer solution):

सोडियम क्लोराइड (sodium chloride)	0.6 ग्राम
पौटेशियम क्लोराइड (Potassium chloride)	0.042 ग्राम
कैल्शियम क्लोराइड ($Ca\ Cl_2$)	0.024 ग्राम
सोडियम बाइ कार्बोनेट ($NaHCO_3$)	0.01 ग्राम
आसुत जल (distilled water)	100 मिली

सभी को घोलें ।

इकाई 2 : स्थायी स्लाइड : निर्माण एवं अध्ययन (Permanent Slide : Perparation and study)

इस अध्याय के अन्तर्गत विभिन्न विच्छेदित सामग्रियों की स्थायी स्लाइड अर्थात माउन्ट (mount) बना कर उनकी संरचना का अध्ययन किया जाएगा ।

1. पैरामीसियम एवं यूग्लीना (Paramecium and Euglena)

विधि (Procedure) :

1. एक स्वच्छ स्लाइड पर मेयर अल्बुमिन (Mayer albumin) की एक बूँद डाले तथा रगड़कर स्लाइड के चारों और फैलादें ।
2. पैरामीसियम या यूग्लीना संवर्धन की कुछ बूंदें स्लाइड के बीच में डाले ।
3. एक बूँद 100% इथाइल ऐल्काहॉल की मिलायें ।
4. कमरे के तापक्रम पर सभी को सूखने दें ।
5. आसुत जल से धोयें ।
6. दोहरी अभिरंजन विधि अनुसार अभिरंजित करें ।
7. जाइलीन में निर्मलन (clear) करें तथा DPX में माउण्ट करें ।
8. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से इस प्रकार बनी हुई स्लाइड का अध्ययन करें ।
9. एक स्वच्छ नामांकित चित्र बनाएँ ।

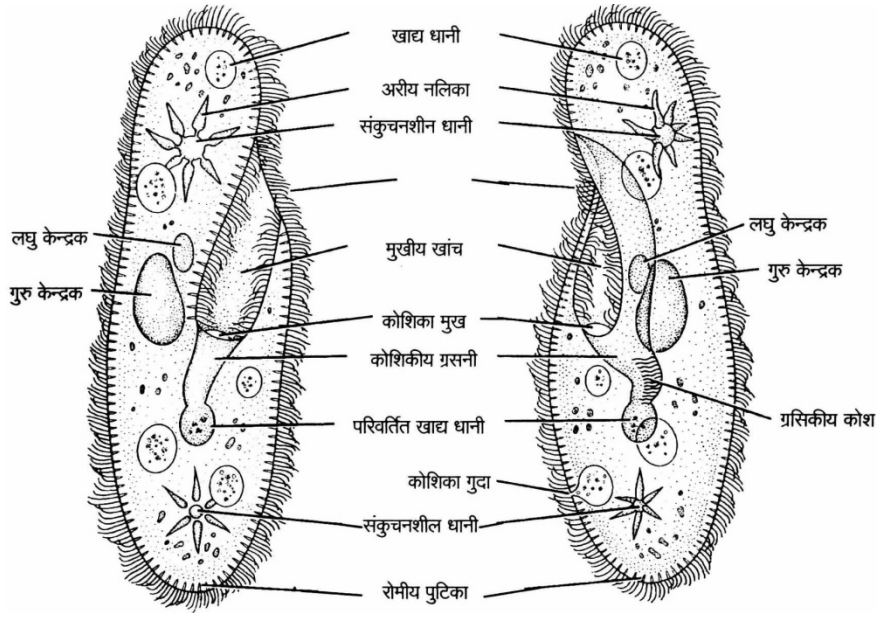

चित्र 2.1 : पैरामीसियम; A. अधर दृश्य; B. पार्श्व दृश्य

2. मेंढक के मलाशयी सिलिएट (ओपेलाइना, बेलन्टिडियम एवं निक्टोथीरस) [Rectal ciliates of frog (Opalina, Balantidum, and Nyctotherus)]

विधि (Procedure) :

1. एक ताजा पकड़ा तथा बेहोश किया हुआ मेंढक लें ।
2. शल्य क्रिया द्वारा मलाशय निकाल दें ।
3. एक 0.75% नमक के घोल या मेंढक रिंगर घोल से भरे हुए वॉच ग्लास में मलाशय को खोले ।
4. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी द्वारा मलाशयी सिलीएटों की उपस्थिति निश्चिंत करें ।

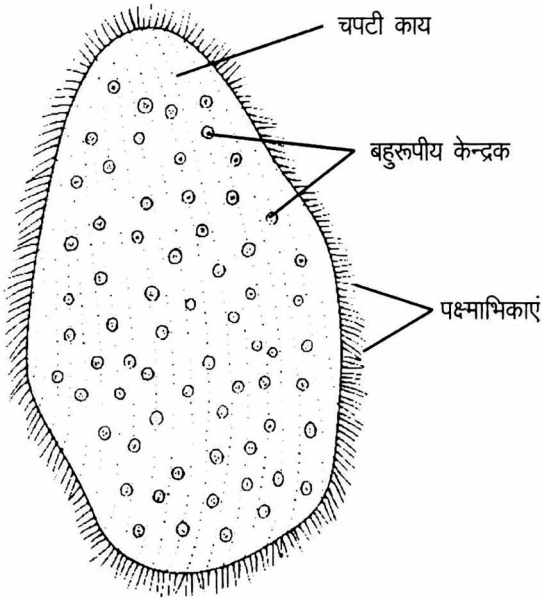

चित्र 2.2 : ओपैलाइना

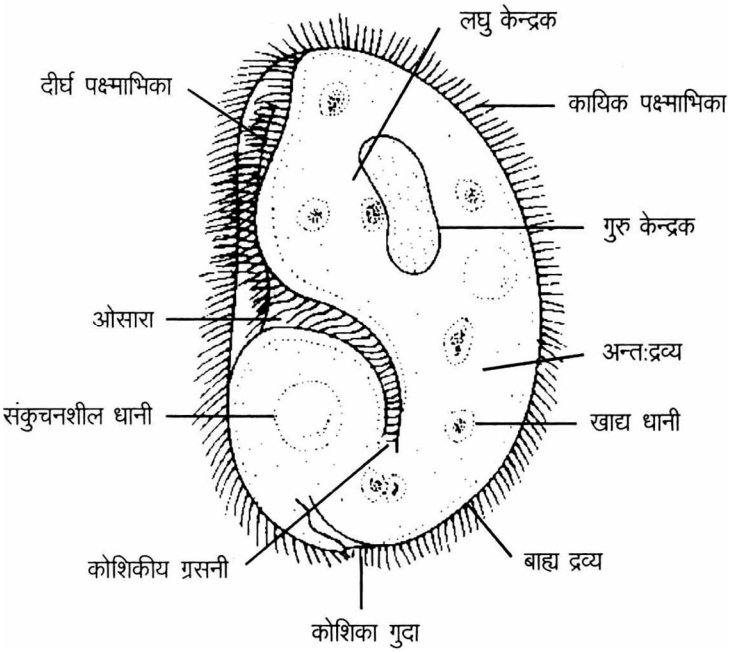

चित्र 2.3 : निक्टोथिरस

5. पैरामीसियम एवं यूग्लीना की स्लाइड निर्माण की विधि अनुसार स्लाइड बनाए ।
6. एक स्वच्छ नामांकित चित्र बनाएँ ।

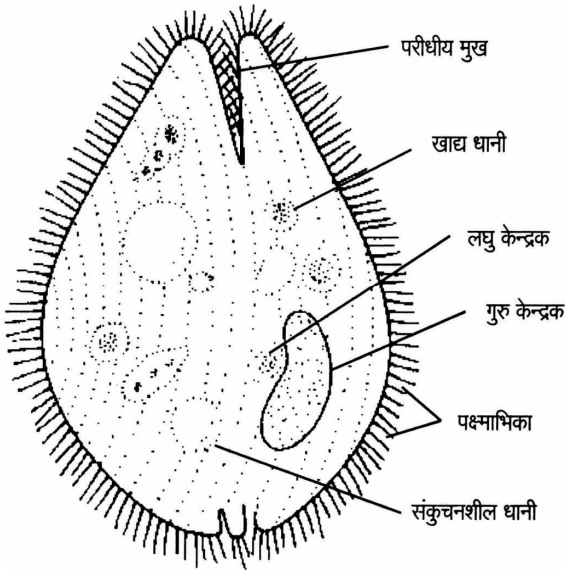

चित्र 24 : बैलनटीडियम

3. फोरामिनीफेरा के कवच (foraminiferous shells)

विधि (Procedure):

1. एक शीशी से कुछ सूखे हुए कवच या परिरक्षित फोरामिनीफेरा कवच की कुछ बुँदे आसुत जल रखे हुए वॉच ग्लास में ले ।

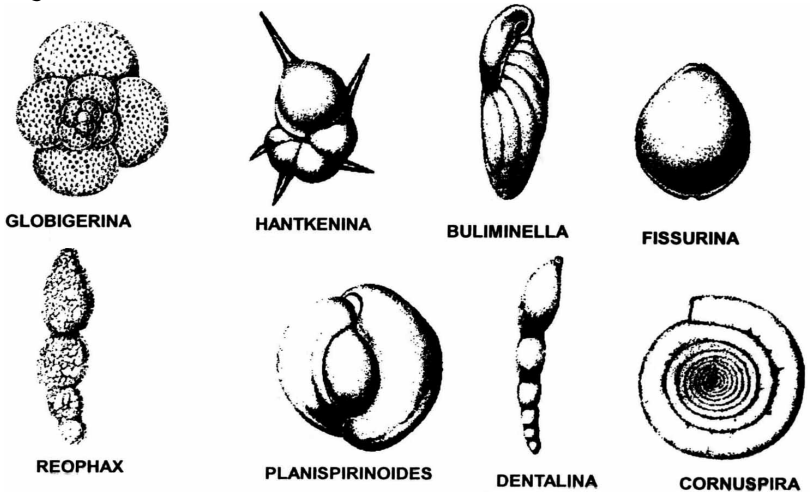

चित्र 2.5 : फौरामिनिफेरा के कवच

2. समस्त सामग्री को जल से धोयें ।
3. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए निर्जलीकरण, अभिरंजन तथा निर्मलन करें।

4. समस्त प्रकार के कवचों को एक स्वच्छ स्लाइड पर DPX में माउण्ट करें ।
5. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी में देखकर कवचों के आकार नोट करें ।
6. सभी का नामांकित चित्र बनाएँ ।

4. स्पंज कंटिकाएँ (sponge spicules)

विधि (Procedure) :

1. 5% KOH विलयन सहित एक परखनली में एक छोटा सा केल्शियमी स्पंज का टुकड़ा लें।
2. इस टुकड़े को तब तक उबाले जब तक यह घुल न जाए तथा स्पंज कंटिकाएँ अलग न हो जाए।
3. आसुत जल में अनेक बार कंटिकाओं को धोए ।

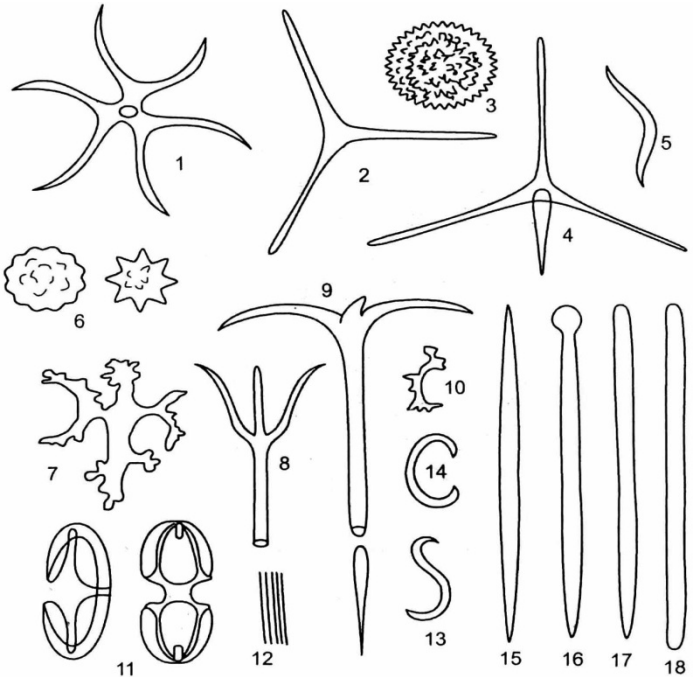

चित्र 2.6 : स्पंज की कंटिकाएँ

1. डाइकोट्राइईन; 2. ट्राइएक्टिन; 3. स्टिरेक्टर 4. टेट्रेक्टीन 5. टोक्सा 6. स्फिरेस्टर 7. डेस्मा; 8. प्रोट्राइईन 9. ऑर्थोट्राइईन; 10. स्पाइरेस्टर 11. चीला, पार्श्वदृश्य (बायाँ), सामने का दृश्य (दायाँ); 12. ट्राइकोड्रेग्मेटा; 13. सिग्मास्पायर 14. सिग्मा 15. ऑक्सिया; 16. टायलोस्टाइल 17. स्टाइल; 18. स्ट्रोन्गाइल

4. कंटिकाओं को एक वॉच ग्लास में खाली करें ।
5. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए निर्जलीकरण, अभिरंजन तथा निर्मलन करें।
6. कंटिकाओं को एक स्वच्छ स्लाइड पर DPX से माउण्ट करें ।
7. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से इस प्रकार बनी हुई स्लाइड का अध्ययन करें ।
8. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

5. स्पन्जिन तन्तु (Spongin Fibers)

विधि (Procedure) :

1. आसुत जल से भरे हुए व वॉच ग्लास में एक स्पन्जिन तन्तु का छोटा सा टुकड़ा लें ।
2. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए निर्जलीकरण, अभिरंजन तथा निर्मलन करें।
3. एक स्वच्छ स्लाइड के बीच में इस प्रकार तैयार स्पांजिन तन्तु को फैलाकर DPX से माउण्ट करें ।
4. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से स्लाइड को अध्ययन करें ।
5. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

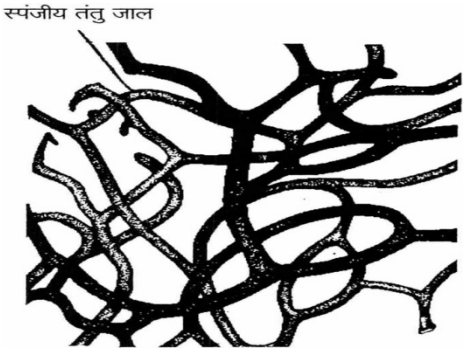

चित्र 2.7 : स्पन्जिन - तन्तु

6. स्पंज जेम्यूल (sponge Gemmule)

विधि (Procedure) :

1. एक वॉच ग्लास में 2 - 3 स्पंज जेम्यूल लें ।
2. आसुत जल से धोयें ।
3. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए निर्जलीकरण, अभिरंजन तथा निर्मूलन करें।
4. जेम्यूल को बिना दबाए एक स्वच्छ स्लाइड पर DPX से माउण्ट करें ।
5. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से स्लाइड का अध्ययन करें ।
6. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

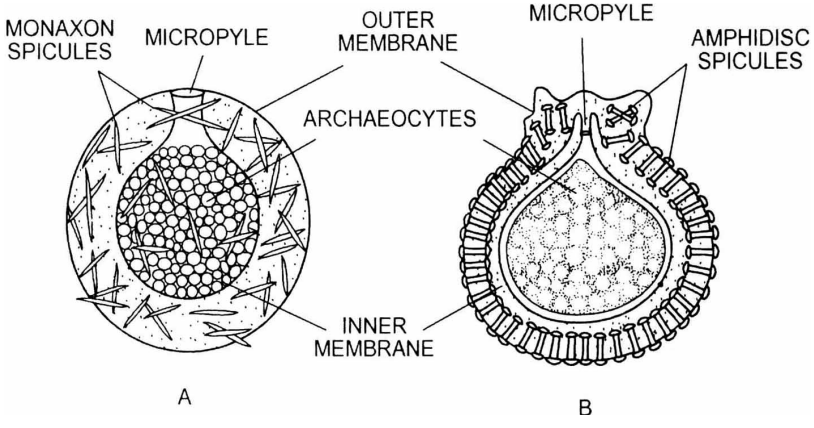

चित्र 2.8 : A. जेम्यूल : कंटिकाओं के साथ; B. जेम्यूल : मीइक्रोपाइल छिद्र के साथ

7. हाइड्रा (Hydra)

विधि (Procedure) :

1. ब्रुश की सहायता से आसुत जल से भरे हुए वॉच ग्लास में एक हाइड्रा लें ।
2. आसुत जल से धोयें ।
3. एकाकी या दोहरी अभिरंजन-विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
4. एक स्वच्छ स्लाइड पर DPX से माउण्ट करें ।
5. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से स्लाइड का अध्ययन करें ।
6. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure) :

संघ (Phylum) सीलन्ट्रेटा (coelenterate)

1. अरीय सममित (radially symmetrical), द्विस्तरीय बहुकोशिकीय प्राणी ।
2. जीवन -चक्र में दो दैहिक रूप मिलते हैं : पॉलिप (polyp) तथा मैड्यूसा (medusa) रूप ।
3. मुख प्राय : दंशिका -युक्त स्पर्शकों द्वारा घिरा होता है ।
4. देह भित्ति एक गुहिका घेरे होती है जिसे सीलन्ट्रॉन कहते हैं ।

वर्ग (class) हाइड्रोजोआ (hydrozoa)

जीवन -चक्र में प्राय: दोनों दैहिक रूप अर्थात् पॉलिप एवं मैड्यूसा रूप मिलते हैं ।

गण (order) हाइड्रॉथीका (Hydroide)

1. जीवन-चक्र में पॉलिप रूप मान्य होता है जो प्राय: स्थानबद्ध होता है ।
2. पॉलिप रूप से अलैंगिक जनन -क्रिया द्वारा छोटे मुक्त -जीवी लैंगिक मेड्यूसी बनते हैं ।

उपगण (suborder) एन्थोमेड्यूसी (जिम्नोंब्लास्टिया)
Anthomedusae (Gymmoblastea)

पॉलिप हाइड्रोथीका नामक अकोशिकीय आवरण द्वारा रेखित नहीं होता है ।

श्रेणी (Genus) **हाइड्रा** (Hydra)

1. मीठे अलवणित जल के जलाशयों में पाया जाने वाला सामान्य जन्तु । सामान्य जातियाँ है हरा हाइड्रा क्लोरोहाइड्रा, विरिडिसीमा (= हाइड्रा विरिडिस) तथा भूरा हाइड्रा पैल्मैटोहाइड्रा आलिगएक्टिस (= हाइड्रा फस्का अथवा हा. ऑलिगएक्टिस) । हरा एवं रंग इन जातियों में सहवासी एल्गी जूक्लोरेला तथा जूजैन्थिली पर क्रमश: निर्भर करता है ।
2. हाइड्रा अपने निचले छोर जिसे पाद अथवा अधोबिम्ब (foot or basal) कहते हैं, से प्राय: किसी आधार -वस्तु से चिपका रहता है किन्तु यह स्थानबद्ध नहीं होता है ।
3. नलाकार संकुचनशील देह लगभग 1 से 3 सेमी लम्बी होती है ।
4. ऊपरी स्वतन्त्र छोर अर्थात् मुखीय अंत एक शंक्वाकार प्रवर्ध जिसे हाइपोस्टोम या अधोमुख (Hypostome) कहते हैं, में विभेदित होता है । हाइपोस्टोम के मध्य में एक छिद्र होता है जिसे मुख (mouth) कहते हैं ।

5. हाइपोस्टोम या अधोमुख के आधार पर एक चक्र में 6 से 10 महीन सकुंचनशीन धागे - समान स्पर्शक (tentacles) लगे होते है । स्पर्शकों की सहायता से जीवित शिकार को पकड़ा जाता हैं तथा कभी इन्हें गमन के लिए भी प्रयोग किया जाता है ।

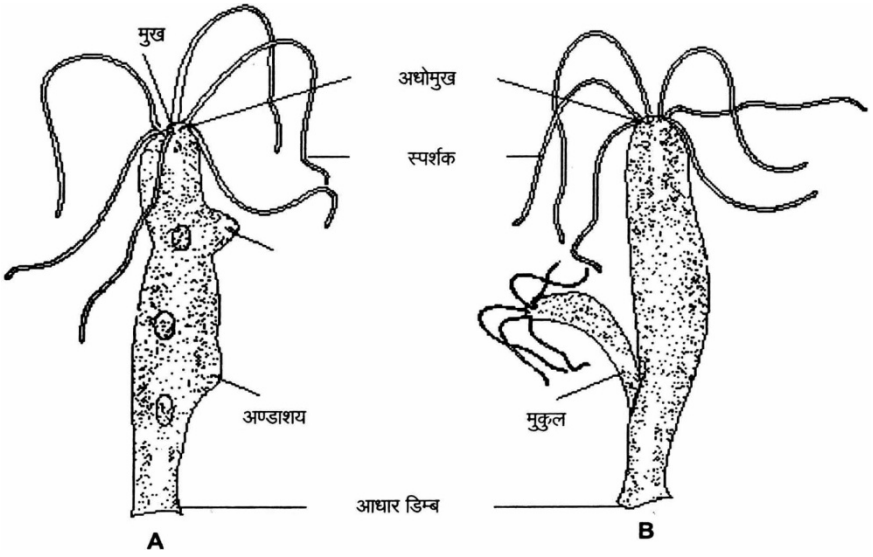

चित्र 2.9 : हाइड्रा : A. लैंगिक (द्विलिंगी) सदस्य; B. अलैंगिक (मुकुल सहित) सदस्य

6. कई बार जन्तु के पार्श्वों से एक या दो अलैंगिक मुकुल (bud) वृद्धि की प्रावस्था में संलग्न मिलते हैं । जब मुकुल पूर्ण रूप से विकास कर लेता है तब यह जनक से पृथक हो जाता है ।
7. प्रतिकूल परिस्थितियों में जन्तु पर अस्थायी जनदों का विकास होता है । यदि जनद शंक्वाकार (conical) होते हैं तथा देह पर मुखीय भाग के निकट बनते हैं तो वे वृषण (testes) होते हैं । इसके विपरीत यदि जनद गोलाकार हैं तथा देह के निचले भाग में बनते हैं तो वे अण्डाशय (ovaries) होते हैं ।
8. हरे हाइड्रा द्विलिंगी (bisexual) जातियों में वृषण एवं अण्डाशय एक ही सदस्य में बनते हैं किन्तु भूरे हाइड्रा जैसी एकलिंगी (unisexual) जातियों में एक सदस्य में केवल वृषण अथवा अण्डाशय बनते है ।

8. ओबीलिया निवह एवं मेड्यूसा (Obelia colony and Medusa)

विधि (Procedure) :

1. एक जल से भरे हुए वॉच ग्लास में ओबिलिया के 1 - 2 पॉलिप या मेड्यूसा लें ।
2. एकाकी या दोहरी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
3. एक स्वच्छ स्लाइड पर DPX से माउण्ट करें ।
4. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से स्लाइड का अध्ययन करें ।
5. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

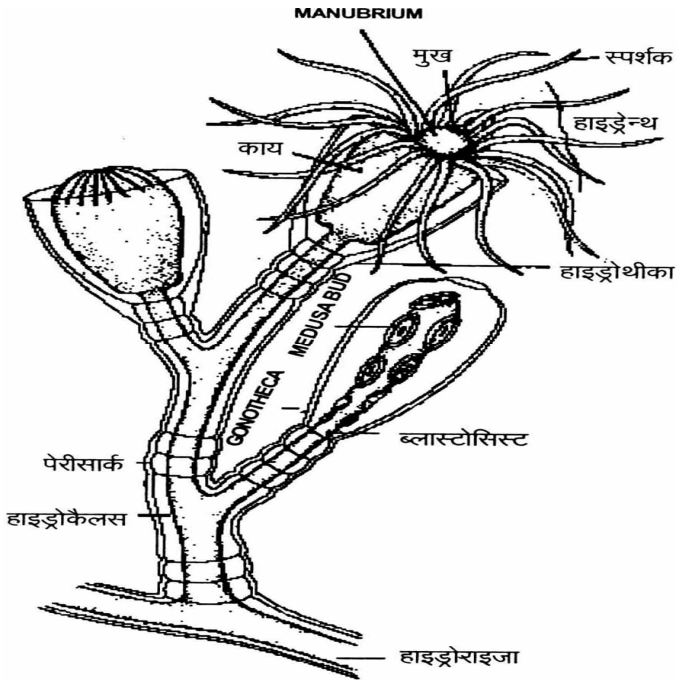

चित्र 210 : ओबिलिया

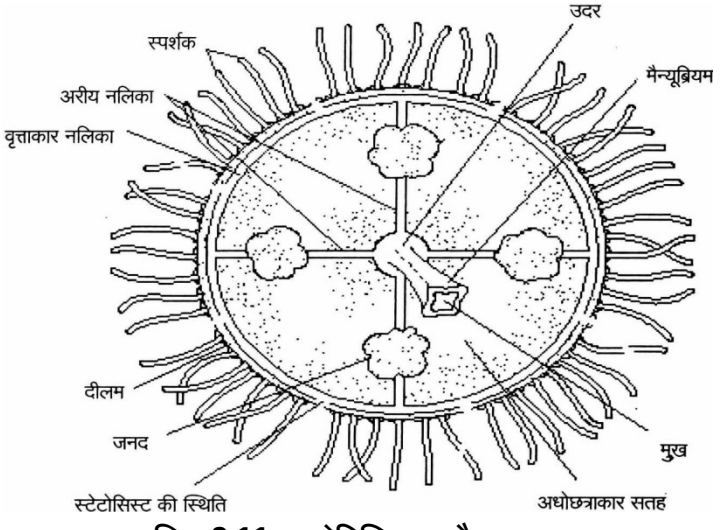

चित्र 2.11 : ओबिलिया : मैड्यूसा ।

9. नेरीज एवं हिटरोनेरीज के पार्श्वपाद

(Parapodium of Nerels and Hereronerels)

विधि (Procedure)

1. नेरीज के शरीर से कुछ पार्श्वपाद या हिटरोनेरीज के एपीटोक (epitoke) भाग से कुछ पार्श्वपाद काटे।
2. सभी को एक आसुत जल से भरे वॉच -ग्लास में धोयें ।
3. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।

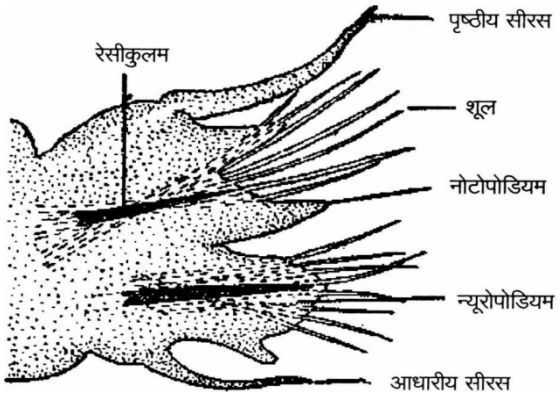

चित्र 2.12 : नेरीज : पार्श्व पाद ।

4. एक स्वच्छ स्लाइड पर फैलाकर DPX से माउण्ट करें ।
5. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से संरचना का अध्ययन करें ।
6. चित्र 2.12 एवं 2.13 की सहायता से स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

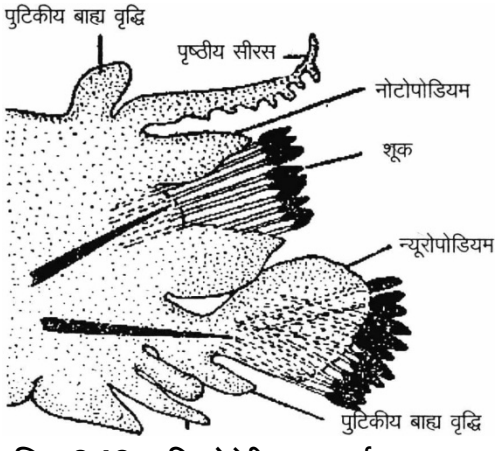

चित्र 2.13 : हिटरोनेरीज : पार्श्व - पाद ।

संरचना (structure) :

नेरीज पार्श्वपाद (Nerels Parapodium) :

1. नेरीज के पार्श्वों में देह -भित्ति एक जोड़ी पार्श्व -पादों (parapodium) में विभेदित होती है। पार्श्व -पाद द्विपिण्डकयि (bilobed) होता है तथा ऊपरी नोटोपोडियम (notopodium) तथा निचले न्यूरोपोडियम (neuropodium) में विभक्त होता है।
2. 2. नोटोपोडियम एवं न्यूरोपोडियम स्वयं द्विपिंडकीय होते है । नोटोपोडियम के पृष्ठ तल से एक पृष्ठ सिरस (dorsal cirrus) निकला रहता है तथा न्यूरोपोडियम के अधर तल से एक अधर सिरस (ventral cirrus) निकला रहता है । नोटोपोडियम एव न्यूरोपोडियम से महीन काटे -स्वरूप काइटिन के बने सीटी अर्थात् शूक (serae) निकले रहते हैं ।
3. पार्श्व -पाद के भीतर एसीक्यूलम नामक काइटिन की बनी छड़ स्थित होती है जो इसे साधे रखती है ।
4. प्रजनन काल में देह -गुहा में जनद भी स्थित होते हैं ।

5. देह -गुहा के अधर -पार्श्व भागों में एक जोड़ी उत्सर्गिकाएँ (nephridia) स्थित होती हैं जिसके छिद्र (nephridiopores) पार्श्व -पाद की अधर सिरस के ठीक नीचे स्थित होते हैं।

हिटरोनेरीज पार्श्व-पाद (Heteronereis Parapodium)

1. जननकाल में नेरीज की अनेक जातियों (जैसे- N. dumerilli) में जनदों के विकास से पूर्व महत्वपूर्ण संरचनात्मक परिवर्तन होते है । इस प्रावस्थाको हिटरोनेरीज (Heteronereis) प्रावस्था कहते हैं ।
2. देह दो भागों अर्थात् अग्र अपरिवर्तित अलैंगिक भाग एटोक (atoke) तथा पश्च परिवर्तित लैंगिक भाग (जनद युक्त) एपीटोक (epitoke) में विभेदित हो जाती है ।
3. एपीटोक भाग के पाशर्ववाद अत्यन्त विकसित, बड़े एवं चपटे हो जाते हैं तथा इनके पिण्ड नये उपपिण्डों में बँट जाते हैं ।
4. पार्श्वपाद के रोमक (cirri) भी इस प्रकार लम्बे हो जाते हैं तथा इनके आधार पर निकटवर्ती क्षेत्रों पर भी पक्षी -सदृश्य पिण्ड (foliaceous outgrowths) विकसित हो जाते हैं ।
5. पार्श्वपाद के पुराने शूक (setae) गिर जाते हैं तथा इनके स्थान पर नये चप्पू-समान शूक (oarlike setae) विकसित हो जाते हैं ।
6. इन महत्वपूर्ण परिवर्तनों के कारण हिटरोनेरीज प्रावस्था समुद्र की सतह पर स्वतन्त्र होकर तैरती है जिससे मैथुन एवं निषेचन की सम्भावना बहुत बढ़ जाती है ।

10. केंचुआ : अण्डाशय (Earthworm : Ovary)

विधि (Procedure)

1. एक स्पष्ट क्लाइटैलम (clitellum) युक्त परिरक्षित केंचुआ लें ।
2. देह -भित्ति खोले तथा पिन लगाएँ ।
3. क्लाइटैलम से कुछ खंडों के पश्चात् आहार नाल काँटे ।

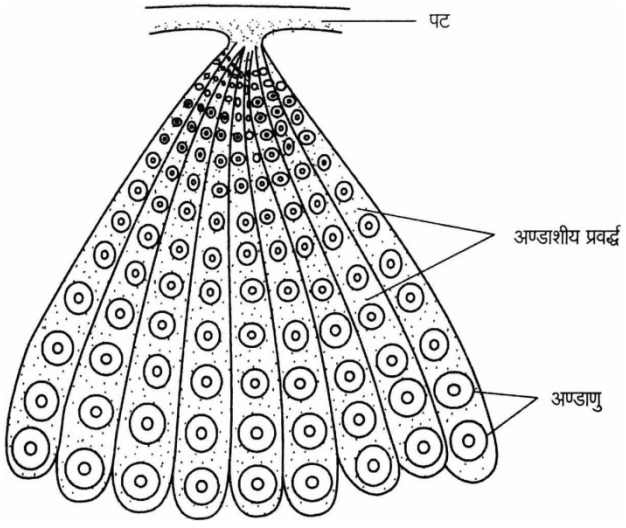

चित्र 2.14 : केंचुआ : अण्डाशय

4. एक भोंथरे सिरे वाली चिमटी से कटी हुई आहार नाल को 13वें खण्ड तक ऊपर तथा आगे की ओर उठाएँ ।
5. जहाँ काले रंग का हृदय तथा शुक्राशय आपस में जुड़ते हैं, वहाँ दो श्वेत बिन्दु देखें ।
6. इन्हें नुकीले सिरे वाली चिमटी से अलग कर दें ।
7. इन्हें एक ग्लास स्लाइड पर एक बूँद जल के साथ सूक्ष्मदर्शी से देखकर पहचान करें ।
8. अण्डाशय को आसुत जल से भरे हुए वॉच-ग्लास में रखें ।
9. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
10. DPX माउण्ट करें ।
11. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से संरचना का अध्ययन करें ।
12. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure) :

1. केंचुए में एक जोड़ी अण्डाशय देह - गुहा के अधर पर पाई जाती हैं ।
2. अण्डाशय देह खण्ड 12 व 13 के बीच के अंत : पट (septum) से चिपके रहते हैं ।
3. प्रत्येक अण्डाशय कई अंगुली -रूपी नलिकाओं का बना होता है जिनमें अण्ड अर्थात् ओवा (ova) भरे होते हैं ।

11. केंचुआ : पटीय - उत्सर्गिका (Earthworm : Septal Nephirdium)

विधि (Procedure)

1. एक परिरक्षित केंचुआ ले । देह भित्ति खोले तथा पिन लगाएँ
2. ग्रसनी उत्सर्गिका (pharyngeal nephridia) के लिए 4 - 6 खण्डों तथा पटीय-उत्सर्गिका के लिए क्लाइटैलम के पश्चात् आहारनाल पर दिखाई देने वाले तन्तुरूपी संरचना को चिमटी से अलग करें ।
3. इन्हें आसुत जल से भरे वॉच ग्लास में रखें ।
4. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
5. उत्सर्गिका को फैलाकर DPX में माउण्ट करें ।
6. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से संरचना का अध्ययन करें ।
7. चित्र 2.15 की सहायता से एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनायें ।

संरचना (structure) :

1. पटीय -उत्सर्गिकाएँ देह के 15 से अन्तिम खण्ड तक अंत : पटों (septa) से लगी हुई पायी जाती हैं ।
2. प्रत्येक उत्सर्गिका एक काय (body), पतली ग्रीवा एवं एक रोमाभी मुखिका जिसको नैफ्रोस्टोम (nephrostoma) कहते हैं, में विभक्त होती है । नैफ्रोस्टोम देहगुहा (coelom) में स्थित होता है ।
3. उत्सर्गिका - काय एक सीधा पिण्ड (straight lobe) एवं एक कुण्डलित कुन्तल - पिण्ड (coiled lobe) की बनी होती है । सीधा पिण्ड नैफ्रोस्टोम से ग्रीवा द्वारा जुड़ा होता है ।

कुण्डलित कुन्तल -पिण्ड सामान्य उत्सर्जन नलिका (common excretory duct) में जुड़ा होता है ।

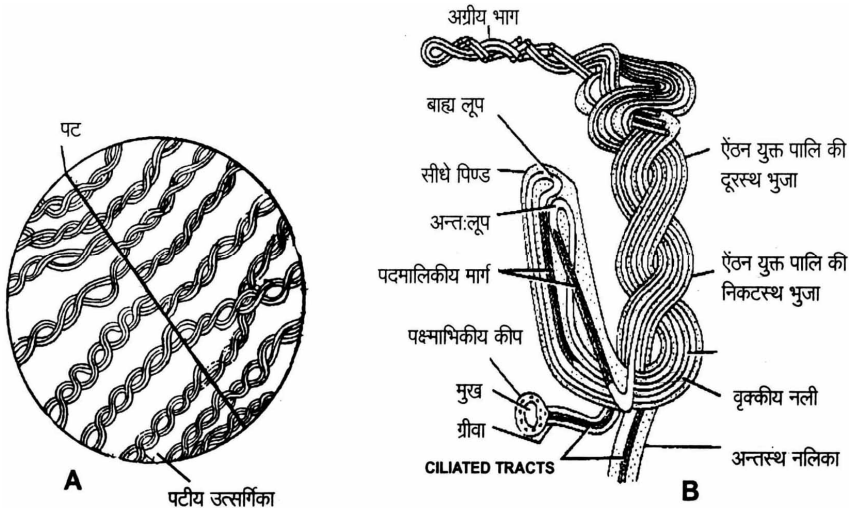

चित्र 2.15 : केंचुआ : A. पटीय -उत्सर्गिका विन्यास; B. एक पटीय - उत्सर्गिका

12. केंचुआ : तंत्रिका मुद्रा (Earthworm : Brain ring)

विधि (Proceduce) :

1. एक परिरक्षित केंचुआ लें तथा देहभित्ति खोलने के पश्चात् पिन लगाएँ ।
2. आहारनाल के 2 - 3 खण्डों को एक छोटे से अधर तंत्रिका -रज्जु के साथ तंत्रिका -मुद्रा को अलग कर लें ।

वैकल्पिक विधि :

1. जन्तु को पहले खण्ड तक काट दें ।
2. एक नुकीली सिरे वाली चिमटी या सुई से जन्तु की अधर सतह पर स्थित द्विशाखन (सब-फैरिन्त्रिअल गुच्छिका) को स्पष्ट करें । सरकम-फैरिन्निअल (परिग्रसनी) तथा सैरेबल गुच्छिका को स्पष्ट करें । कुछ गुच्छिकाओं के साथ अधर तंत्रिका रज्जु को काट दें ।
3. तंत्रिका-मुद्रा में स्थित आहार नाल के टुकड़ों को सावधानीपूर्वक हटा दें ।
4. इस प्रकार विच्छेदित तंत्रिका-मुद्रा को आसुत जल से भरे हुए वॉच ग्लास में स्थानान्तरित करें।
5. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
6. एक स्वच्छ स्लाइड पर DPX से माउण्ट करें ।
7. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से संरचना का अध्ययन करें ।
8. चित्र 2.16 की सहायता से स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure)

1. केंचुए की तंत्रिका-मुद्रा देह -खण्ड 3 - 4 में पायी जाती है तथा यह मुख-गुहा (buccal cavity) तथा ग्रसनी (pharynx) के बीच के खाँच (groove) को घेरे होती है ।

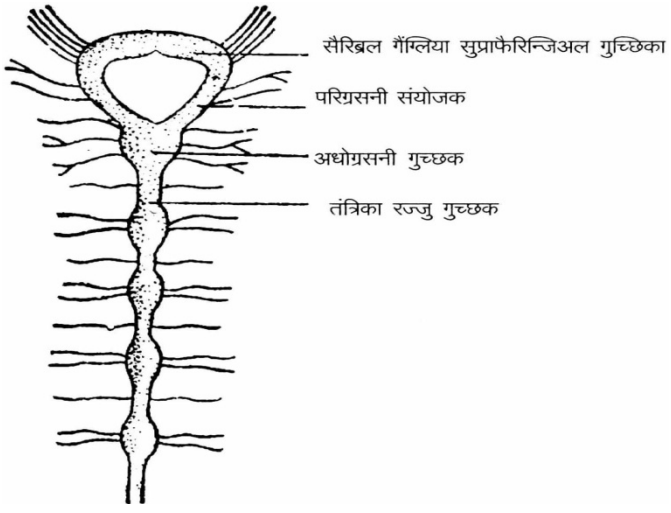

चित्र 2.16 : केंचुआ : तंत्रिका-मुद्रा (Brain ring)

2. यह एक पृष्ठीय युग्मित व संयोजित सुप्राफैरिन्जिअल -गुच्छिका (suprapharyngeal gangli) तथा एक अधरीय युगमित व संयोजित सब-फैरिन्जिअल-गुच्छिका (sub pharyngeal ganglia) की बनी होती है । दोनों गुच्छक पार्श्व दिशाओं से सरकम-फैरिन्जिअल योजी (circum pharyngeal connective) के द्वारा एक -दूसरे से जुड़े होते हैं ।

13. केंचुआ : शुक (Earthwarm seta)

विधि (Procedure)

1. केंचुए की देहभित्ति का 4 - 6 खण्डों का एक टुकड़ा काटें ।
2. पृष्ठ सतह की ओर वाली देहभित्ति का अतिरिक्त हिस्सा हटादें ।
3. इस प्रकार तैयार देह भित्ति के टुकड़े को 5% KOH विलयन में एक परखनली में लेकर 2 - 3 मिनट तक उबालें जिससे पेशी ऊतक ढीले हो जाए ।
4. जल में अच्छी प्रकार धोयें ।
5. आसुत जल से भरे वॉच ग्लास में स्थानान्तरित करें ।
6. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
7. देहभिति की पृष्ठीय सतह ऊपर रखते हुए DPX में माउण्ट करें ।
8. देहभित्ति के खण्डों में स्थित शूकों का एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाए ।

संरचना (structure) :

1. सीटे केंचुए की त्वचा में पाये जाते हैं । प्रत्येक सीटा एक सीटल-कोश (setal sac) में रहता है। ये देह-खण्ड पर चक्रों में व्यवस्थित रहते हैं ।
2. प्रत्येक सीटा 'S' रूपी होता है तथा मध्य से थोड़ा मोटा होता है । यह काइटिनस (chitinous) तथा एल्बूमिनस (albuminous) पदार्थों का बना होता है ।
3. यह जीव की गमन-क्रिया में सहायता करता है ।

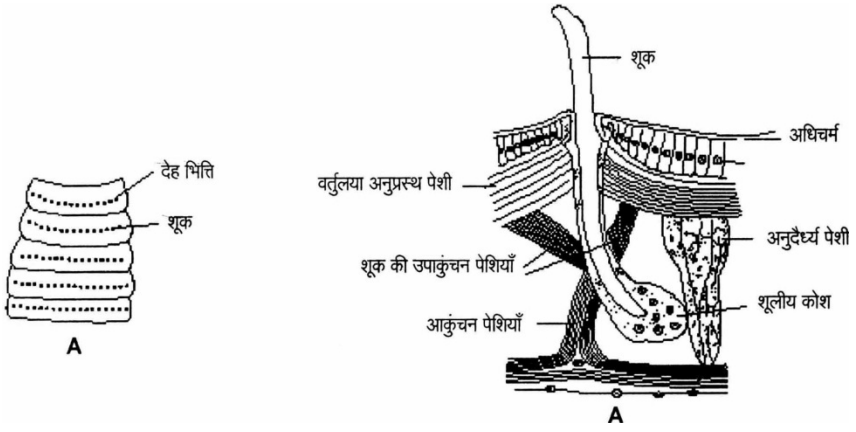

चित्र 2.17 : केचुआ : A. देह भित्ति में शूक (सीटा); B. देह भित्ति का खड़ा परिच्छेद ।

14. तिलचट्टा : लार-ग्रन्थियाँ (salivary Glands)

विधि (Procedure) :

1. एक हाल ही मारा गया तिलचट्टा लें तथा उदर से ग्रीवा भाग तक टर्गल प्लेटों को हटा कर जन्तु को खोले ।
2. विच्छेदन ट्रे में जन्तु के पिन लगाए ।
3. आहार नाल की क्रॉप (crop) को ढूँढ़े ।
4. क्रॉप के चारों ओर लगी हुई सफेद धागेनुमा संरचना जो लार-ग्रन्धि है, ढूँढ़े ।

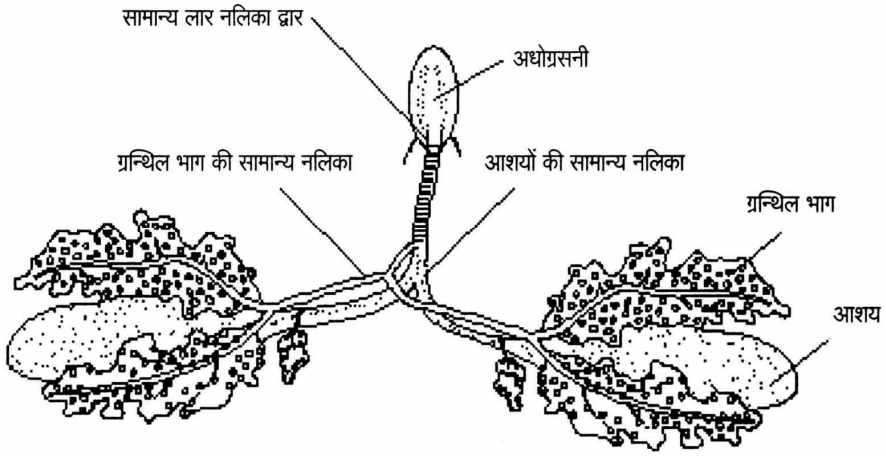

चित्र 2.18 : तिलचट्टा : लार-ग्रन्थियाँ

5. सामान्य लार नलिका से ग्रन्थि तक साफ करें ।
6. नुकीली चिमटी द्वारा संपूर्ण ग्रन्थि को खींच कर अलग करें ।
7. आसुत जल से भरे वॉच ग्लास में स्थानान्तरित करें ।
8. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
9. स्लाइड पर फैलाकर DPX से माउण्ट करें ।
10. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से संरचना का अध्ययन करें ।
11. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure)

1. तिलचट्टे में एक जोड़ी लार-ग्रन्थियाँ क्रॉप (crop) के पार्श्वों पर लगी पायी जाती है ।
2. प्रत्येक ग्रन्थि दो ग्रन्थिल पालियों (glandular lobes) तथा एक आशय (reservoir) की बनी होती है ।
3. दोनों तरफ की ग्रान्थिल-पालियों में से एक-एक सामान्य नलिका निकलती है जो मध्य में संयोजित हो जाती है ।
4. 4 इसी प्रकार दोनों तरफ के आशयों से एक-एक आशय-नलिका (duct of reservior) निकलती है जो मध्य में जुड़कर एक मध्य की संयुक्त अपवाही नलिका (efferent salivary duct) बनाती है ।
5. 5 ग्रन्थिल-पालियों की सामान्य नलिका (common duct of gland) संयुक्त अपवाही नलिका में खुलती है ।
6. संयुक्त अपवाही नलिका हाइपोफैरिक्स (hypopharynx) के नीचे खुलती है ।

15. तिलचट्टा : श्वसन-नलिका (Trachea)

विधि (Procedure) :

1. एक हाल ही मारा गया तिलचट्टा लें तथा उदर से प्रोथोरेक्स तक की टर्गल प्लेटें हटाकर जन्तु को खोलें ।

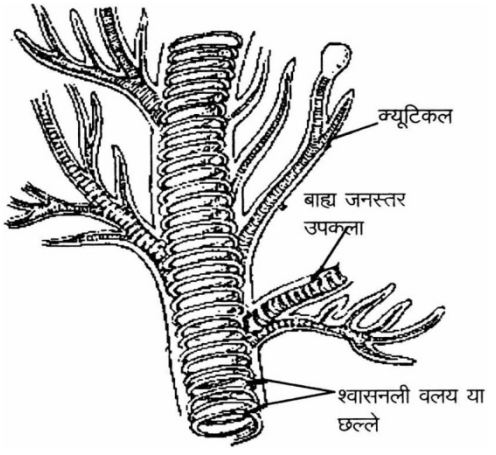

चित्र 2.19 तिलचट्टा श्वसन नलिका (Trachea)

2. विच्छेदन ट्रे में जन्तु के पिन लगाएँ ।
3. चमकीली श्वेत तथा अर्धपारदर्शी नलिकाओं को चिमटी की सहायता से अलग करें ।
4. इन्हें आसुत जल से भरे वॉच ग्लास में स्थानान्तरित करें ।
5. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
6. स्लाइड पर फैलाकर DPX से माउण्ट करें ।
7. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से संरचना का अध्ययन करें ।
8. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure) :

1. तिलचट्टे में श्वसन - क्रिया श्वसन -नलिकाओं अर्थात् ट्रेकिया द्वारा होती है । ये पूरी देह में पायी जाती है ।
2. ट्रेकिअल -नलिकाएँ श्वेत - रंग की पतली नलिकाएँ होती हैं तथा इनकी भित्ति एक - स्तरीय एक्टोडर्मल उपकला (ectodermal epithium) तथा एक पतली पर्त क्यूटिकल (cuticle) की बनी होती है ।
3. भित्ति की क्यूटिकल समान अंतरों पर मोटी होकर नलिका के चारों ओर छल्ले बनाती है ।

16. प्रॉन : हेस्टेट - प्लेट (Prawn Hastate Plate)

विधि (Procedure)

1. अभिरक्षित प्रॉन को शिरोवक्ष (cephalothorax) क्षेत्र से खोलें तथा कैरापेस (carapace) हटा दे ।

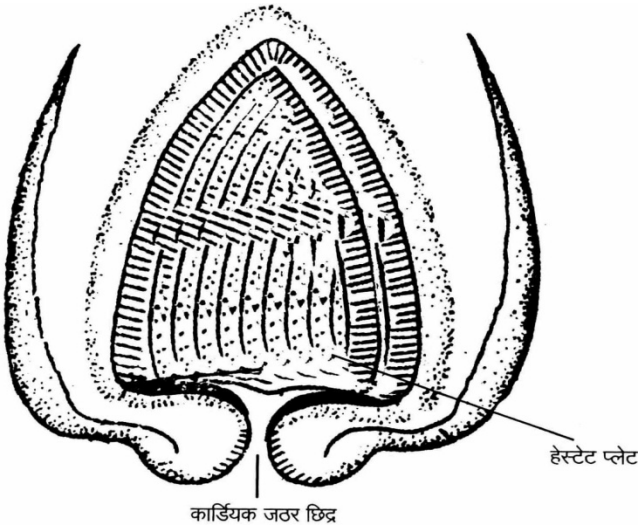

चित्र 2.20 : प्रॉन : हेस्टेट - प्लेट

2. वक्ष - गुहा से यकृताग्नाशय (hepatopancreas) ग्रन्थि को अलग कर निकाल दें ।
3. कार्डियक आमाशय (cardiac stomach) को अनावरित करें तथा इसे काट कर हेस्टेट - प्लेट को इसके फर्श पर ढुढ़े ।
4. हेस्टेट -प्लेट को निकाल कर एक आसुत जल से भरे वॉच ग्लास में स्थानान्तरित कर धोलें।
5. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
6. एक स्वच्छ स्लाइड पर फैलाकर DPX से माउन्ट करें ।
7. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से संरचना का अध्ययन करें ।
8. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure)

1. हेस्टेट - प्लेट प्रॉन के कार्डियक -जठर (cardiac stomach) की फर्श पर स्थित होती है ।
2. यह भाले - रूपी चपटी रचना मोटी क्यूटिक्ल की बनी होती है ।

3. हेस्टेट -प्लेट का तल काइटिन के बने कड़े शूकों (bristles) द्वारा ढका होता है । शूको की सहायता से अन्तर्ग्रहित को छोटे टुकड़ों में तोड़ा जाता है ।

17. प्रॉन : स्टेटोसिस्ट (Prawa : statocyst)

विधि (Procedure) :

1. प्रॉन के शरीर से एन्टीन्यूल उपांग को इसके आधार से एक भौंथरे सिरे वाली चिमटी की सहायता से अलग कर दें ।
2. प्रीकॉक्सा (pecoxa) खण्ड के अवनमन भाग पर स्टेटोसिस्ट की स्थिति मालूम करें । यह एक भूरे -काले धब्बे दिखाई देता है ।

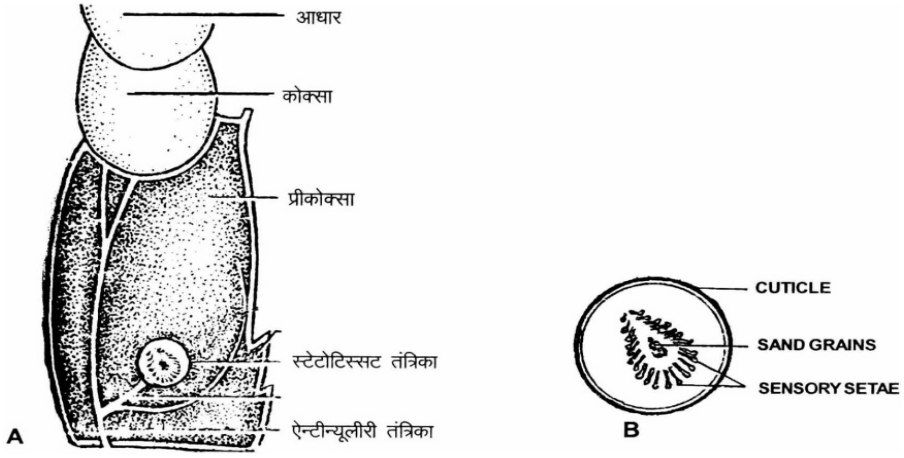

चित्र 2.21 : प्रॉन : (A) स्टेटोसिस्ट (एन्टीन्यूल के प्रीकॉक्सा भाग में); (B) स्टेटोसिस्ट का काट ।

3. एक नुकीले सिरे वाली चिमटी की सहायता से प्रीकॉक्सा की छत को काट दें ।
4. 4 स्टेटोसिस्ट को निकाल कर एक आसुत जल से भरे वॉच -ग्लास में स्थानान्तरित करें ।
5. एकाकी अभिरंजन विधि का अनुसरण करते हुए अभिरंजित करें ।
6. एक स्वच्छ स्लाइड पर DPX से माउण्ट करें ।
7. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से संरचना का अध्ययन करें ।
8. 8 एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure) :

1. प्रॉन की स्टेटोसिस्ट एक संवेदी अंग है जिसका कार्य जन्तु का सन्तुलन बनाए रखना होता है ।
2. प्रत्येक एन्टिन्यूल (antennule) उपांग के आधारीय प्रीकॉक्सा (basal precoxa) खण्ड में एक स्टेटोसिस्ट स्थित होती है ।
3. यह एक गोलाकार खोखली पुटिका -सदृश्य रचना होती है जिसका लगभग व्यास 2 - 3 मिमी होता है ।
4. स्टेटोसिस्ट की गुहिका के मध्य में रेत के सूक्ष्म कण स्थित होते हैं जिन्हें सम्मिलित रूप से स्टेटोलिथ (statoith) कहते हैं । स्टेटोलिथ शाखान्वित एवं संवेदी रोम -सदृश्य शूकों

(setae) की एक चक्रिका द्वारा घिरे होते हैं । शूक स्टेटोसिस्टिक तन्त्रिका (statocystic never) से सम्बन्धित होते हैं । यह तंत्रिका एन्टिन्यूलरी तंत्रिका (antennulary nerve) की शाखा होती है ।

18. पाइला : क्लोम -पट्टिका (Pila : Gill Lamella)

विधि (Procedure) :

1. एक परिरक्षित पाइला लेकर इसका कवच तोड़े तथा प्रावार (mantle) को सूक्ष्म -कोश (pulmonary sac) व कंकातिका (ctenidium) अर्थात् क्लोम (gill) सहित अलग करदें ।
2. क्लोम से कुछ क्लोम -पट्टिकाओं को उनके आधार से एक नुकीले सिरे वाली चिमटी से अलग करे ।
3. इस प्रकार अलग किए हुए क्लोम -पट्टिकाओं को एक आसुत जल से भरे वॉच -ग्लास में स्थानान्तरित कर धोलें ।
4. एकाकी अभिरंजन विधि से अभिरंजित करें ।
5. एक स्वच्छ स्लाइड पर फैलाकर DPX से माउण्ट करें ।
6. प्रकाश सुक्ष्मदर्शी की सहायता से संरचना का अध्ययन करें ।
7. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure) :

1. जलीय श्वसन हेतु पाइला में एक क्लोम टिनीडियम (ctenidium) उपस्थित होता है जो ब्रेन्कियल - कक्ष (branchial chamber) में दाहिनी ओर प्रावार (mantle) से लटका रहता है।

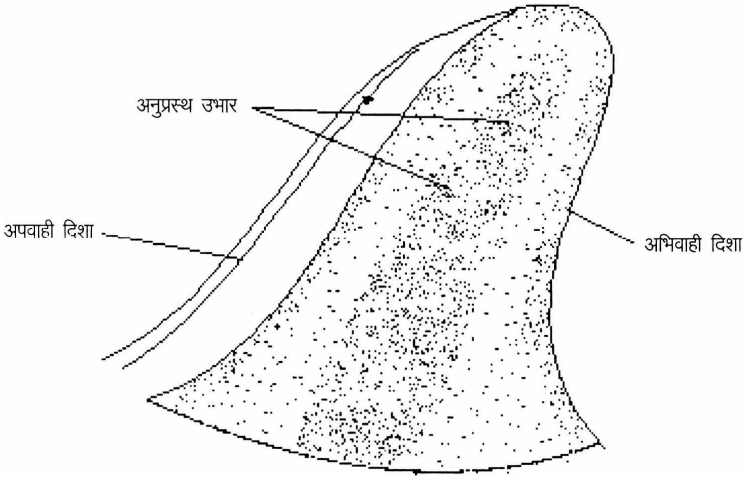

चित्र 2.22 : पाइला : क्लोम - पट्टिका

2. क्लोम अनेक त्रिकोणाकार समान्तर पट्टिकाओं की एकाकी कतार के रूप में होता है ।
3. पटलिकाओं के आधार प्रावार से संयोजित होते हैं तथा इनके स्वतंत्र सिरे ब्रेन्क्रियल -कक्ष में लटके रहते हैं ।

4. प्रत्येक पटलिका के तल पर अनुप्रस्थ उभार (ridges) अर्थात् प्लीट (transverse plaeats) उपस्थित होती हैं । इन उभारों में विस्तृत संवहनी केशिका जाल होता है तथा जब जल इन पर से बहता है तब गैसीय लेन -देन होता है ।

19. पाइला : रेड्यूला (Pila : Radula)

विधि (Procedure)

1. एक परिरक्षित पाइला लें । इसका कवच तोड़कर प्रावार को हटादें ।
2. शीर्ष के नीचे की ओर मुखीय-पिण्ड (buccal mass) ढूंढ कर निकालें ।
3. मुखीय-पिण्ड के चारों ओर के अध्यावरण (integument) को हटादें ।
4. मुखीय-पिण्ड के अग्र तथा पश्च क्षेत्रों पर कट लगाएँ ।
5. चिमटी की सहायता से मुखीय-पिण्ड की दीवारों को हटाकर रेड्यूला को अनावरित करें ।
6. रेड्यूला को बाहर निकाल दें जो कि एक लम्बी कठोर भूरे रंग की पट्टिनुमा संरचना होती है।
7. इसे एक परखनली में 5% KOH विलयन के साथ 2 - 3 मिनट तक उबालें ।
8. इस प्रकार उबाले गये रेड्यूला को परखनली से बाहर निकालकर नल के जल में अच्छी प्रकार धोयें ।
9. अब इसे सीधा करने के लिए 2 स्लाइडों के मध्य आधा घण्टे तक दबादें ।
10. इसके पश्चात् आसुत जल से भरे हुए वॉच -ग्लास में स्थानान्तरित करदें ।
11. इसे अभिरंजित करने के लिए एकाकी अभिरंजन विधि कार्य में लें ।
12. एक स्वच्छ स्लाइड पर DPX से माउण्ट करें ।
13. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी की सहायता से संरचना का अध्ययन करें ।
14. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure) :

1. यह रचना पाइला के मुखीय -पिण्ड (buccal mass) में एक रेड्यूला -कोष (radula sac) में स्थित होती है ।
2. रेड्यूला काइटिन की बनी मुड़ी हुई एक लम्बी रचना होती है जिस पर कड़े दंतों की अनेक अनुप्रस्थ कतारें लगी होती हैं ।
3. प्रत्येक दन्त -कतार में 7 दन्त होते हैं : एक मध्यस्थ, एक जोड़ी पार्श्वक तथा दो जोड़ी सीमावर्ती ।
4. पैने दन्त काइटिन के बने होते हैं जिनमें एक अन्य कड़ी प्रोटीन का समावेश होता है ।
5. दंत -युक्त रेड्यूला एक रेती (file) की तरह कार्य कर जन्तु के शाकाहारी भोजन की धज्जियाँ बनाता है ।

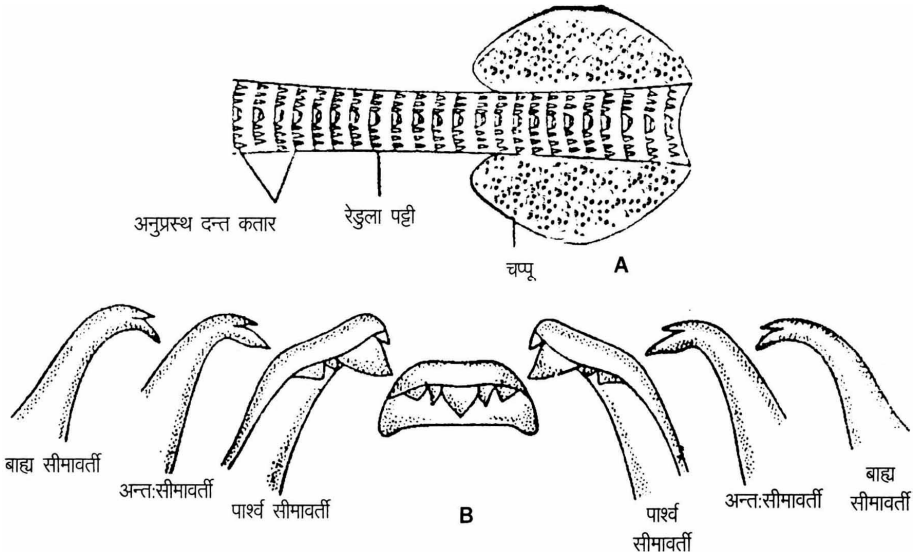

चित्र 2.23 : पाइला : रेस्कूला A. सम्पूर्ण संरचना; B. दन्त की एक कतार ।

20. पाइला : ऑस्फ़ेडियम का अनुप्रस्थ काट (Pila : T.S।Osphradium)

विधि (Procedure) :

1. एक परिरक्षित पाइला लेकर इसका कवच तोड़े तथा ऑस्फ्रेडियम सहित प्रावार बाहर निकाल लें ।

   ऑस्केडियम बाँये स्यूडोपोडियम अर्थात् कंधरा पिंडक (nuchal lobe) के निकट अन्तर्वाही विनाल (inhalant siphon) के ठीक नीचे स्थित होता है ।
2. प्रावार से ऑस्फ्रेडियम को काटकर अलग कर दें ।
3. इसे एक आलू या मूली के बने पिथ में क्षैतिज अवस्था में रखें तथा तेज ब्लेड या रेजर की सहायता से सेक्शन काटें ।
4. इस प्रकार कटे हुए पूर्ण तथा बारीक सेक्शनों को आसुत जल से भरे हुए वॉच-ग्लास में स्थानान्तरित कर दें ।
5. इन्हें अभिरंजित करने के लिए एकाकी अभिरंजन विधि का प्रयोग करें ।
6. एक स्वच्छ स्लाइड पर DPX से माउण्ट करें ।
7. प्रकाश सूक्ष्मदर्शीकी सहायता से संरचना का अध्ययन करें ।
8. एक स्वच्छ तथा नामांकित चित्र बनाएँ ।

संरचना (structure) :

1. पाइला का ऑस्केडियम एक रसायन-संवेदी (chemoreceptor) है जो बायें स्यूडेपीपोडियम (pseudepipodium) के निकट प्रावार से लटका रहता है ।

2. यह एक अण्डाकार रचना होती है जिसके मध्य-अनुलम्ब अक्ष के दोनों ओर 22 से 28 मांसल पत्ती-स्वरूप रचनाएँ लगी होती है ।

3 यह अंग जन्तु में जाने वाली जल की धारा तथा भोजन का रासायनिक परीक्षण करता है ।

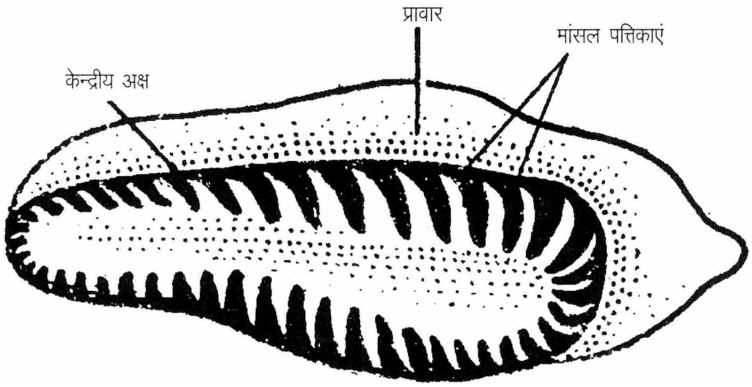

चित्र 2.24 : पाइला : ऑस्फ्रेडियम का अनुप्रस्थ काट

इकाई 3 : जैवरासायिनिकी (Biochemistry)

उद्देश्य : इस अध्याय व अभ्यास के माध्यम से हम प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स व वसा का परीक्षण करेंगे ।

प्राणी ऊतक में प्रोटीन का परीक्षण व पहचान

प्रोटीन शरीर के महत्वपूर्ण घटक है । ये उच्च अणु भार वाले नाइट्रोजन युक्त कार्बनिक योगिक है। प्रोटीन अमीनो अम्लों से मिलकर बनते हैं । अमीनो अम्ल पेप्टाइड बंध (Peptide Bond) द्वारा आपस में जुड़े रहते हैं ।

प्रोटीन की जाँच (Detection of protein) प्रोटीन की जाँच हेतु सामान्यत ' दुग्ध, अंडा, पनीर तथा माँस उपयोग में लाए जाते हैं । प्रयोगशाला में प्रोटीन के परीक्षण हेतु बाइयूरेट, जेनथोंप्रोटिक, एल्डीहाइड, सल्फर, मिलान्स साकागूची, निनहाइडड्रिन आदि परीक्षण किए जाते हैं ।

1. बाइयूरेट परीक्षण (Biuret Test)

प्रायोगिक सामग्री - परखनली, परखनली स्टेण्ड, स्प्रिट लैम्प,

अभिकर्मक -

(i) 10% सोयम हाइड्राक्साइड	(10 ग्राम NaOH को मिली आसुत जल में घोले)
(ii) 0.5% कॉपर सल्फेट का विलयन	(0.5 ग्राम कॉपर सल्फेट को 100 मिली आसुत जल में घोले)

सिद्धांत : यूरिया के दो अणुओं को गर्म किए जाने पर अमोनिया का एक अणु बाहर निकलता है तथा बाइयूरेट बनता है । यह बाइयूरेट जब सोडियम हाइडॉक्साइड व तनु कॉपर सल्फेट से क्रिया करता है तब बैंगनी नीले रंग का जटिल (complex) बनता है । क्षारीय कोंपर सल्फेट की उपस्थिति में भी इसी प्रकार का जटिल बनता है । अत -CONH- समूह जो नाइट्रोजन से जुड़ता है, इस परीक्षण के लिए उत्तरदायी है । इसी कारण इसे बाइयूरेट कहा जाता है । क्षार की उपस्थिति में पॉलीपेप्टाइड समूह इनॉल रूप में बदल जाता है जो Cu^{+2} से क्रिया करके एक रंगीन जटिल (coloured complex) बनाता है ।

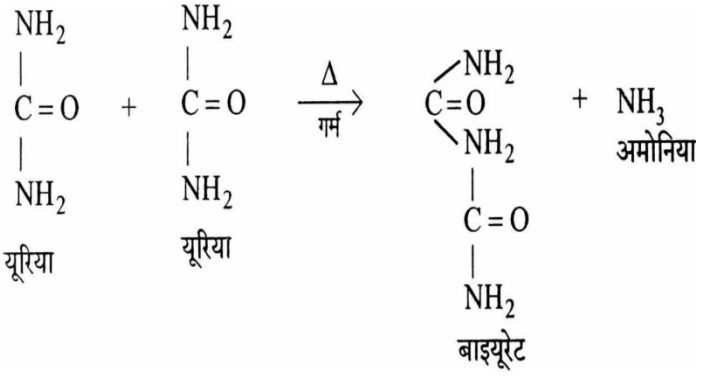

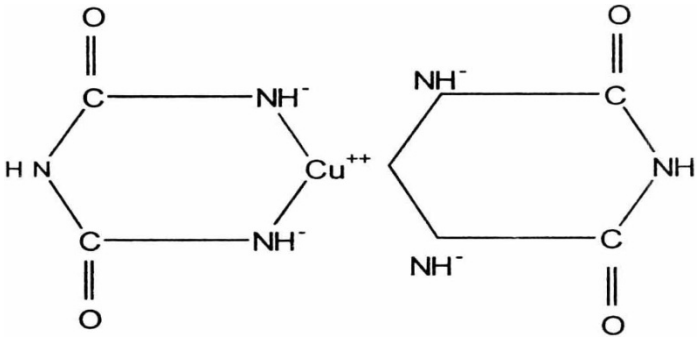

बाइयूरेट कॉपर - सहसंयोजक जटिल (बैंगनी रंग)

विधि (Procedure)

1. 2 - 3 मिलि. अज्ञात विलयन लेकर उतनी ही मात्रा में 10 % NaOH विलयन डाले ।
2. इसमें 2 - 3 बुदे कोंपर सल्फेट विलयन को मिलाएँ वे विलयन को अच्छी तरह मिलाएं ।

परिणाम (Result)

गुलाबी या बैंगनी रंग पेप्टाइड बंध अर्थात् प्रोटीन की उपस्थिति दर्शाता है ।

2. जेन्धोप्रोटिक परीक्षण (Xanthoproteic Test)

प्रायोगिक सामग्री. - सान्द्र HNO_3 सोडियम हाइड्रॉक्साइड 40% विलयन आसुत जल में

सिद्धांत - ऐरोमेटिक अमीनो अम्ल जैसे फिनाइल एलेनाइन, टायरोसीन व ट्रिपरोफेन सान्द्र नाइट्रिक अस्त से क्रिया करके पीले रंग का डाईनाइट्रो व्यूत्पन्न (Di Nitro Derivatives) बनाते है जो क्षारीय माध्यम में नारंगी रंग की क्विनोन संरचना वाले घटक बनाता है ।

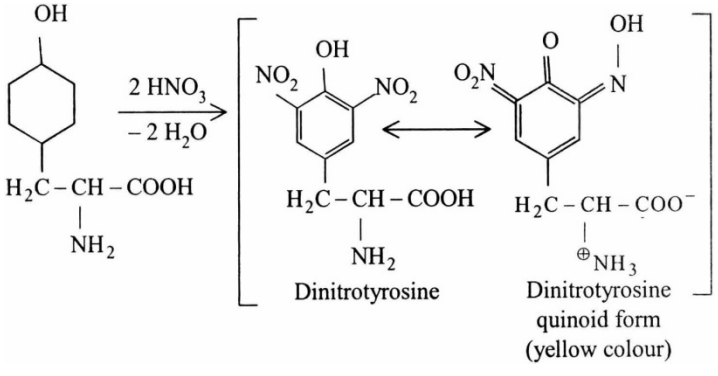

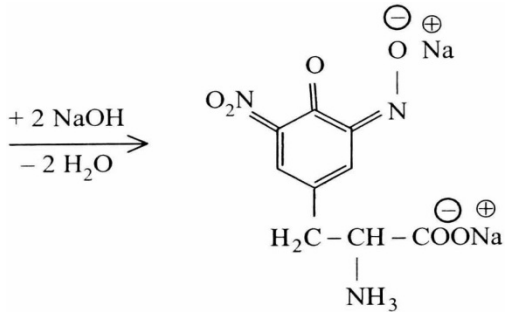

Sodium Salt of Dinitro Tyrosine Quinoid Form (Orange Colour)

विधि (Procedure)

1. 2-3 बूँदे अज्ञात विलयन लेकर 5 से 8 बूँदे सान्द्र HNO_3 की डाले ।
2. विलयन को उबाले ।
3. पीला अवक्षेप प्राप्त होता है ।
4. ठंडा करने के बाद बूँद -बूँद सान्द्र सोडियम हाइड्रॉक्साइड (40% $NaOH$) विलयन मिलाएँ।

परिणाम (Result)

विलयन नारंगी रंग का हो जाता है जो प्रोटीन की उपस्थिति का परिचायक है ।

3. एल्डीहाइड परीक्षण (Aldehyde Test)

प्रायोगिक सामग्री - 40% फार्मेलिन, मरक्यूरिक सल्फेट अभिकर्मक (Reagent) सान् H_2SO_4

विधि :

1. परखनली में 2-3 मिली. अज्ञात विलयन लेकर उसमे 1 बूँद 40% फार्मेलिन का 2% घोल डालें ।
2. इसमें 0.5 मिली. मरक्यूरिक सल्फेट अभिकर्मक डालें व अच्छी तरह हिलाएं ।
3. इसमें 2.0 मिली. सान्द्र वाला H_2SO_4 डालें व हिलाएं ।
4. बैंगनी रंग प्रोटीन की उपस्थिति दर्शाता है ।

4. मिलन - नास परीक्षण (Million Nass Test)

प्रायोगिक सामग्री - मिलॉन अभिकर्मक 15% तें H_2SO_4 से मरक्यूरिक सल्फेट का 10% या 15% विलयन बनाएँ (15% H_2SO_4 बनाने के लिए 30 ml H_2SO_4 को 200 ml. में बनायें) । 15 gm मरक्यूरिक सल्फेट कौ 100 ml. 15% H_2SO_4 में घोले, 1% सोडियम नाइट्राइट) $NaNO_2$ विलयन

सिद्धांत - यह परी क्षण फिनांलिक चक्र (3, 5 अप्रतिस्थायी) की उपस्थिति में घनात्मक होता है। यह परीक्षण अकार्बनिक आयनों (विशेष रूप से $NaCl$) की उपस्थिति में किया जा सकता है।

1. 1 ml. अज्ञात विलयन लेकर उसमे कुछ बूँदे मिलान अभिकर्मक की मिलाएँ ।
2. विलयन 10 मिनट तक 100^0Cए पर गर्म करे ।
3. इसे ठंडा कर कुछ बूँदे 1% सोडियम नाइट्राइट ($NaNO_2$) की डाले लाल या गहरा लाल रग अमीनो अम्ल टायरोसीन की उपस्थिति दर्शाता है ।

5. निनहाइड्रिन परीक्षण (Ninhydrin Test)

प्रायोगिक सामग्री - निनहाइड्रिन विलयन (100ml आसुत जल में 100mg निनहाइड्रिन मिलाएँ)

सिद्धांत - निनहाइड्रिन (1, 2, 3 इनएडेनेट्रिआन हाइड्रेट) अमीन से अभिक्रिया करता है तथा रंगीन अज्योदपाद का निर्माण होता है ।

विधि :

1. परखनली में 1ml अज्ञात विलयन ले तथा इसमें कुछ बूँदे 0.1 या 0.2% निनहाइड्रिन विलयन मिलाएँ ।
2. विलयन 1-2 मिनट तक उबाले

परिणाम

ठंडा होने पर बैंगनी नाला रंग बनना या अमीनो अम्ल या प्रोटीन की उपस्थिति का सूचक है ।

कार्बोहाइड्रेट का परीक्षण व पहचान

ये कार्बन हाइड्रोजन व ऑक्सीजन के योगिक है । इनमे हाइड्रोजन व ऑक्सीजन का अनुपात जल के समान 2:1 होता है । जीवों के लिए शर्कराएँ ऊर्जा का स्रोत है । शर्कराएँ अनेक प्रकार की होती है । इसकी तीन श्रेणियाँ क्रमश: मोनो, डाई और पॉलीसेकेराइड है । मोनोसेकेराइड साधारण शर्करा (Simple Sugars) कहलाते हैं इनका जल अपघटन नहीं किया जा सकता है जबकि पॉलीसेकेराइड का जल अपघटन हो सकता है । इनके परीक्षण हेतु चीनी, ग्लूकोज, स्टार्च, मिल्क पाउडर, शहद, आलू चावल आदि का प्रयोग कर सकते हैं । शर्कराओं के परीक्षण के लिए फेहलिंग टेस्ट, बेनडिक्ट टेस्ट, पिकरिक एसिड टेस्ट, मॉलिश टेस्ट, सेलिविनोव टेस्ट आदि किए जाते हैं ।

1. फेहलिंग टेस्ट (Fehling's Test)

फेहलिंग ने एल्डीहाइड के परीक्षण हेतु एक परीक्षण प्रस्तावित किया जिसे हम फेहलिंग परीक्षण नाम से जानते हैं ।

प्रायोगिक सामग्री - फेहलिंग A, फेहलिंग B

सिद्धांत - क्यूपीरक आयनों का क्यूप्रस आयनों में अपचयन होने से एक रंगीन अवक्षेप का निर्माण होता है ।

विधि:

1. अज्ञात विलयन लेकर इसमें फेहलिग A व B की बराबर मात्रा डाले ।
2. विलयन 2 - 3 मिनट तक उबाले ।

परिणाम - नारंगी लाल या भूरा अवक्षेप प्राप्त होता है किंतु विलयन का रंग परिवर्तित नहीं होता है । लाल अवक्षेप अपचायक् शर्करा (Cu_2O) की उपस्थिति दर्शाता है ।

2. बेनेडिक्ट परीक्षण (Benedict Test)

प्रायोगिक सामग्री - बेनेडिक्ट विलयन, 173 ग्राम सोडियम साइट्रेट तथा 100 ग्राम सोडियम कार्बोनेट को 800 मिली गर्म आसुत जल में घोले । एक अन्य बीकर में 17.3 ग्राम कॉपर सल्फेट ($CuSO4.5H_2O$) 100 मिली आसुत जल में घोले । तैयार हुए दोनों विलयन को हिलाते हुए मिलाकर 1 लीटर बेनेडिक्ट विलयन -बनाएँ ।

सिद्धांत - बेनेडिक्ट अभिकर्मक में स्थित क्यूपीरक आयनों का क्यूप्रस आयनों में अपचयन होने से एक रंगीन अवक्षेप का निर्माण होता है ।

विधि :

1. परखनली में अज्ञात विलयन लेकर उसमें 4 - 5 मिली बेनेडिक्ट विलयन मिलाएँ ।

2. इसे गर्म करे । रंग में कोई परिवर्तन नहीं होता है ।

3. इसमें 7-8 बूँद शर्करा विलयन को डाले व 2 मिनट तक उबाले ।

परिणाम - अपचायक शर्करा की उपस्थिति हरे / पीले / नारंगी या लाल रंग के अवक्षेप से सिद्ध होती हे ।

3. पिकरिक एसिड टेस्ट (Picric Acid Test)

प्रायोगिक सामग्री - संतृप्त पिकीरक एसिड, 4% सोडियम हाइड्रॉक्साइड

सिद्धांत - अपचायक शर्करा क्षारीय माध्यम में पिकरिक अम्ल का पिकरेमिक (picramic Acid) में अपचयन करती है ।

1. परखनली में अज्ञात विलयन लेकर कुछ बूँदे पिकीरक एसिड की मिलाएँ ।

2. इसमें कुछ बूँदे 4% $NaOH$ की मिलाएँ

परिणाम - लाल रंग पिकीरक एसिड के पिकरेमिक एसिड में अपघटन के कारण प्राप्त होता है ।

$/C6H_2OH(NO_2)_3 + 3H_2 \rightarrow C6H_2OH.NH_2(NO_2)_2 + 2H_2O$

4. मॉलिश टेस्ट (Molisch's Test)

प्रायोगिक सामग्री - मॉलिश अभिकर्मक (95% एथिल एत्कोहॉल में 1%).

नैफथॉल का विलयन बनाए, सान्द्र H_2SO4

सिद्धांत - अम्ल कार्बोहाइड्रेट के साथ किया कर फरफ्यूयरल (Furfural) या फरफ्यूयरल व्युत्पन्न का निर्माण करते हैं जो मॉलिश अभिकर्मक के नेफथॉल से अभिक्रिया करता है व लाल बैंगनी रंग का निर्माण होता है ।

विधि:

1. अज्ञात विलयन लेकर उसमे मालिश अभिकर्मक की 2 - 3 बूँद डाले

2. इसमें 2 - 3 मिली. सान्द्र सलफ्यूरिक अम्ल परखनली की दीवार के सहारे डाले

3. अम्ल भारी होने के कारण विलयन की तली में बैठ जाता है

परिणाम - दोनों द्रवों के मिलने के स्थान पर लाल बैंगनी रंग का छल्ला (फरफ्यूयरल) बन जाता है जो कार्बोहाइड्रेटस की उपस्थिति सुनिश्चित करता है ।

वसा का परीक्षण (Test of Lipids)

वसा जल में अविलेय परन्तु अध्रुवीय विलायकों (Nonpolar Solvents) में विलेय होते है । वसा एक विषमांगी (Heterog-enous) समूह है । इसकी जाँच हेतु तेल व घी काम में लिए जाते हैं । प्रयोगशाला में परीक्षण हेतु सूडान डाई टेस्ट, विलयेता परीक्षण, वसीय धब्बा परीक्षण, पायसीकरण परीक्षण, साबुनीकरण परीक्षण व हैलोजनीकरण आदि परीक्षण किए जाते हैं ।

1. सूडान डाई टेस्ट (Sudan Dye Test)

सूडान डाई वसा में विलेय एक रंजक है अत: वसा में यह मिलकर समांगी विलयन बनाता है ।

प्रायोगिक सामग्री - सूडान IV/III

विधि :

1. परखनली में अज्ञात विलयन लेकर उसमे चुटकी भर सूडान IV मिलाएँ
2. 5-10 मिनट पश्चात् रंजक तेल में पूर्ण रूपेण घुल जाता है ।

परिणाम - समान रूप से लाल रंग का विलयन वसा की उपस्थिति का परिचायक है ।

2. विलेयता परीक्षण (Soluability Test)

प्रायोगिक सामग्री - एसीटोन व ईथर (अध्रुवीय या कार्बनिक विलायक) जल (ध्रुवीय विलायक), ड्रॉपर, स्पेचुला

विधि :

1. तीन परखनली, लेकर उनमें क्रमश: (कीटोन, ईथर व जल डालें
2. 2 प्रत्येक में 2 बूँद अज्ञात विलयन की डाले व हिलाएँ, कुछ देर बाद पश्चात् प्रथम व द्वितीय परखनली में स्वच्छ विलयन नजर आता है जबकि तीसरी में तेल की छोटी-छोटी बूँद सतह पर दिखाई देती है । अत: स्पष्ट है कि दिया गया वसीय पदार्थ इसमें अघुलनशील रहा है ।

3. वसीय धब्बा परीक्षण (Oli Spot Test)

प्रायोगिक सामग्री - तेल, फिल्टर पेपर

विधि :

1. अज्ञात पदार्थ की कुछ बूँदे एक फिल्टर पेपर या साधारण कागज पर लगाएँ ।
2. यदि पदार्थ ठोस है तो हल्के से गर्म करें या धूप में रखे।

परिणाम - चमकदार, पारभासी धब्बा वसा की उपस्थिति दर्शाता है वसीय पदार्थ चिकने होने के कारण ऐसा परीक्षण देते हैं ।

4. पायसीकरण परीक्षण (Emulsification Test)

प्रायोगिक सामग्री - ओलिक अस्त, तनु कास्टिक सोडा

विधि :

1. परखनली में अज्ञात पदार्थ लेकर उसमें कुछ बूँदे ओलिक अम्ल की मिलाएँ ।
2. विलयन को हिलाएँ ।
3. विलयन में बराबर मात्रा में तनु कास्टिक सोडा विलयन मिलाएँ ।

परिणाम - तेल (अज्ञात पदार्थ) कास्टिक सोडा में मिल जाता है अर्थात् वसा का छोटी छोटी बूँदों में टूटना पायसीकरण कहलाता है ।

दिए गए प्रतिदर्श में विभिन्न प्रकार के मोनो डाई तथा पॉलीसेकेराइड की पहचान करना (Identification of Different Kinds of Mono , -Di, & Polysacharides in the given Samples)

कार्बोहाइड्रेट को 3 वर्गो में बाँटा गया है (i) मोनोसैकेराइड (ii) डाईसैकेराइड (iii) पॉलीसैकेराइड

ये सभी जीवित कोशिकाओं में मिलते है । मोनो व डाईसेकेराइड पानी में सरलता से घुल जाते हैं किंतु पॉलीसैकेराइड जल में नहीं घुलते हैं । मोनो व डाईसेकेराइड स्वाद में मीठे किंतु पॉलीसैकेराइड फीके होते हैं ।

मोनोसैकेराइड (Monosaccharides

I. फ्रक्टोज का परी क्षण (Test of Fructose)

(A) बेरेडेरेक्स परीक्षण (Beredereck 's Test)

विधि :

1. एक परखनली में 2-3 बूँद जलीय परीक्षण विलयन ले
2. इसमें 5ml 4% अमोनियम मालिब्डेट (Ammanum Molybdate) विलयन व 3-4 बूँदे ग्लेशियल एसिटिक अम्ल की मिलाएँ
3. इसे उबलते हुए जल में गर्म करे

परिणाम - नीले रंग के विलयन का निर्माण फ्रक्टोज / ग्लूकोज की उपस्थिति दर्शाता है

(B) सेलिवानॉफ परीक्षण (Seliwanoff 's Test)

गहरा गुलाबी रंग फ़क्टोज की उपस्थिति का सूचक है । ग्लूकोज के साथ परी क्षण करने पर बहुत देर पश्चात् विलयन का रंग हल्का गुलाबी होता है ।

II. ग्लूकोज का परीक्षण (Test for Glucose)

विधि :

1. एक परखनली में 2-3 मिली जलीय परीक्षण विलयन ले ।
2. इसमें चार 2 मिली लेडएसीटेट मिलाएँ
3. इसे धीरे-धीरे अवक्षेप बनने तक डालें ।
4. सभी अवयवों को गर्म करे ।

परिणाम - हल्का गुलाबी रंग का निर्माण ग्लूकोज की उपस्थिति का सूचक है ।

अपचयित डाई सैकेराइड

I. लेक्टोन्ज एवं माल्टोस का ऑसाजोन परीक्षण

(Osazone Test for Lactose & Maltose)

ऑसाजोन अभिकर्मक - सोडियम एसीटेट 5.0 gm, फिनाइल हाइड्राजीन 5.० ग्राम को 100 मिली. आसुत जल में घोले व छाने

विधि :

1. दो परखनलियों में 2-2 मिली डाइ सेकेराइड युक्त प्रतिदर्श विलयन ले
2. प्रत्येक में 2 मिली ऑसाजोन अभिकर्मक मिलाएँ ।
3. दोनों को उबलते हुए जल कुंडक (Water Bath) में 45 मिनट तक रखें
4. परखनलियो को ठंडा करे
5. एक काँच की छड़ की सहायता से परखनली के विलयन की कुछ बूँदे ग्लासस्लाइड पर रखे व कवर स्लिप लगाकर सूक्ष्मदर्शी से देखें ।

परिणाम - सूर्यमुखी के आकार के पीले क्रिस्टल माल्टोज की उपस्थिति दर्शाते हैं । पफ के आकार के क्रिस्टल लेक्टोज की उपस्थिति दर्शाता है ।

पॉलीसेकेराइड (Polysaccharides)

विधि :

प्रथम पद - एक परखनली में प्रतिदर्श लेकर मालिश परीक्षण करें

परिणाम - एक लाल बैंगनी चक्र दोनों विलयनों के मिलने के स्थान पर बनना कार्बोहाइड्रेट की उपस्थिति दर्शाता है ।नकारात्मक अभिक्रिया कार्बोहाइड्रेट की अनुपस्थिति दर्शाती है ।

द्वितीय पद - यदि कार्बोहाइड्रेट उपस्थित है तब एक परखनली में 3 मिली अज्ञात कार्बोहाइड्रेट विलयन ले। इसमें 1-2 बूँदे आयोडीन विलयन की डाले व अच्छी तरह हिलाएँ

परिणाम - नीले या बैंगनी रग का बनना पॉलीसेकेराइड की उपस्थिति दर्शाता है ।

नीला रंग स्टार्च तथा बैंगनी रग डेक्सट्रीन (Dextrin) की उपस्थिति का द्योतक है ।

तृतीय पद - प्रतिदर्श लेकर बेनेडिक्ट परीक्षण करे

विलयन में हरा / पीला, नारंगी या लाल अवक्षेप दिखाई देना अपचयित कार्बोहाइड्रेट (Reducing Carbohydrate) की उपस्थिति का सूचक है ।

अज्ञात कार्बोहाइड्रेट की पहचान का संक्षिप्त चार्ट

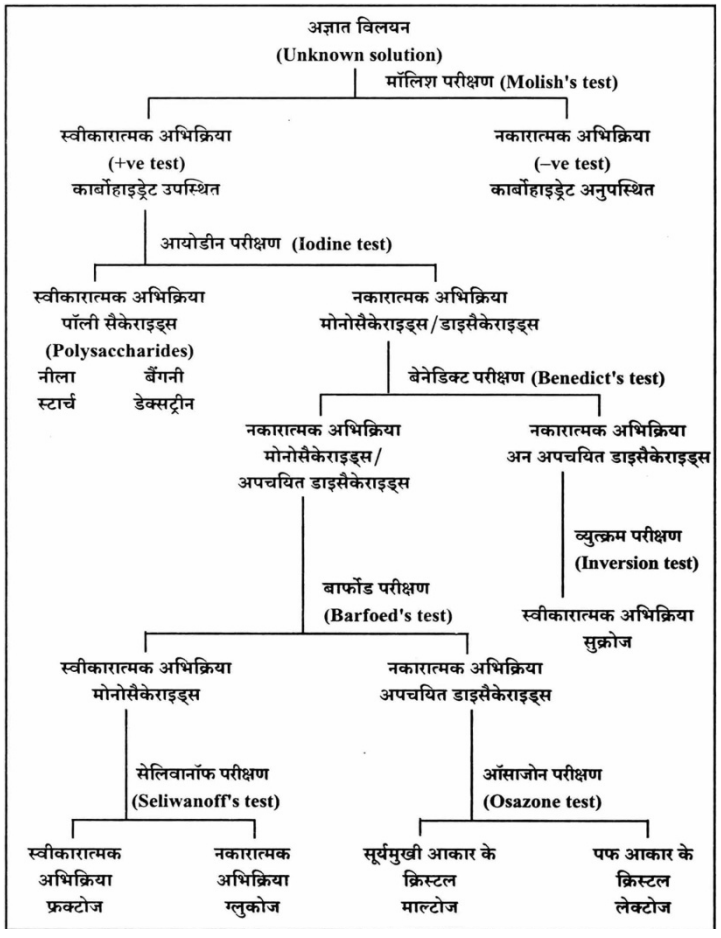

पेपर क्रोमेटोग्राफी (गोलाकार) का प्रदर्शन

(Demonostration of paper Chromatography (Circular)

उद्देश्य (Object) - पेपर क्रोमेटोग्राफी द्वारा सामान्य जैविक वर्गो (Biological) का परीक्षण करना ।

प्रायोगिक सामग्री - वॉटमेन फिल्टर पेपर, अमीनो अम्ल (एसिड फुकसिन, आरेन्ज जी, एनेलीन ब्ल्यू), n - ब्यूटनॉल, धागा, पैट्रीडिश, कैंची, कैपिलरी ट्यूब, आदि ।

सिद्धांत - पेपर क्रोमोटोग्राफी द्वारा प्रोटीन, हॉर्मोन, अमीनो अम्ल जैसे रासायनिक पदार्थो का पृथककरण कर उनका विश्लेषण किया जाता है । जिस जैविक -सामग्री का परीक्षण करना है उसका तरल अवस्था में होना आवश्यक है । एक धागा लेकर उसमें गाँठ लगाकर उसे वोंटमैन पेपर के बीचों बीच डाला जाता है । इसके ऊपर तरल की एक बूँद डाली जाती है । केशिका क्रिया द्वारा घोलक लम्बाई में घीरे-धीरे बढ़ने लगता है । अपने परिमाण के अनुसार जैविक सामग्री विभिन्न लम्बाई तक पहुँचती है । जब घोलक फिल्टर पेपर के अंत तक पहुँच जाता है तब उस स्थान पर निशान लगा दिया जाता है । इस फिल्टर पेपर को सुखाकर प्रत्येक पदार्थ के अणुओं की दूरी मापकर इनका Rf मान निकाला जाता है ।

$$Rf = \frac{\text{बिन्दु से उस स्थान तक की दूरी जहाँ तक पदार्थ पहुँचताहै}}{\text{बिन्दु से उस स्थान तक की दूरी जहाँ तक घोलक पहुँचताहै}}$$

Rf मान द्वारा विभिन सामग्रियों को पृथक कर उन्हें पहचाना जाता है । इस प्रक्रिया में दो प्रावस्था होती है ।

1. स्थावर प्रावस्था (Stationary phase) - फिल्टर पेपर की
2. गतिशील प्रावस्था (Mobile phase) - कार्बनिक घोलक की अणुओं की गति उनकी घुलनशीलता पर निर्भर करती है । सबसे अधिक घुलनशील अणु सबसे अधिक दूरी व सबसे कम घुलनशील अपेक्षाकृत कम दूरी तय करते हैं ।

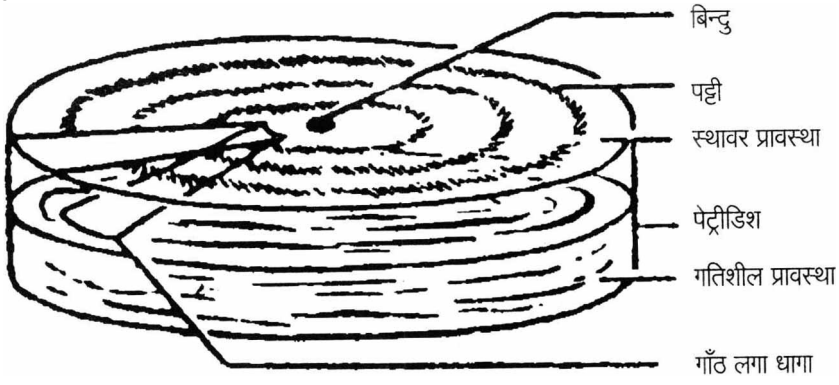

चित्र 3.1 : क्रोमेटोग्राफी उपकरण

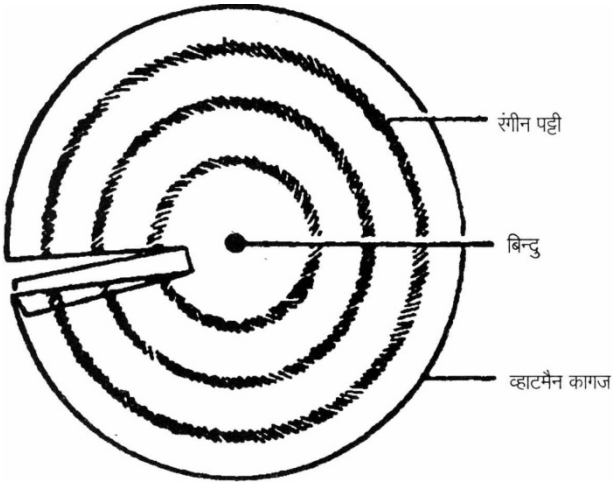

चित्र 3.2 : बेण्ड्स (पट्टियों) सहित गोलाकार क्रोमेटोग्राफी पेपर

विधि :

1. एक पैट्रीडिश को इस प्रकार रखें कि छोटा पात्र धरातल पर रहे व बड़ा इसे ढ़के ।
2. एक फिल्टर पेपर (पैट्रीडिश के व्यास से थोड़ा बड़ा) लेकर इसकी लगभाग 1ml पतली पट्टी (Strip) के नीचे से इस प्रकार काटें कि यह केन्द्र से कुछ दूर तक मुक्त रहे, किंतु अलग न हो (इसके स्थान पर धागे का प्रयोग भी किया जा सकता है)
3. अज्ञात विलयन या अमीनो अम्ल के मिश्रण को एक कैपिलरी में लेकर फिल्टर पेपर के मध्य में डालें ।
4. पैटीपात्र में विलायक (n-ब्यूटेनॉल) भर दे तथा इस प्रकार रखे कि कटी हुई पट्टी अथवा धागा इसमें डूबा रहे ।
5. इसे ढक्कन से ढक कर 1-2 घंटे के लिए छोड़ दे ।
6. कुछ समय पश्चात् विलयन बढ़ता दिखाई देता है, जब यह बढ़ना रूक जाए तब इस पेपर को निकालकर सुखा ले ।
7. इस पर दिखाई देने वाले वर्तुल घेसे पर निशान लगाकर इसकी दूरी नापें ।
8. दिए गए सूत्र द्वारा प्रत्येक वर्ण का Rf मान ज्ञात करे ।

परिणाम - दिए गए जैविक सामग्री, का परीक्षण लिखे ।

सावधानियाँ

1. जहाँ सेम्पल (अज्ञात विलयन) लगा है वह भाग विलयन में नहीं डूबना चाहिए ।
2. पैट्रीडिश ढक कर रखे ताकि विलायक का संतृप्त वातावरण बने ।
3. विलायक (अग्र) को चिन्हित कर यह गणना हेतु उपयोगी है ।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रोटीन परीक्षण सम्बन्धी

1. बाईयूरेट टैस्ट को बाईयूरेरट क्यों कहा जाता है?
2. बाईयूरेट टैस्ट के धनात्मक परीक्षण में कौनसा रंग प्राप्त होता है?

3. जैन्थोप्रोटिक टेस्ट में बनने वाले नारंगी रंग के विलयन का क्या नाम है?
4. मिलन नास परीक्षण से प्राप्त गहरा लाल रंग किस अमीनो अम्ल की उपस्थिति दर्शाता है ।
5. निनहाइड्रिन अमीनो अम्लों का परीक्षण है अथवा प्रोटीनो को समझाइये ।

कार्बोहाइड्रेट परीक्षण सम्बन्धी

1. कार्बोहाइड्रेट के परीक्षण हेतु प्रयोगशाला में किन पदार्थों को उपयोग में लाया जाता है?
2. क्या वेनेडिक्ट परीक्षण स्टार्च के साथ धनात्मक आता है?
3. पिकीरक एसिड टैस्ट में पिकीरक एसिड अपघटन के पश्चात् क्या बनता है?
4. मॉलिश परीक्षण में बनने वाला बैंगनी छल्ला किसका होता है?

वसा परीक्षण सम्बन्धी

1. वसाओं का परीक्षण किस प्रकार किया जाता है?
2. वसा की जाँच हेतु प्रयोगशाला में किन पदार्थों का उपयोग किया जाता है?
3. सूडान रंजक वसा में विलेय है अथवा अविलेय?
4. पायसीकरण क्या है?

मोनो-डाई तथा पॉलीसेकेराइड परीक्षण सम्बन्धी

1. मोनोसेकेराइड की पहचान के लिए कौन -कौन से परीक्षण किए जाते हैं?
2. बेरेडेरेक्स परीक्षण क्या है?
3. ऑसाजोन परीक्षण किस संदर्भ में किया जाता है?
4. शर्कराएँ किन्हें कहा जाता है?

क्रोमेटोग्राफी (गोलाकार) सम्बन्धी

1. क्रोमेटोग्राफी द्वारा किन जैविक वर्णों का परीक्षण किया जाता है?
2. Rf मान क्या है?
3. क्रोमेटोग्राफी में कौन-कौनसी प्रावस्थाएँ होती है?
4. पैट्रीडिश को ढकना क्यों आवश्यक है?

इकाई 4 : प्राणि - कार्यिकी (Animal Physiology)

1. रक्त प्रतिदर्श में लाल (RBC) एवं श्वेत (WBC) रक्त कणिकाओं की गणना (Counting of Red and White Blood Corpuscles in a Blood Sample)

उद्देश्य (Objectives) : हीमोसाइटोमीटर (haemocytometer) नामक उपकरण द्वारा किसी रक्त - प्रतिदर्श में लाल रक्त - कणिकाओं तथा श्वेत रक्त - कणिकाओं की कुल संख्या की गणना की जाएगी ।

सिद्धान्त (Principle) : रक्त तथा उसमें उपस्थित कणिकाओं के कार्यों एवं महत्व से आप पूर्व - परिचित हैं । रक्त कणिकाओं की संख्या में किसी भी प्रकार की अप्राकृतिक वृद्धि अथवा कमी रोग का द्योतक होती है ।

मलेरिया तथा अनेक प्रकार की रक्तक्षीणता (anaemia RBC की कमी कर देती है । इसी तरह कई प्रकार की एलर्जी (allergies) आदि WBC की कमी उत्पन्न कर देती हैं । एक सामान्य वयस्क मानव नर में RBC की संख्या 5. 5 दशलक्ष प्रति घन मिमी (5.5 million per cubic mm) तथा नारी में 4.8 दशलक्ष प्रति घन मिमी (4.8million per cubic mm) होती है । एक वयस्क मानव में WBC की संख्या 6, 000 से 10, 000 प्रति घन मिमी होती है ।

सामग्री (Material) :

1. काँचभाण्ड तथा उपकरण : हीमोसाइटोमीटर उपकरण, संयुक्त सूक्ष्मदर्शी ।
2. रसायन : हाइड्रोजन -परऑक्साइड, ईथर, ऐत्कोहॉल, आसुत जल, हेयम घोल (Hayem's solution), WBC तनुकारी तरल (WBC diluting fluid) ।
3. परीक्षण -सामग्री : स्तनी का रक्त ।

(अ) हेयम घोल : 200 मिली आसुत -जल में एक के बाद एक मर्क्यूरिक बाइक्राइड 0.5 ग्राम, सोडियम क्लोराइड 1.0 ग्राम, सोडियम सल्फेट 6.0 ग्राम घोलिए । घोल को फिल्टर कर प्रयोग में लीजिए ।

(ब) WBC तनुकारी तरल : लगभग 75 मिली ग्लेसियल एसिटिक अम्ल (glacial acetic acid) घोलिए । इस घोल में 10.0 मिग्रा जेन्शन वायलट (glacial acetic acid) घोलिए । इस घोल में कुछ और आसुत जल डालकर कुछ मात्रा 100 मिली कर लीजिए तथा अब प्रयोग में लाइए ।

कार्य - विधि (procedure) :

हीमोसाइटोमीटर उपकरण : इस उपकरण में 2 तनुकारी नलिकाएँ (diluting pipettes) तथा एक हीमोसाइटोमीटर होता है । जिस नलिका में लाल रंग की मणिका तथा 101 अंकित होता है, वह RBC नलिका है (चित्र 4.1A) । दूसरी नलिका जिसमें श्वेत मणिका तथा 11 अंकित

होता है वह WBC नलिका है (चित्र 4. 1B) । हीमोसाइटोमीटर एक मोटी स्लाइड के रूप में होता है (चित्र 4. 2A, B) । इसके मध्य में दो प्रकार के गणन - कक्ष (counting chambers) बने होते हैं । गणन -कक्ष में रेखांकित वर्ग बने होते हैं । इन वर्गों की रेखांकन व्यवस्था को फ्लॉर -रेखांकन (Neuvauer ruling) कहते हैं । हीमोसाइटोमीटर को सूक्ष्मदर्शी के नीचे रख किसी एक गणन -कक्ष को फोकस करिए तथा इसमें उपस्थित वर्गों का प्रेक्षण कीजिए।

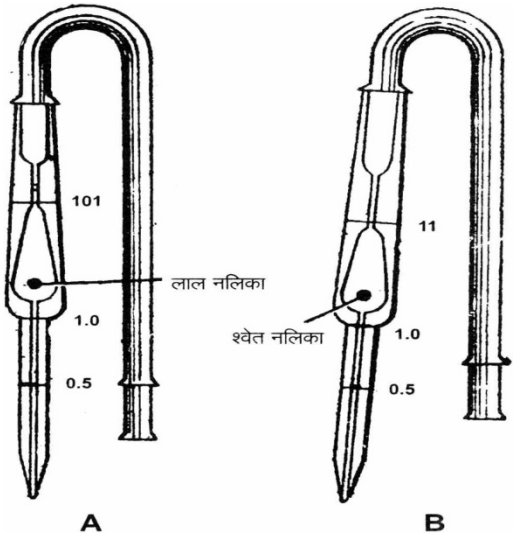

चित्र 4.1 : A. RBC नलिका; B. WBC नलिका

रेखांकित क्षेत्र एक बड़े वर्ग (large Square) के रूप में होता है जो 9 छोटे वर्गों में बँटा होता है (चित्र 4.3) । प्रत्येक वर्ग का वर्ग - फल 1 वर्ग मिमी होता है । प्रत्येक कोने पर स्थित बाहरी 4 वर्ग स्वयं 16 छोटे वर्गों में (A, B, C तथा D) बँटे होते हैं । ये बाहरी वर्ग WBC (श्वेत रक्त कणिकाओं) की गणना के कार्य में आते हैं । अब केन्द्र में स्थित 1 मिमी वर्ग को देखिए । यह 25 छोटे वर्गों में बँटा है । अपनी पारी में प्रत्येक छोटा वर्ग स्वयं 16 वर्गों में उपविभाजित होता है । इस केन्द्रीय वर्ग को RBC (लाल रक्त कणिकाओं) की गणना के कार्य में लाते हैं ।

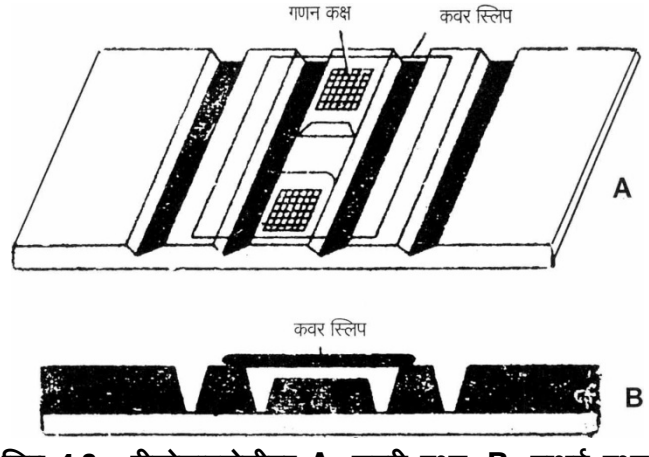

चित्र 4.2 : हीमोसाइटोमीटर A. ऊपरी दृश्य; B. पार्श्व दृश्य

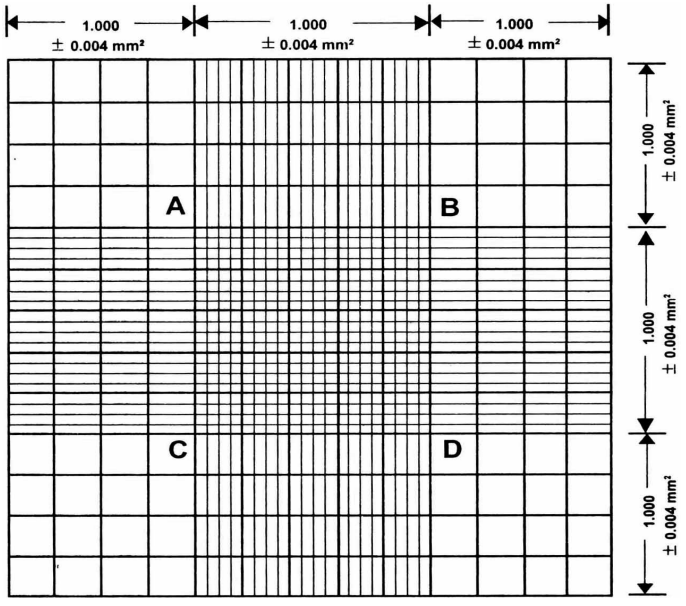

चित्र 4.3 : न्यूबॉर रेखांकन

1. RBC (लाल रक्त कणिकाओं) का आकलन :

1. हीमोसाइटोमीटर-स्लाइड तथा कवर-ग्लास को आसुत -जल से धोकर सुखाइए (ईथर अथवा ऐल्कोहॉल का प्रयोग नहीं करें) ।RBC नलिका को पहले हाइड्रोजन-परऑक्साइड, फिर ऐल्कोहॉल तथा अन्त में ईथर से साफ करिए तथा पूरी तरह सुखाइए ।
2. रक्त को नलिका में लीजिए । केशिका-क्रिया द्वारा रक्त नलिका में चढ़ने लगता है । आवश्यकतानुसार धीरे से खींच कर रक्त को नलिका पर लगे 0.5 अंक पर ले आयें, फिल्टर पेपर की सहायता से नलिका के बाहरी अंत को पोंछ कर साफ कर लीजिए ।
3. अब नलिका में हेयम-घोल खींचिए जिससे सम्पूर्ण घोल ठीक 101 अंक तक पहुँच जाए । नलिका में उपस्थित रक्त अब 200 गुणा तनुकृत दशा में है ।
4. नलिका के अंत को अंगुली की सहायता से बन्द कर रक्त एवं हेयम-घोल को अच्छी तरह से परस्पर मिश्रित कर लीजिए ।
5. हल्की सी फूँक लगाकर नलिका के केशिका-नली वाले भाग से तनुकृत रक्त निकाल दें ।
6. हीमोसाइटोमीटर लेकर उसके गणन-कक्ष पर कवर-स्लिप रख दें ।
7. अब गणन-कक्ष के एक छोर पर नलिका के अन्त को छुआ दें । केशिका-क्रिया नलिका से रक्त निकल कर गणन-कक्ष को भर देगा ।
8. हीमोसाइटोमीटर को सूक्ष्मदर्शी के नीचे रखकर केन्द्रीय 1 वर्ग मिमी वर्ग (25 उपवर्ग युक्त RBC कक्ष) को फोकस करिए ।
9. RBC की संख्या किन्हीं 5 उपवर्गों में मालूम करिए । इन 5 प्रेक्षणों की औसत राशि निकालिये तथा निम्नलिखित विधि द्वारा RBC का आकलन कीजिए ।
10. **गणन :**

(i) रक्त को 200 गुणा तनुकृत किया गया था, अब औसत राशि को 200 गुणा किया जाता है ।

(ii) क्योंकि गणन-कक्ष 0.1 मिमी गहरा होता है, अत: RBC की औसत राशि को 10 से भी गुणा किया जाएगा ।

(iii) क्योंकि गणना गणन -कक्ष (1 वर्ग मिमी) के 1/25 भाग में ही की गई थी, इसलिए RBC की औसत राशि को 25 से भी गुणा किया जायेगा जिससे पूरे 1 वर्ग मिमी में उपस्थित RBC की राशि मालूम हो जाएगी ।

(iv) अत : किसी जन्तु के रक्त में RBC के आकलन के लिए निम्नलिखित समीकरण का प्रयोग करें:

1 घन मिमी में RBC की संख्या =RBC की औसत राशि x 200 x 10 x 25

उदाहरणार्थ, यदि गणन -कक्ष के 5 उपवर्गों में गिनी गई RBC की औसत राशि 98 है, तब, 1 घन मिमी में RBC की राशि होगी

= 98x 200 x10 x 25

= 98 x 50, 000

= 4, 90, 000 = 4.9 x 10^6 / घन मिमी

= 4, 9 दशलक्ष प्रतिघन मिमी ।

II. WBC (श्वेत रक्त कणिकाओं) का आकलन :

कुछ विशेष अन्तरों को छोड़कर WBC का आकलन भी RBC के आकलन के समान ही किया जाता है ।

1. हीमोसाइटोमीटर -स्लाइड तथा कवर -स्लिप को आसुत-जल (ईथर अथवा ऐल्कोहॉल का प्रयोग नहीं करें) से धोकर सुखाइए । WBC नलिका को पहले हाइड्रोजन-परऑक्साइड, फिर ऐल्कोहॉल तथा अन्त में ईथर से धोकर साफ करिए तथा फिर पूरी तरह सुखाइए ।
2. रक्त को नलिका में लीजिए । केशिका-क्रिया द्वारा रक्त नलिका में चढ़ने लगेगा । आवश्यकतानुसार रक्त को धीरे से खींचकर नलिका पर लगे 0.5 अंक तक ले आयें । फिल्टर -पेपर की सहायता से नलिका का अंत पोंछ कर साफ करिए ।
3. अब इस नलिका में WBC तनुकारी -तरल खींचिए जिससे सम्पूर्ण घोल नलिका पर लगे अंक 11 तक पहुँच जाए । यह रक्त 20 गुणा तनुकृत दशा में है ।
4. नलिका के अन्त को अंगुली की सहायता से बन्द कर रक्त एवं तनुकारी घोल को हिलाकर अच्छी तरह परस्पर मिला दीजिए ।
5. हल्की -सी फूँक लगाकर नलिका के केशिका -नली वाले भाग से कुछ तनुकृत रक्त बाहर निकाल दें ।
6. हीमोसाइटोमीटर -स्लाइड लेकर उसके गणन -कक्ष पर कवर -ग्लास रखें ।
7. अब गणन -कक्ष के एक छोर पर नलिका के अन्त को छुआ दें । केशिका -क्रिया द्वारा नलिका से रक्त निकलकर गणन -कक्ष को भर देगा ।

8. हीमोसाइटोमीटर को सूक्ष्मदर्शी के नीचे रखकर गणन -कक्ष को फोकस करें । कोने के 4 बाहरी वर्गों (1 वर्ग मिमी) में WBC की संख्या ज्ञात कीजिए ।WBC गहरे रग के बिन्दुओं की तरह दिखाई देंगे ।
9. पाँच बार WBC की राशि नोट कर उनका औसत निकालिए तथा निम्नलिखित विधि द्वारा उनका रक्त में आकलन कीजिए ।
10. **गणन :**

(i) रक्त को तनुकृत किया गया था, अत : औसत राशि को 20 से गुणा किया जाता है ।

(ii) क्योंकि गणन -कक्ष 0.1 मिमी गहरा होता है, अत : WBC की औसत राशि को 10 से भी गुणा किया जायेगा ।

(iii) क्योंकि कोने का वर्ग 1 मिमी वर्ग का होता है, इसलिए WBC की औसत राशि को 1 से भी गुणित किया जायेगा ।

(iv) अत : किसी जन्तु के रक्त में WBC के आकलन के लिए निम्नलिखित समीकरण का प्रयोग किया जाता है :

1 घन मिमी में WBC की संख्या= WBC की गिनी हुई औसत राशि x 20 x 10 x 1

उदाहरणार्थ, यदि WBC की औसत राशि 35 है, तब किसी जन्तु के 1 घन मिमी रक्त में WBCp की संख्या होगी

= 35 x 200 = 7, 000/ घन मिमी = $7.0x\ 10^3$ / घन मिमी ।

परिणाम (Result) : सभी राशियाँ, गणना तथा RBC एवं WBC की संख्या, पुस्तिका में नोट करिए । अपने परिणामों का विवेचन कीजिए ।

2. रक्त प्रतिदर्श में हीमोग्लोबिन का आकलन (Estimation of Haemoglobin in a Blood Sample)

उद्देश्य (Objective) : सेहली हीमोग्लोबीनोमीटर अर्थात् हीमोमीटर की सहायता से रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा ज्ञात की जायेगी ।

सिद्धान्त (Principle) : रक्त की लाल कणिकाओं में स्थित हीमोग्लोबिन की मात्रा एक स्थिर राशि होती है । अनेक प्रकार के रोग, जैसे रक्तक्षीणता में हीमोग्लोबिन की मात्रा कम हो जाती है । यह कमी RBC से हीमोग्लोबिन के निकल आने पर अथवा स्वयं RBC के नष्ट हो जाने पर उत्पन्न होती है । अत : हीमोग्लोबिन की मात्रा के आकलन की रोग को पहचानने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है । मानव के RBC में हीमोग्लोबिन की मात्रा लिंग पर निर्भर करती है । प्रत्येक 100 मिली रक्त में हीमोग्लोबिन की औसत मात्रा नर में 15.8 ग्राम तथा नारी में 13.7 ग्राम होती है ।

सामग्री (Material) :

1. काँचभाण्ड तथा उपकरण : सेहली हीमोग्लोबीनोमीटर, काँच के ड्रॉपर, ब्रुश ।

2. रसायन : N /10 हाइड्रोक्लोरिक अम्ल, आसुत -जल ।

3. परीक्षण सामग्री : ताजा रक्त (चूहे, मनुष्य आदि का) ।

कार्य - विधि (Procedure) :

सेहली हीमोग्लोबीनोमीटर : इस उपकरण में एक अंशांकित हीमोग्लोबिन मापक नली, दो भूरे काँच की नलिकाएँ । रंगा -मापदण्ड (colour-standard) होती हैं, तथा एक ब्रुश, एक ड्रॉपर, एक विडोलक तथा एक हीमोग्लोबिन नलिका (haemoglobin pipette) होती है जिस पर 20 घन मिमी अंक लिखा होता है (चित्र 4. 4) ।

1. हीमोग्लोबिन मापन नली को इस पर अंकित 2 अंक तक N/10 HCl से भरिए ।
2. अब हीमोग्लोबिन -नलिका में तब तक रक्त खींचिये जब तक यह 20 घन मिमी निशान तक पहुँच नहीं जाये । नलिका के अंत को फिल्टर -पेपर से साफ करें ।

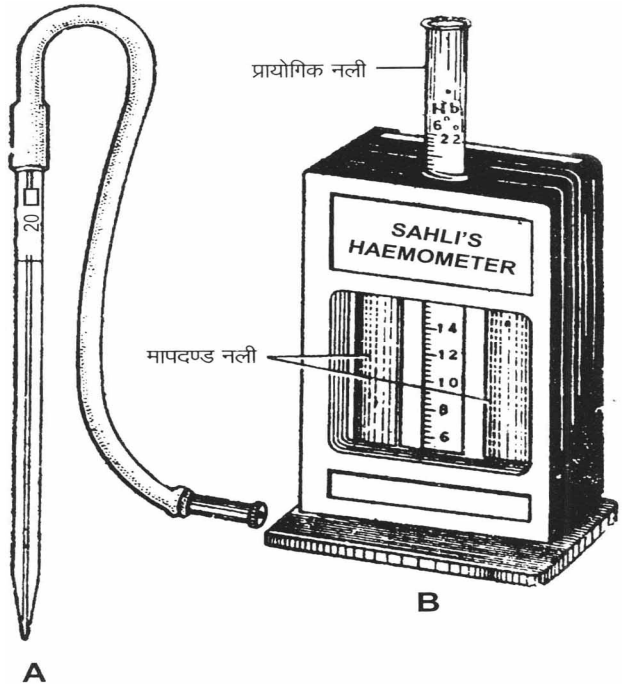

चित्र 4.4 : A. हीमोग्लोबिन नलिका; B. हीमोग्लोबीनोमीटर

3. नलिका से फूँक कर रक्त को हीमोग्लोबिन मापन - नली में डालें । रक्त को मापन -नली में डालते समय ध्यान रहे कि नलिका का अत HCl घोल में डूबा हो । मापन - नली में इस घोल का रंग भूरा (brown) हो जायेगा, क्योंकि हाइडोक्लोरिक अम्ल हीमोग्लोबिन को हीमेटिन अम्ल (haematin acid) में परिवर्तित कर देता है ।
4. ड्रॉपर की सहायता से मापन -नली में आसुत -जल की मात्रा तब तक डालते रहिए जब तक रक्त के घोल का रंग '' रंगा - मानदण्ड'' के ठीक अनुरूप नहीं हो जाये ।
5. मापन -नली पर अंकित राशि पढ़िए, यही रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा है ।

परिणाम (Result) : अपने परिणाम को पुस्तिका में नोट कीजिए ।

3. रक्त प्रतिदर्श में हीमेटोक्रिट -राशि का आकलन (Estimation of Haematocrit Value in a Blood Sample)

उद्देश्य(Objective: इस प्रयोग में रक्त - प्रतिदर्श से हीमेटोक्रिट - राशि ज्ञात की जायेगी ।

सिद्धान्त (Principle) : हीमेटोक्रिट राशि या निचिल कोशिका आयतन (Packed cell volume; PCV) में किसी जन्तु अथवा मानव के रक्त में उपस्थित रक्त -कणिकाओं की कुल राशि मालूम होती है । हीमेटोक्रिट - राशि मानव में रोग पहचानने में सहायक होती है।

सामग्री (Material) :

1. **काँचभाण्डएवं उपकरण :** अपकेन्द्रित उपकरण (centrifuge machine), केशिका नली (capillary tubes) स्पिरिट लैम्प, पिचकारी एवं 21 नं. सुई (hypodermic syringe and No.21needle), 50 मिली बीकर, विच्छेदन-यन्त्र, मापन-पटरी (ruler) ।
2. **रसायन :** हिपेरिन या सोडियम सिट्रेट अथवासोडियम एसिटेट ।
3. **परीक्षण सामग्री :** जीवित चूहा अथवा अन्य स्तनी ।

कार्य-विधि (Procedure) :

1. चूहे को मूर्छित कर उसका वक्ष खोलकर हृदय से पिचकारी एवं सूई की सहायता से रक्त निकालिए । रक्त को सोडियम सिट्रेट अथवा सोडियम एसिटेट की चुटकी -युक्त बीकर में जल्दी से स्थानान्तरित करिए । सोडियम सिट्रेट एसिटेट रक्त को समूहित होने से रोकता है ।
2. केशिका-नली को रक्त में डालिए । केशिका-क्रिया द्वारा रक्त नली में भरने लगेगा । नली में जब रक्त लगभग 3/4 भर जाये तब रक्त के बीकर से हटाकर उसका बाहरी भाग फिल्टर-पेपर की सहायता से अच्छी तरह से पोंछ लें ।
3. केशिका नली के उस अन्त को, जिसमें रक्त नहीं हैं, उसे स्प्रिट-लेम्प की सहायता से नली को घुमाते हुए गर्म कर सील (seal) कर दें । इसी प्रकार लगभग 5-6 केशिका नलियों में भी रक्त लेकर सील करें
4. रूलर (पटरी) की सहायता से सभी केशिका-नलियों में रक्त की लम्बाई मिली मीटर में नाप लें ।
5. केशिका-नलियों को उसके सील-भाग को नीचे की दिशा में रखते हुए सेन्ट्रीफ्यूज-मशीन में डालें । मशीन 3000 आरपीएम (rpm) पर 10 मिनट चलाकर रक्त को सेज करें ।
6. केशिका-नलियों को सेन्ट्रीफ्यूज मशीन से बाहर निकालें । नोट करें कि कणिकाएँ नली में नीचे बैठ जाती हैं तथा प्लाज्मा पृथक हो ऊपर आ जाता है ।
7. प्रत्येक केशिका-नली में पृथक हुई रक्त-कणिकाओं की मिमी में लम्बाई तथा कुल लम्बाई (रक्त प्लाज्मा + रक्त कोशिकाएँ) नाप लीजिए ।
8. अपने प्रेषण की प्रतिशतता की गणना कीजिए तथा सभी केशिका-नलियों का औसत निकालिये । यही दिये हुए रक्त प्रतिदर्श की हीमेटोक्रिट-राशि है।

अर्थात हीमैटोक्रिट – राशि (%) = $\frac{\text{सेन्ट्रीफ्यूज के बाद रक्त कणिकाओं की केशिका– नली में लम्बाई (mm)}}{\text{सेन्ट्रीफ्यूज से पहले रक्त की केशिका नली में कुल लम्बाई (mm)}} = 100$

परिणाम (Result) : अपने प्रेक्षण एवं पीरणाम को पुस्तिका में नोट कीरए ।

4. यकृत मेकिण्वकक्रिया (केटेलेज) का प्रदर्शन (Demonstration of Enzyme Activity (Catalase) in Liver)

उद्देश्य (Objective) : इस प्रयोग में मेंढक अथवा चूहे के यकृत में केटेलेज (Catalase) नामक किण्वक की उपस्थिति एवं क्रिया-विधि का परीक्षण किया जायेगा ।

सिद्धान्त (principles) : रासायनिक दृष्टि से किण्वक भी प्रोटीन होते हैं । जन्तु संस्थान में होने वाली असंख्य जैव-रासायनिक अभिक्रियाओं को सम्पन्न करने हेतु प्रत्येक अभिक्रिया के लिए विशिष्ट किण्वक उपस्थित होते हैं । उत्प्रेरकों की तरह किण्वक जैविक अभिक्रियाओं को गति प्रदान करते हैं परन्तु अभिक्रिया के फलस्वरूप बने अन्त -उत्पाद को बदल नहीं सकते हैं । किण्वक का नाम या तो वह जिस क्रिया में भाग लेता है अथवा जिस पदार्थ पर क्रिया करता है, उस पर निर्भर होता है । साथ ही इस नाम के साथ उपसर्ग "ऐज" (ase) लगाया जाता है । उदाहरणार्थ, वह किण्वक जो प्रोटीन के अपघटन की अभिक्रिया में भाग लेता है उसे प्रोटीनेज' ' (proteinase) कहते हैं ।

कैटेलेज नामक किण्वक प्राय: सभी जन्तु-कोशिकाओं में सामान्य रूप से पाया जाता है किन्तु यह यकृत-कोशिकाओं में प्रचुर मात्रा में उपस्थित होता है । कैटेलेज की उपस्थिति में हाइड्रोजन-परऑक्साइड जल एवं ऑक्सीजन में टूट जाता है ।

$$2H_2O_2 \xrightarrow{Catalase} 2H_2O + O_2$$

जन्तु-कोशिकाओं में कैटेलेज के कार्य का ठीक ज्ञान नहीं है । शायद इस किण्वक की उपस्थिति में श्वसन क्रिया के फलस्वरूप बने हानिकारक तथा विषैले परऑक्साइड का कोशिकाओं में अपघटन होता है ।

इस परीक्षण में, यकृत-सार में हाइड्रोजन-परऑक्साइड की कुछ बूँदें डाली जाती हैं । यदि सार में कैटेलेज है तो H_2O_2 का अपघटन होता है तथा जल और O_2 बनते हैं । C_2 बनने का आभास घोल में होने वाली बुदबुदाहट से तुरन्त मालूम हो जाता है । यह पुष्टि करने के लिए कि वास्तव में बुदबुदाहट कैटेलेज की उपस्थिति के कारण ही है, इस परीक्षण के साथ एक नियन्त्रित परीक्षण (Control test) भी किया जाता है जिसमें यकृत-सार को उबाल कर पहले उसमें से कैटेलेज का नाश कर दिया जाता है तथा फिर इसमें H_2O_2 डाला जाता है । इस नियन्त्रित परीक्षण में यदि बुदबुदाहट नहीं होती है तो निश्चय ही पहले परीक्षण की बुदबुदाहट कैटेलेज की क्रिया के फलस्वरूप थी ।

सामग्री (Materials) :

1. काँचभाण्ड एवं उपकरण : परखनलियाँ, परखनली होल्डर, परखनली स्टेण्ड, बीकर (100मिली), पिपेट (100 मिली), ग्लास ड्रॉपर, वैक्स पैन्सिल, स्पिरिट लेम्प ।

2. रसायन : ताजा हाइड्रोजन-परऑक्साइड ।

3. परीक्षण सामग्री : ताजा यकृत-सार ।

एक ताजा मूर्छित जीवित मेंढक या च्छे का यकृत (25-50 ग्राम) विच्छेदित कीजिए । विच्छेदित यकृत के स्केलपल या चाकू की सहायता से महीन टुकड़े कीजिए तथा खरल में एक चुटकी भर समुद्री रेत (sea sand) और थोड़े से आसुत जल के साथ पीसिए । इस प्रकार पीसे हुए यकृत को एक बीकर में लेकर कुल आयतन लगभग 50 मिली बना लें । बीकर को 2-3 मिनट तक स्थिरावस्था में रख दें, जिससे यकृत के बिना पीसे टुकड़े पेंदे में बैठ जायेंगे । ऊपर के निथरे हुए द्रव को एक काँच की बोतल में भर दें तथा यकृत सार" लेबल लगाकर फ्रीज में रख दें । इसे एक सप्ताह के अन्दर कार्य में लिया जा सकता है । अगर जीवित मेंढक या चूहा उपलब्ध नहीं हो तो माँस विक्रेता से बकरे / भेड़ / भैंसे का यकृत क्रय कर कार्य में लिया जा सकता है ।

कार्य-विधि (procedure) :

1. दो परखनलियाँ लीजिए तथा उन्हें आसुत जल द्वारा अच्छी तरह साफ कर सुखा लीजिए । वैक्स-पैन्सिल द्वारा एक परखनली पर शब्द एक्सपेरीमेन्टल (experimental) के लिए "E" तथा दूसरी पर शब्द कन्ट्रोल (control) के लिए " C " लिख दीजिए ।
2. ग्लास-पिपेट की सहायता से दोनों परनालियों में 5-5 मिली यकृत सार डालिए ।
3. परखनली E में 5 बूँदें हाइड्रोजन - परऑक्साइड की डालिए तथा होने वाली प्रतिक्रिया को नोट कीजिए ।
4. परखनली C में स्थित यकृत -सार को आधे मिनट तक उबालिए तथा ठण्डा कीजिए । अब इस परखनली में भी 5 बूँदें हाइड्रोजन -परऑक्साइड की डाल दीजिए । इसमें होने वाली क्रिया को भी नोट कीजिए ।

परिणाम (Result) : परखनली E एवं C में होने वाली प्रतिक्रियाओं को नोट कीजिए तथा उन पर टिप्पणी कीजिए ।

सावधानियाँ (precautions) :

1. काँचभाण्ड अत्यन्त स्वच्छ होने चाहिए अन्यथा गलत प्रतिक्रिया हो सकती है ।
2. केवल ताजे यकृत -सार तथा हाइड्रोजन -परऑक्साइड को प्रयोग में लाना चाहिए ।

5. स्टार्च के लारीय पाचन का अध्ययन एवं ऊष्मा तथा ऐल्कोहॉल का प्रभाव (Study of Salivary Digestion of Starch and the Effect of Heat and Alcohol)

सिद्धान्त (principle) : लार (saliva) में अमाइलेस (टाएलिन) नामक पाचक -किण्वक उपस्थित होता है जो जटिल मण्ड (starch) को मॉल्टोस नामक सरल घुलनशील शर्करा में परिवर्तित कर देता है । मॉल्टोस फेहलिग -परीक्षण (Fehling's test) में स्वीकारात्मक -प्रक्रिया करता है ।

सामग्री (Materials) :

1. काँचभाण्ड एवं उपकरण : परखनलियाँ, परखनली -स्टेण्ड, परखनली होल्डर, बीकर (250 मिली), पिपेट (10 मिली), काँच के होंपर, मोम -पैन्सिल, स्पिरिट -लेम्प, जल - ऊष्मक (water-bath), हिम -कुँडक (ice bath), ऊष्मायित्र (incubator) आदि ।
2. रसायन : मण्ड का घोल (1%), फेहलिंग विलयन, आयोडीन का घोल, परिशोधित स्पिरिट ।
3. परीक्षण -सामग्री : मनुष्य का लार ।

(अ) लारीय पाचन (Salivary Digestion) :

कार्य - विधि (procedure) :

1. फेहलिंग विलयन बनाने की विधि : दो स्वच्छ 250 मिली काँच की बोतलों को क्रमश: "अ" एवं "ब" से नामांकित कीजिए । बोतल - अ में 200 मिली आसुत -जल डालिए तथा फिर इसमें 14 ग्राम काँपर -सल्फेट मिलाकर घोल तैयार कीजिए । बोतल -ब में 200 मिली आसुत -जल डालिए तथा इसमें क्रमश _ 69 ग्राम पोटेशियम सोडियम टार्ट्रेट तथा 26 ग्राम सोडियम हाइड्रॉक्साइड डाल कर घोलिए । दोनों बोतलों को ठण्डी तथा अंधेरी जगह में संग्रहित कीजिए । कार्य में लेने से ठीक पूर्व घोल 'अ' तथा 'ब' को समान मात्रा में मिलाइए और फिर परीक्षण कीजिए । परीक्षण पर लाल -पीले रंग का अवक्षेप (precipitate) शर्करा की उपस्थिति को दर्शाता है ।
2. आयोडीन - घोल बनाने की विधि : एक स्वच्छ 500 मिली काँच की बोतल में 400 मिली आसुत -जल लीजिए तथा इसमें 12 ग्राम पोटेशियम आयोडाइड घोलिए । इस घोल में फिर 0.25 ग्राम आयोडीन के कण डालिए । घोल की बोतल को ठण्डी एवं अन्धेरी जगह में संग्रहित कीजिए । आयोडीन -घोल से परीक्षण पर गहरा नीला रंग मण्ड की उपस्थिति दर्शाता है ।
3. लार का संग्रह : प्रयोग के लिए लार के सग्रह से पहले स्वच्छ जल द्वारा अपनी मुख - गुहिका को कुल्ली द्वारा साफ करिए । लार निकालने हेतु चुइन्ग-गम (chewing-gum) अथवा एक रबर -बैण्ड को खूब चबाइए । फलस्वरूप बने लार को एक स्वच्छ बीकर में जमा कीजिए । लार में लगभग 10 गुणा आसुत -जल डालकर लार का घोल तैयार कीजिए।
4. दो परखनलियों को क्रमश: ' अ ' एवं 'ब' अंकित कर प्रत्येक में 10 मिली लार -घोल डालिए। परखनली -ब में स्थित लार -घोल को उबालिए जिसके फलस्वरूप उसमें उपस्थित किण्वक नष्ट हो जायेंगे । परखनली-ब को ठण्डा करिए ।
5. परखनली अ तथा ब में 5-5 मिली मण्ड का घोल डालकर हिलाकर अच्छी तरह से मिला लीजिए ।
6. कुछ घण्टों के लिए दोनों परखनलियों को ऊष्मायित्र में 37^0C तापक्रम पर रख दीजिए ।
7. परखनली - अ से घोल की कुछ बूँदें निकालकर उनका आयोडीन-घोल द्वारा मण्ड के लिए परीक्षण कीजिए । नकारात्मक अथवा निम्न कोटि की स्वीकारात्मक अभिक्रिया यह दर्शायेगी

कि घोल में स्थित अधिकांश मण्ड का मॉल्टोस शर्करा में जलीय-अपघटन अमाइलेस किण्वक द्वारा हो गया है ।

8. पुष्टि के लिए परखनली- अ से घोल की कुछ बूँदें निकालकर उनका शर्करा की उपस्थिति के लिए फेहलिग -घोल द्वारा परीक्षण कीजिए । स्वीकारात्मक अभिक्रिया प्रयोग की पुष्टि करेगी ।
9. परखनली-ब से घोल की बूँदें लेकर चरण 7 एवं 8 दोहरावें । मण्ड के लिए स्वीकारात्मक अभिक्रिया तथा शर्करा के लिए नकारात्मक अभिक्रिया यह दर्शायेगी कि लारीय- अमाइलेस के अभाव में मण्ड का माल्टोस में अपघटन नहीं होता है ।

(ब) तापक्रम एवं ऐल्कोहॉल का प्रभाव (Effect of Temperature and Alcohol):

कार्य-विधि Procedure) :

1. एक परखनली -स्टेण्ड पर 7 परखनलियाँ जमाइए तथा उन पर 1 से 7 तक संख्या के लेबल लिखिए।
2. 1 से 5 तक संख्या वाली परखनलियों में क्रमश : 10 मिली लार विलयन तथा 5 मिली स्टार्च विलियन डालिए। इन्हें भली भांति हिलाइए ।
3. प्रथम परखनली संख्या 1 को 4^0C तापक्रम पर हिम -कुंडक तथा क्रमश : द्वितीय तृतीय, ", चतुर्थ व पंचम परखनलियों (संख्या 2, 3, 4, तथा 5) को जल-ऊष्मक या ऊष्पायित्रों में क्रमश : 15^0C, 30^0C, 40^0C तथा 50^0C पर लगभग आधा घंटे के लिए रखिए । आप एक बीकर में जल लेकर तात्कालिक जल -ऊष्मक का निर्माण कर सकते हैं । चाहे गये तापक्रम हेतु ठडा या गर्म जल मिलाकर एक थर्मामीटर से तापक्रम नोट करें ।
4. परखनली संख्या 6 में 10 मिली लार विलयन तथा 5 मिली स्टार्च विलयन डालिए तथा इसे भली-भाँति हिलाकर उबलते हुए जल -ऊष्मक में 3 मिनट तक रखिए व ठंडा होने के लिए रख दीजिए ।
5. परखनली संख्या 7 में क्रमश: 10 मिली लार विलयन, 5 मिली स्टार्च विलयन तथा 1 मिली पारिशोधित स्प्रिट लीजिए । परखनली को अच्छी प्रकार हिलाकर आधा घंटे के लिए रख दीजिए ।
6. प्रत्येक परखनली (संख्या 1-5) से कुछ बूँदें लीजिए तथा आयोडीन विलयन से स्टार्च का परीक्षण कीजिए । स्वीकारात्मक या नकारात्मक अभिक्रिया दर्शाती है कि अधिकांश स्टार्च माल्टोज में अमाइलेज एन्जाइम द्वारा जल अपघटित हो गया है ।
7. इसे सिद्ध करने हेतु, प्रत्येक परखनली से कुछ और बूँदें अन्य परखनलियों में लीजिए तथा फेहलिंग अभिकर्मक द्वारा शर्करा का परीक्षण करें । स्वीकारात्मक अभिक्रिया प्रयोग को सिद्ध करेगी ।
8. 1-5 तक संख्या वाली परखनलियों से अनुकूलतम तापक्रम को नोट कीजिए तथा अपने परिणामों की व्याख्या कीजिए ।
9. परखनली संख्या 6 तथा 7 से भी कुछ बूँदें अलग - अलग परखनलियो में लेकर पद स. 6 तथा 7 को दुबारा दोहराइए । स्टार्च के प्रति स्वीकारात्मक अभिक्रिया तथा शर्करा के प्रति

नकारात्मक अभिक्रिया यह दर्शाती है कि लारीय : माइलेज की अनुपस्थिति और विकृतिकरण के फलस्वरूप स्टार्च माल्टोस शर्करा में अपघटित नहीं हुआ है ।

परिणाम (Result) : टिप्पणी सहित अपने परिणाम लिखिए ।

5. चूहे में योनी आलेप विधि द्वारा मद चक्र का अध्ययन (Study of Ocestrus Cycle by Vaginal Smear Technique in The Rat/ Mouse)

सिद्धान्त (Principles) :

निम्न वर्ग के स्तनधारियों (mammals) का रज चक्र (menstrual cycle) मद चक्र (oestrus cycle) कहलाता है । निम्न वर्ग के स्तनधारियों में मद -चक्र प्रजनन ऋतु (breeding season) के दौरान पाया जाता है । एक प्रजनन ऋतु के मद चक्रों की संख्या के अनुसार इन स्तनधारियों को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है

(i) एकमदकाली (monoestrus) : जिन निम्न वर्ग में एक प्रजनन ऋतु में स्प मद - चक्र पाया जाता है उन्हें एकमदकाली कहते हैं, उदाहरणार्थ. कुत्ता ।

(ii) (ii) बहुमदकाली (polyoestrus) : जिनमें एक प्रजनन ऋतु में यदि एक से अधिक मद - चक्र पाये जाते हैं उन्हें बहुमदकाली कहते हैं । उदाहरण. मूषक (mice), गिनि पिग (Guinea pigs) ।

मद चक्र की विभिन्न प्रावस्थाओं में योनि उपकला (vaginal epithelium) में अभिलाक्षणिक परिवर्तन होते हैं । योनि आलेप (vaginal smears) की जाँच से मद -चक्र की प्रावस्था का पता लगाया जा सकता है ।

(अ) मद पूर्व (Proestrus) (Preparatory stage) : इस प्रावस्था में गर्भाशय व योनी संकुलित (congested) हो जाते हैं । एक स्वच्छ द्रव (clear sanguinous fluid) का स्रावण होता है । योनि उपकला (vaginal epithelium) में प्रचुरोद्भवन (proliferation) होता है । यह क्रिया पुटकों (follicles) द्वारा स्रावित एस्ट्रोजनों (estrogens) के द्वारा होती है । योनी आलेप (vaginal smear) में बहुत सारी केन्द्रिकित (nucleated) कोशिकाएँ देखी जा सकती हैं जो कि प्रचुरोद्भवन हो रही योनि उपकला (proliferating vaginal epithelium) के टूटने से इस आलेप में आ जाती हैं (चित्र 4.5) ।

(ब) एस्ट्रस (Oestrus) (Heat period): इस प्रावस्था में मादा कामोत्ताप में आती है । यह प्रचुरोद्भवन प्रावस्था proliferating phase) के बाद होता है । अण्डोत्सर्ग (ovulation) के पहले की यह अवस्था एस्ट्रस कहलाती है । इस अवस्था में योनी उपकला मोटी हो जाती है। इस समय अण्डोत्सर्ग (ovulation) होता है ताकि मादा के गर्भवती होने की सम्भावना होती है। यदि निषेचन हो जाता है तो प्लैसेन्टा (placenta) का निर्माण हो जाता है और गर्भावस्था प्रारम्भ हो जाती है । यदि निषेचन नहीं होता है तो इसके बाद वाली प्रावस्था मेटाएस्ट्रस (metaoestrus) प्रारम्भ हो जाती है ।

(स) मेटाएस्ट्रस (Metaoestrus) या ल्यूटिअल प्रावस्था (Luteal phase) : इस प्रावस्था में फॉलिकल कोशिकाएँ (follicle class) अण्डोत्सर्ग के पश्चात् अग्र पीयूष (anterior pituitary) के ल्यूटियोट्रोफिक हॉर्मोन (LTH) के प्रभाव से कॉर्पस ल्यूटियम (corpus luteum) का निर्माण करती हैं । कॉर्पस ल्यूटियम द्वारा स्रावित प्रोजेस्ट्रोन (progesterone) द्वारा अन्य परिवर्तन होते हैं । यदि मादा गर्भवती नहीं होती है तो कॉर्पस ल्यूटियम का अपघटन हो जाता है । एकमदकाली (monoestrus) स्तनधारियों में अतिवृद्धित (hypertrophied) श्लेष्मिका (mucosa) टूट जाती है तथा इसे निष्कासित कर दिया जाता है । इस प्रावस्था में योनि आलेप (Vaginal smear) में किरेटिनित उपकला कोशिकाएँ (Keratinized epithelial cells) एवं ल्यूकोसाइट कोशिकाएँ (WBC) पायी जाती हैं ।

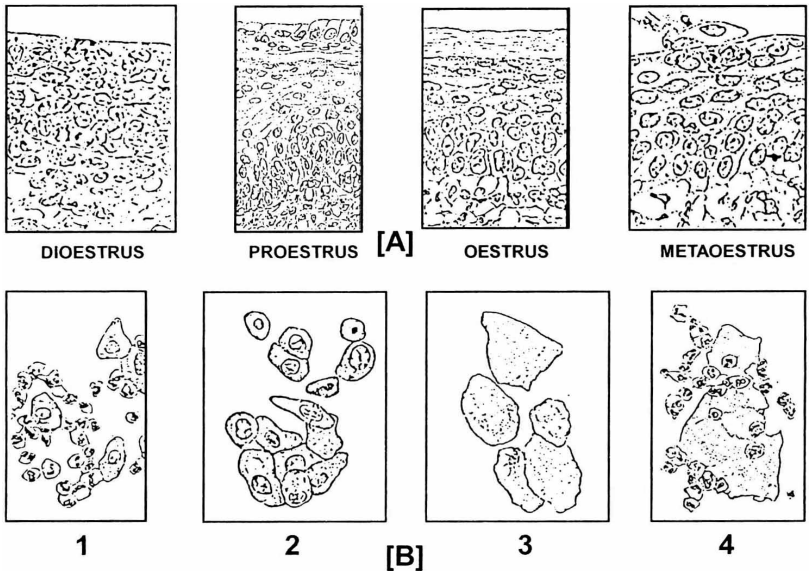

चित्र 4.5 : चूहे की मद चक्रावस्थाएँ : A. योनी उपकला की स्थिति; B. योनि आलेप में कोशिकाओं की स्थिति - 1. डाइएस्ट्रस, 2. मद पूर्व, 3. एस्ट्रास, 4. मेटाएस्ट्रस ।

(द) एनएस्ट्रस या डाइएस्ट्रस (Anoestrus or dioestrus) : यह वि श्रांत अलैंगिक काल (resting asexual period) होता है । एकमदकाली जीवों में यह अगली प्रजनन ऋतु (breeding season) तक होता है, इसे एनएस्ट्रस कहते हैं । उदाहरणार्थ. कुता । बहुमदकाली (polyoestrus) जीवों में (जैसे चूहे में) विश्रांत काल छोटा होता है और यह अगले मद चक्र तक होता है । इसे डाइएस्ट्रस (dioestrus) कहते हैं । चूहे में यह 4 - 6 दिन तक होता है । योनि - आलेप (vaginal smear) में WBC, उपकला कोशिकाएँ व श्लेष्मा (Mucus) पाए जाते हैं । (चित्र 4. 5) ।

निम्न सारणी - 1 में चूहे में मद चक्र के साथ -साथ अण्डाशय एवं योनि के ऊतकों में होने वाले परिवर्तन दिखाए गए हैं :

सारणी 1

प्रातस्था का नाम	प्रावस्था की अवधि	अण्डाश्य ऊतक	योनि आलेप में कोशिकाएँ

डाइएस्ट्रस	पूरे चक्र की आधी	कॉर्पोरा ल्यूटिया की उपस्थिति	ल्यूकोसाइट
प्रोएस्ट्रस	12 घण्टे	तेजी से वृद्धि करते फालिकल	केन्द्रक युक्त एपीथीलियल कोशिकाएँ
प्रारम्भिक एस्ट्रस	12 घण्टे	मैथुन	किरेटिनित कोशिकाएँ
पश्च एस्ट्रस	18 घण्टे	अंडोत्सर्ग	किरेटिनित कोशिकाएँ
मेटाएस्ट्रस	6 घण्टे	नव निर्मित कॉर्पोरा ल्यूटिया	ल्यूकोसाइट कोशिकाएँ

सामग्री (Materials) :

1. काँचभाण्ड तथा उपकरण : सूक्ष्मदर्शीय ग्लास स्लाइड, कवर स्लिप, ग्लास ड्रॉपर, सूक्ष्मदर्शी आदि ।
2. रसायन : नॉर्मल सेलाइन (Normal saline), ऐत्कोहॉल सीरीज, इओसिन तथा हिमेटोक्सीलीन रंजक ।
3. परीक्षण सामग्री : वयस्क मादा चूहे (3 महीने से अधिक आयु युक्त) ।

कार्य - विधि (procedure) :

1. प्रात:काल कुछ वयस्क मादा चूहे लें ।
2. ग्लास ड्रॉपर में कुछ बूँदें नॉर्मल सेलाइन की लें तथा सेलाइन को चूहे की योनि में प्रविष्ट करायें ।
3. एक मिनट तक इंतजार करें ।
4. उसी नॉर्मल सेलाइन से रिक्त हुए ग्लास ड्रॉपर को मादा चूहे की योनि में पुन : प्रविष्ट कराये तथा योनि धोवन इकट्ठा करें ।
5. उपरोक्त धोवन की एक बूँद को स्वच्छ स्लाइड पर रखें तशा कवर स्लिप से ढँक दें ।
6. प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से विभिन्न प्रकार की योनि कोशिकाओं का परीक्षण कर मद चक्रावस्था ज्ञात करें ।

अथवा

योनि धोवन से स्लाइड पर आलेप तैयार करके हवा में सूखायें तथा इओसिन तथा हिमेटोक्सीलीन रंजकों से स्लाइड अभिरंजित करें । DPX में माउण्ड तैयार करें तथा सूक्ष्मदर्शी से परीक्षण कर मद चक्रावस्था ज्ञात करें (चित्र 4. 5) ।

5. स्तनी की प्रमुख अन्त :स्रावी ग्रन्थियों की ऊतकीय संरचना का अध्ययन (Study of Histological Structure of Major Endocrine Glands of Mammals)

1. पीयूष -ग्रन्थि (pituitary Gland)

1. पीयूष -ग्रन्थि अर्थात् हाइपोफाइसिस (hypophysis) मस्तिष्क से संलग्न इसके आधार भाग के मध्य पर स्थित होती है । इसे दो प्रमुख भागों अर्थात् एडीनोहाइपो फाइसिस (adenohypohysis) तथा न्यूरोहाइपो फाइसिस (neurohypophysis) में बाँटा जाता है।
2. एडीनोहाइपोफाइसिस तीन पिण्डों की बनी होती है अर्थात् पार्स दयूबेलिस (pars tuberalis), पार्स इन्टरमीडिया pars intermedia) तथा पार्स डिस्टलिस (pars distalis) ।
3. पार्स डिस्टलिस सबसे बड़ा पिण्ड होता है तथा इसमें तीन प्रकार की प्रमुख कोशिकाओं की श्रेणियाँ पायी जाती हैं । ये हैं :

(i) एसीडोफिल कोशिकाएँ जो एसिडिक रंगों (इओसिन आदि) द्वारा अभिरंजित हो लाल या गुलाबी दिखाई देती हैं;

(ii) बेसोफिल कोशिकाएँ जो बेसिक रंगों (basic dyes) जैसे हिमेटॉक्सीलीन द्वारा अभिरंजित हो नीली दिखाई देती हैं;

(iii) क्रोमोफोब कोशिकाएँ जो किसी भी प्रकार के रंग द्वारा अभिरंजित नहीं होती हैं ।

5. एडिनोहाइपोफाइसिस की विभिन्न कोशिकाएँ लगभग 6 हॉर्मोन का स्रावण करती हैं । ये हैं. सोमैटोट्रॉफिक हॉर्मोन (STH), लेक्टोट्रॉफिक हॉर्मोन (LTH), एड्री - नोकॉर्टी -कोट्रॉफिक हॉर्मोन (ACTH), थाइरो -ट्रॉफिक हॉर्मोन (TSH), फॉलिकल स्टीफ्लेटिंग हॉर्मोन (FSH), तथा ल्यूटिनाइजिंग हॉर्मोन (LH) ।
6. मध्य में स्थित छोटे पार्स इन्टरमीडिया की कोशिकाएँ मेलैनोफोर - स्टीम्यूलेटिंग हॉर्मोन (MSH) का स्रावण करती हैं । यह निम्न वर्ग के कशेरुकियों की त्वचा के रंग का नियमन करता है ।

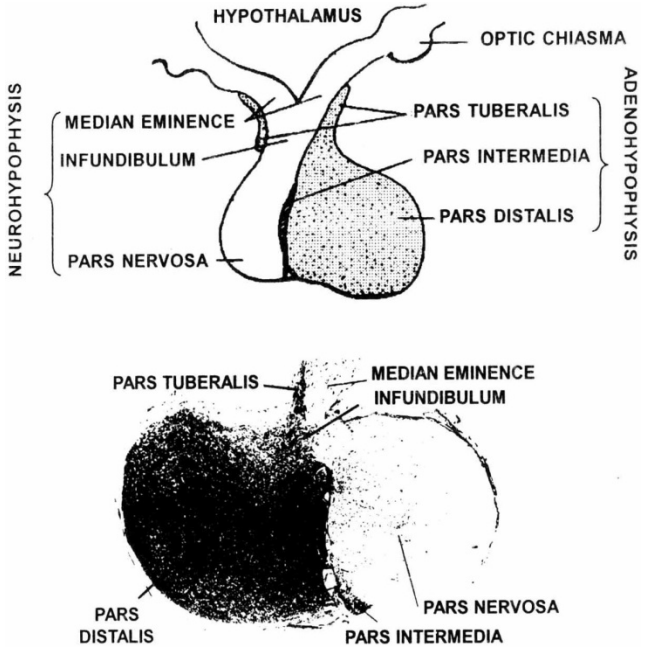

चित्र 4. 6 : स्तनी : पीयूष - ग्रन्थि का मध्यवर्ती आयाम काट

6. सबसे छोटे पार्स दयूबरेलिस की कोशिकाएँ किसी भी हॉर्मोन का स्रावण शायंद नहीं करती हैं।
7. पीयूष की न्यूरोहाइपोफाइसिस भी तीन भागों में बँटी होती है : पार्स नर्वोसा pars nervosa) इन्फण्डीबुलम तथा मीडियन एमिनेन्म (mediam eminence) । इन भागों की कोशिकाएँ किसी हॉर्मोन का स्रावण नहीं करती हैं किन्तु इनमें मस्तिष्क के स्रावी भागों में स्रावित दो हॉर्मोन इकट्ठे किये जाते हैं । ये हैं : ऑक्सीटोसिन (oxytocin) तथा वैसोप्रेसिन (vasopressin) ।
8. स्पष्ट है कि इस अन्त :स्त्रावी ग्रन्थि की संरचना जटिल है तथा इसमें से स्रावित हॉर्मोन भी विभिन्न हैं । साथ ही साथ ये हॉर्मोन शरीर की अनेक क्रियाओं का नियमन भी करते हैं।

2. थायरॉयड ग्रन्थि (Thyroid Gland)

1. काट में यह अन्त :सावी ग्रन्थि छोटी -छोटी विभिन्न व्यास की गोलाकार पुटिकाओं की बनी दिखाई देती है । इन पुटिकाओं को थाइराँएड पुटिकाएँ (thyroid follicles) कहते हैं ।
2. प्रत्येक पुटिका स्रावी कोशिकाओं की एक पर्त द्वारा रेखित होती है । पुटिका के मध्य के रिक्त स्थान में स्रावी पदार्थ जो जैल - स्वरूप (gel- like) होता है, भरा होता है; इस पदार्थ को कोलॉएड (colloid) कहते हैं ।
3. थाइराँएड पुटिकाओं की कोशिकाएँ थाइरॉक्सिन (thyroxine) नामक हॉरमोन का स्रावण करती हैं जो प्रमुख रूप से उपापचयी क्रियाओं का नियमन करता है ।
4. पुटिकाओं के म ध्य के रिक्त स्थानों में संयोजी ऊतक, रक्त - केशिकाएँ आदि स्थित होती हैं ।

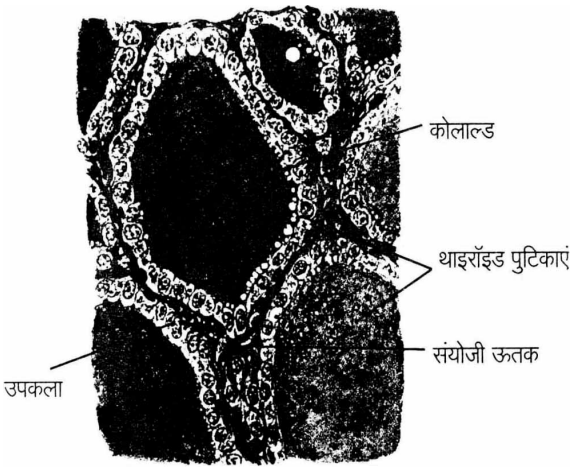

4.7 : स्तनी : थाइराँएड ग्रान्थि का अनुप्रस्थ काट

3. एड्रीनल ग्रान्थि (Adrenal Gland)

1. स्तनी की एड्रीनल-ग्रान्थि संयुक्त (composite) ग्रान्थि होती है तथा दो भागों में बँटी होती है: बाहरी वल्कुट अर्थात काट्रेक्स (Cortex) तथा मध्य की अर्थात मेड्यूला (medulla)

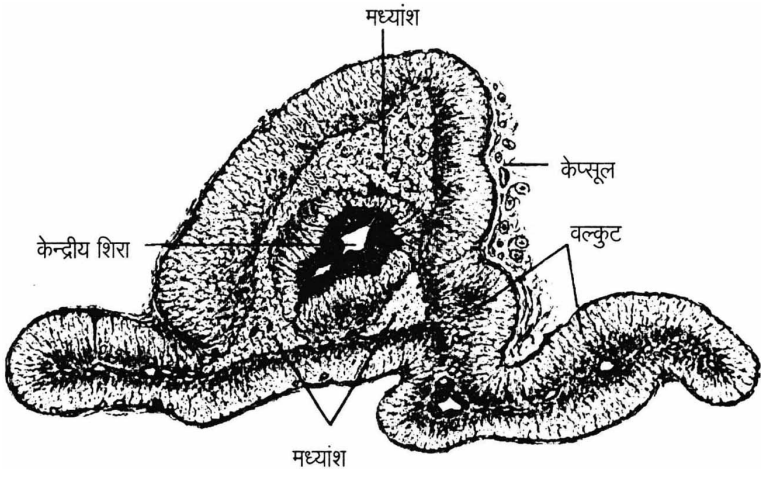

चित्र 4. 8 : स्तनी : एड्रीनल ग्रन्थि का अनुप्रस्थ काट (सूक्ष्मदर्शी की निम्न शक्ति के नीचे)

2. स्तनियों की एड्रीनल -कर्टिक्स अथवा अधिवृक्क -वल्कुट 3 स्तरों में बँटी होती है । बाहर से भीतर की ओर, ये हैं _ जोना ग्लोमेरुलोसा (Zona glomerulosa), जोना फैस्सीस्थूलेटा (Zona fasciculata) तथा जोना रेटिक्यूलैरिस (zona reticularis) ।
3. कर्टिक्स की कोशिकाएँ लगभग 50 से अधिक हॉरमोनों का स्रावण करती हैं जिन्हें सम्मिलित रूप से कॉर्टीकोस्टीरॉएड (corticosteroids) कहते हैं क्योंकि इनकी रासायनिक श्रेणी स्टीरॉएड (stroid) होती है । इसीलिए कशेरुकियों की फीनल -ग्रन्थि के इस स्रावी भाग को स्टीरॉएडोजैनिक ऊतक (steroidogenic tissue) भी कहते हैं । ये हॉरमोन जल - संतुलन, खनिज लवण, कार्बोहाइड्रेट आदि उपापचयी क्रियाओं का नियमन करते हैं ।
4. एड्रीनल मैक्यूला की कोशिकाओं के द्रव्य में सूक्ष्मकण होते हैं जो क्रोमेट रंगों (chromate dyes) द्वारा अभिरंजित होते हैं, अत ' इसीलिए कशेरुकियों की फीनल के सादी भाग को क्रोमैफिन ऊतक (chromaffin tissue) भी कहते हैं ।
5. एड्रीनल मैक्यूला अर्थात् क्रोमेफिन -ऊतक की कोशिकाएँ फीनेलीन (= एपीनेफ्तीन) तथा नॉरस्पीनेलीन (नॉर = एपीनेफरीन) नामक हॉरमोन का स्रावण करती हैं जिनकी रासायनिक श्रेणी अमीन (amines) होती है । इन हॉरमोन की तनाव (stress) एवं प्रघात (shock) की स्थिति पर काबू पाने में प्राथमिक भूमिका होती है, जिसके अन्तर्गत ये कार्बोहाइड्रेट उपापचय, रक्त -दाब, हृदय -गति, रक्त -परिवहन, श्वसन आदि क्रियाओं को सक्रिय करते हैं । निम्न कोटि के कशेरुकियों की त्वचा के रंग बदलने की क्रिया का भीं ये हॉरमोन नियमन करते हैं जिसके अन्तर्गत ये त्वचा की चर्म में स्थित रंगा - कोशिकाओं (chromatophores) के रंगा -पदार्थ को प्रभावित करते हैं ।

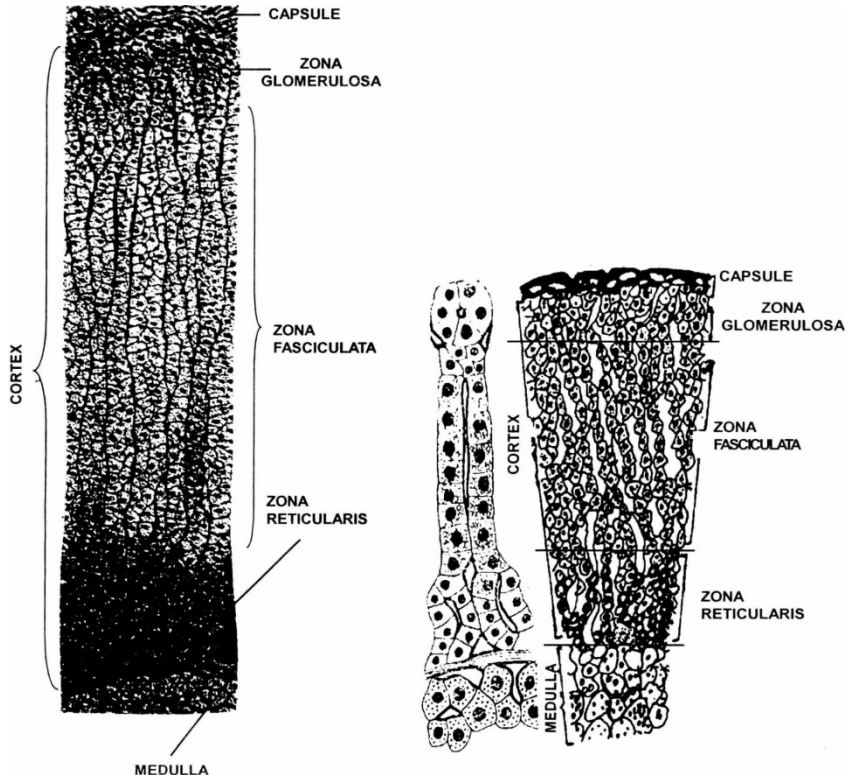

चित्र 4.9 : स्तनी : एड्रीनल ग्रन्थि का अनुप्रस्थ काट (सूक्ष्मदर्शी की उच्च शक्ति के नीचे)

4. अग्न्याशय (लैंगरहैंस - द्वीप) का अनुप्रस्थ काट [(T.S. Of Pancreas (Islets of Langerhans)]

1. अग्न्याशय दो प्रकार की ग्रन्थियों का बना होता है अग्न्याशय ग्रन्थि तथा लैंगरहैंस -द्वीप (islets of Langerhans) ।
2. अग्न्याशय -ग्रन्थि शाखित नलिकाओं की बनी होती है । इन नलिकाओं के फूले हुए अन्त कूपिका अर्थात ऐल्वियोलाई (alveoli) कहलाते हैं ।
3. एल्वियोलाई में ग्रन्थिल -कोशिका -समूह होते हैं जो ऐसिनाइ (acini) कहलाते हैं । प्रत्येक ऐसिनस के बीच का रिक्त स्थान ल्यूमेन (lumen) कहलाता है ।
4. योजी ऊतक के पतले पट (septa) जो इन्टर -लोब्यूलर पट (inter-lobular septa) कहलाते हैं, एल्वियोलाई को एक - हरे से पृथक रखते हैं । अग्न्याशय के योजी ऊतक में कई रक्त केशिकाएँ भी उपस्थित होती हैं ।
5. ऐसिनाइ कोशिकाएँ पाचक अग्न्याशय - रस का निर्माण करती हैं ।

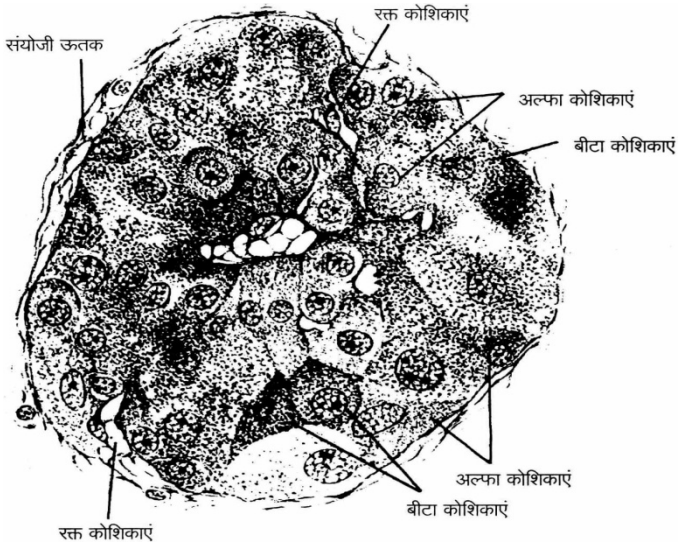

चित्र 4.10 : स्तनी : लैंगरहैंस - द्वीप का अनुप्रस्थ काट

6. अग्न्याशयी ऐल्वियोलाई समूहों के बीच कहीं -कहीं विशिष्ट कोशिका समूह होते हैं जो लैंगरहैंस द्वीप कहलाते हैं । ये अन्त :स्रावी (endocrine) ग्रन्थियाँ हैं ।
7. लैंगरहैंस -द्वीप में दो प्रकार की कोशिकाएँ उपस्थित होती हैं- ऐल्फा कोशिकाएँ (alpha cells) जो अम्लीय अभिरंजकों (acid dyes) से अभिरंजित होती हैं तथा बीटा कोशिकाएँ (beta cells) जो क्षारीय अभिरंजकों (basic dyes) द्वारा अभिरंजित होती हैं ।
8. बीटा कोशिकाएँ इन्सुलिन (insulin) हॉरमोन का स्रावण करती हैं जो शर्करा उपापचय को प्रभावित करता है । इन्तुलिन के अभाव में यकृत में मुक्त ग्प्लोस को संग्रहीत ग्लाइकोजन में परिवर्तित करने की क्षमता नहीं रह जाती है जिसके फलस्वरूप रक्त में शर्करा की मात्रा बढ़ती जाती है तथा I के द्वारा वह शरीर से बाहर आने लगती है, इसी रोग को डायबिटीज (diabetes) कहते हैं ।
9. द्वीप की एल्फा कोशिकाएँ (alpha cells) ग्लूकेगॉन (glucagon) नामक हॉरमोन का स्रावण करती हैं । यह यकृत में ग्लाइकोजेनोलाइसिस (glycogenolysis) क्रिया को सक्रिय कर ऊर्जा हेतु ग्लाइकोजन को ग्फ्टोज में परिवर्तित करके आवश्यकतानुसार रक्त में पहुँचाता है ।

5. वृषण का अनुप्रस्थ काट (T.S. of Testis)

1. वृषण पर योजी ऊतक का पतला आवरण रहता है जो ट्यूनिका ऐलब्यूजिनिया (tunica albuginea) कहलाता है ।
2. वृषण के काट में रेता - नलिकाएँ (seminiferous tubules), योजी ऊतक, इनरस्टीशियल कोशिकाएँ तथा रक्त -वाहिनियाँ
3. प्रत्येक रेता - नलिका जनन उपकला (germinal epithelium) द्वारा रेखित होती है जो स्परमे टोगोनिया (spermatogonia) अर्थात् जनन -कोशिकाओं की बनी होती है ।

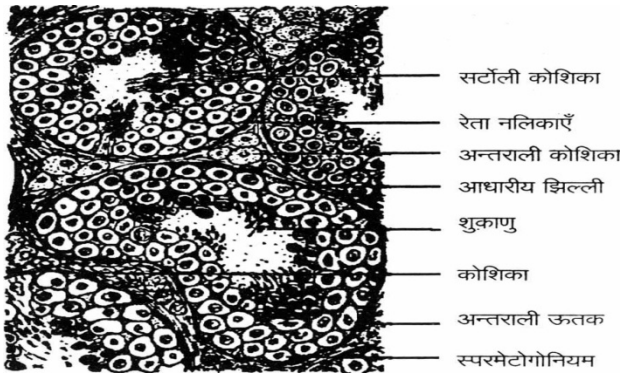

चित्र 4. 11 : स्तनी : वृषण का अनुप्रस्थ काट

4. स्परमेटोगोनिया विभाजन द्वारा क्रमश ' स्परमैटोसाइट (Spermatocte), स्परमैटिड (spermatid) तथा स्परमैटोजोआ (spermatozoa) अर्थात् शुक्राणु बनाती हैं । शुक्राणु रेता -नलिका के केन्द्र के रिक्त स्थान (lumen) में दिखाई देते हैं ।
5. रेता -नलिकाओं के बीच योजी ऊतक होता है जिसमें रक्त -कोशिकाएँ तथा इन्टरस्टिशियल (interstitial) अर्थात् लेडिग (Leydig) कोशिकाएँ दिखाई देती हैं ।
6. लेडिग कोशिकाएँ नर -हॉरमोन अर्थात्(एण्ड्रोजन (androgen) बनाती हैं । अत : वृषण एक अन्त :खावी (endocrine) ग्रन्थि भी है।

6. अण्डाशय का अनुप्रस्थ काट (T. S. of Ovary)

1. अण्डाशय योजी ऊतक के एक पतले आवरण से ढका होता है ।
2. योजी ऊतक के आवरण के भीतर जनन-उपकला (germinal eqithelim) की एक पर्त होती है, जो ऊगोनिएल (oogonial) कोशिकाओं की बनी होती है ।
3. अण्डाशय की इस पर्त के भीतर का स्थान स्ट्रोमा (stroma) अवकाश पीठिका कहलाता है जो योजी ऊतक तथा रक्त - वाहिनियों से भरा होता है ।
4. स्ट्रोमा में अण्डाणु (oval) परिपक्वन की विभिन्न प्रावस्थाओं (stages) में दिखाई देते हैं ।
5. अण्डाणु एक बड़ी गोलाकार कोशिका होती है जिसमें एक बड़ा केन्द्रक दिखाई देता है ।

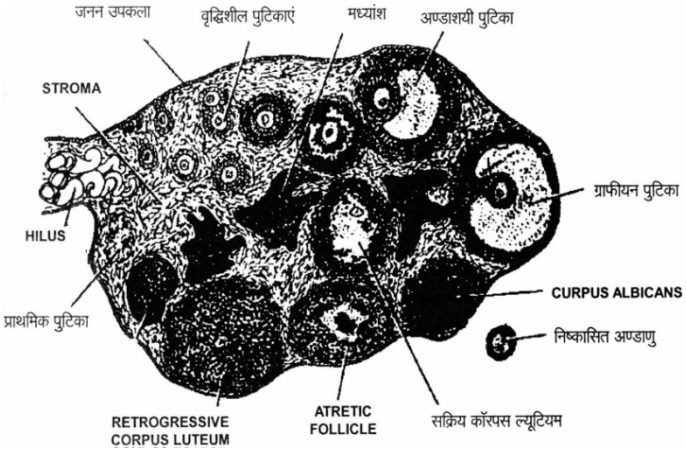

चित्र 4.12 : स्तनी : अण्डाशय का अनुप्रस्थ काट

6. अण्डाणु जनन-उपकलीय कोशिकाओं (germinal epithelial cells) के आवरण से ढ़का होता है । इस आवरण की तीन पर्तें होती हैं भीतरी पर्त जोना पैलुसीडा (zona pellucida), मध्य की भैमब्रेना ग्रेनुलोसा कणिकामय झिल्ली (membrane granulosa) तथा सबसे बाहरी थीकल जोन (thecal zone) कहलाती है । इस आवरण-सहित रचना को अण्डाणु-पुटक (ovarian follicle) कहते हैं ।
7. पूर्ण-विकसित पुटक को ग्राफियन-पुटिका माफी पुटक (Graafian follicle) कहते हैं । इस पुटक में पुटक -आवरण तथा अण्डाणु के बीच रिक्त स्थान होता है जो एक तरल पुटक-द्रव्य से भरा होता है ।
8. अण्डोत्सर्ग (ovulation) के समय ग्राफियन -पुटक से अण्डाणु बाहर आता है । पुटक के इस रिक्त -स्थान को विभाजन द्वारा पुटक -आवरण की कोशिकाएँ भरती हैं तथा कार्पस -लुटिअम पीत पिण्ड (corpus luteum) नामक अन्तःस्त्रावी ग्रन्थि बनाती हैं।
9. अण्डाशय दो प्रकार के मादा-हॉरमोन बनाता है अर्थात् ऐस्ट्रोजन (oestrogen) जो पुटक में बनता है तथा प्रोजैस्ट्रोन (progesterone) जो कॉर्पस -लुटियम में बनता है ।

7. अग्न्याशयी पाचन का अध्ययन (Study of Pancreatic Digestion)

1. किण्वक ट्रिप्सिन की प्रोटीन पर क्रिया (Actrion of Trypsin on Proteins) :

सिद्धान्त (principle) : आमाशय में अम्लीय माध्यम में पेप्सिन प्रोटीन को पेप्टोन एवं पॉलीपेप्टाइड में बदलता है । यह अधपचा अम्लीय भोजन आन्त्र में पहुँचता है तथा यहीं भोजन का समस्त पाचन एक क्षारीय माध्यम में होता है । अग्न्याशय प्रमुख पाचक - किण्वकों का स्रोत होता है । ये किण्वक आन्त्र में अग्न्याशय से निरन्तर पहुँचते रहते हैं तथा यही प्रमुख रूप से जटिल कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा का जलीय - अपघटन कर अन्हें सरलतम अणुओं में बदलते हैं । ट्रिप्सिन तथा काइमोट्रिप्सिन नामक अग्न्याशयी- किण्वक प्रोटीन का पॉलीपेप्टाइड तथा अमाइन - अम्लों में एक क्षारीय माध्यम में अपघटन करते है ।

इस प्रयोग में ट्रिप्सिन का स्रोत "अग्न्याशयी -सार " (pancreatic exptract) होगा तथा परीक्षण सामग्री स्कन्दित रक्त (coagulated blood) होगा ।

ज्ञात रहे स्कन्दित रक्त फाइब्रिन नामक अघुलनशील प्रोटीन के रेशों के बने जाल में फँसी रक्त कणिकाओं का एक जटिल होता है । फाइब्रिन प्रोटीन प्लाज्मा में स्थित फाइब्रिनोजन से उपजती है ।

सामग्री (Material) :

1. काँचभाण्ड एवं उपकरण : परखनलियाँ, परखनली -स्टैण्ड, परखनली -होल्डर, बीकर (25 मिली तथा 250 मिली), 15 मिली पिचकारी (हाइपोडर्मिक सिरिन्ज) तथा 21 नम्बर की छ, स्पिरिट -लेम्प, खरल, विच्छेदन ट्रे एवं यन्त्र, 37^0C पर स्थित इच्छेटर, मापक सिलिण्डर (100 मिली), 5 मिली पिपैट, काँच की बोतलें ।

2. रसायन : ऐल्कोहॉल (3%), सोडियम कार्बोनेट (0.5% जलीय घोल), क्लोरोफॉर्म, आसुत -जल, फिनॉल्फथलीन।
3. जन्तु : जीवित चूहा।

कार्य -विधि (procedure) :

1. अग्न्याशय -सार (अर्क) बनाने की विधि : ताजे मारे हुए चूहे के उदर को खोलकर उसके अग्न्याशय को निकालिए तथा आसुत-जल में भीगी रूई से उसे पोंछ कर साफ करिए । अग्न्याशय को 30% ऐल्कोहॉल की उचित मात्रा के साथ खरल में अच्छी तरह से पीस डालिए तथा एक सूक्ष्म कणयुक्त निलम्बन तैयार कीजिए । इस निलम्बन को एक स्वच्छ बीकर में स्थानान्तरित कीजिए तथा इसमें 2 - 3 मिली क्लोरोफॉर्म (प्रतिरक्षक) मिलाइए । यही "अग्न्याशय सार" है । सार बनाने के एवज में व्यापारिक बेनार का अग्न्याशयी - अर्क खरीदकर उसका 1% जलीय घोल भी उपयोग में लाया जाता है । प्रयोग से पहले प्रत्येक 10 मिली घोल में 2 मिली सोडियम -कार्बोनेट के ०.5% जलीय घोल को डालिए तथा उसे क्षारीय बनाइए ।
2. स्कन्दित रक्त : मूर्छित करे चूहे के हृदय से पिचकारी एवं सुई की सहायता से रक्त निकालिए तथा उसे एक बीकर में रखिए । थोड़े समय बाद रक्त का स्कन्दन हो जायेगा । बीकर से तरल प्लास्मा भाग निथार लीजिए तथा शेष स्कन्दित रक्त को कार्य में प्रयोग करिए।
3. दो परखनलियों को क्रमश : 'अ' एवं 'ब' नामांकित कीजिए
4. प्रत्येक परखनली में 5 मिली अग्न्याशयी-सार डालिए । फिर दोनों परखनलियों में एक - एक बूँद फिनॉल्फथलीन (phenolphthalein) की डालिए । अब प्रत्येक परखनली में 0.5% सोडियम कार्बोनेट का घोल तब तक धीरे - धीरे डालते रहिए जब तक परखनलियों के घोल का रंग गुलाबी नहीं हो जाये । गुलाबी रंग यह दर्शाता है कि परखनलियो के अन्तर्वस्तु माध्यम क्षारीय (alkaline) हो गये हैं ।
5. परखनली - 'अ' में स्कन्दित रक्त का एक छोटा टुकड़ा डालिए ।
6. परखनली - 'ब' के घोल को उबालकर उसकी किण्वक-क्रिया को नष्ट करिए । परखनली को ठण्डा कर उसमें भी स्कन्दित रक्त का छोटा टुकड़ा डालिए ।
7. 37^0C पर स्थित इंक्यूबेटर में दोनों परखनलियों को रात भर के लिए रखिए ।
8. दूसरे दिन परखनली अ एवं ब को देखिए :
   (i) परखनली - 'अ' में ट्रिप्सिन द्वारा स्कन्दित रक्त अर्थात् फाइब्रिन प्रोटीन का पाचन हो जाता है ।
   (ii) परखनली - 'ब' में स्कन्दित रक्त का पाचन नहीं होता है क्योंकि इसके घोल में उपस्थित किण्वक को उबालकर पहले ही नष्ट कर दिया गया था ।

परिणाम ((Result) : परिणामों पर विवेचन -युक्त टिप्पणी लिखिए ।

II. किण्वक लाइपेस की वसा पर क्रिया (Action of Enzyeme Lopase on Fats) :

सिद्धान्त (Principle) : इस प्रयोग में किण्वक लाइपेस का स्रोत अग्न्याशयी-सार होगा तथा परीक्षण सामग्री कोई वनस्पति तेल होगा । लाइपेस बाइल - क्षारों की उपस्थिति में वसा एंव तेल को वसीय - अम्लों एवं ग्लिसरॉल में परिवर्तित करता है ।

सामग्री (Material) :

1. **काँचभाण्ड एवं उपकरण :** परखनलिया, परखनली-स्टैण्ड, 37°C पर स्थित इक्यूबेटर, काँच के ड्रॉपर, स्प्रिट -लेम्प ।
2. **रसायन :** अग्न्याशयी-सार अथवा व्यापारिक बेगार का अग्न्याशयी - अर्क (1%), बाइल - क्षार (व्यापारिक) का 5% जलीय घोल, 1% सोडियम कार्बोनेट का जलीय घोल, फिनॉल्फथलीन ।
3. **परीक्षण -सामग्री :** कोई तरल वनस्पति-तेल ।

कार्य-विधि (Procedure)

1. दो परखनलियों को क्रमश: 'अ' एवं 'ब' से नामांकित कीजिए तथा प्रत्येक में तेल की 5 बूँदें डालिए ।
2. परखनली - अ में 5 मिली अग्न्याशयी-सार तथा 2 मिली बाइल - क्षार का घोल डालिए ।
3. परखनली-ब में अलग से उबाले हुए अग्न्याशयी-सार (5 मिली) तथा 2 मिली बाइल - क्षार का घोल डालिए ।
4. परखनलियों में स्थित तरलों को हिलाकर अच्छी तरह से मिलाइए तथा प्रत्येक परखनली में फिनॉल्फथलीन की दो बूँद डालिए । फिर प्रत्येक नली में धीरे - धीरे 1% सोडियम-कार्बोनेट का घोल तब तक डालते रहिए जब तक नलियों में स्थित घोल का रंग गुलाबी नहीं हो जाये अर्थात् क्षारीय नहीं हो जाये ।
5. रुई के डाट द्वारा दोनों परखनलियो के मुँह बंद कर उन्हें रात भर 37^0C पर स्थित इक्यूबेटर में रखिए ।
6. दूसरे दिन देखिए कि परखनली - 'अ' के घोल का गुलाबी रंग गायब हो गया है किन्तु परखनली - 'ब' में गुलाबी रंग ज्यों का त्यों है ।
7. परखनली - 'अ' में सक्रिय किण्वक लाइपेज तेल को वसीय - अम्लों एवं ग्लिसरॉल में परिवर्तित कर देता है, जिसके फलस्वरूप घोल का माध्यम क्षारीय से अम्लीय हो जाता है तथा फिनॉल्फथलीन का गुलाबी रंग विलुप्त हो जाता है ।
8. परखनली - 'ब' में उबला हुआ अग्न्याशयी सार डाला गया था अर्थात् उसमें सक्रिय किण्वक का अभाव था । किण्वक लाइपेस के अभाव में तेल का पाचन नहीं हो पाता है तथा घोल का माध्यम क्षारीय ही रह जाता है और उसका गुलाबी रंग बना रहता है ।

परिणाम (Result) : परिणाम टिप्पणी सहित लिखिए ।

8. जठरीय -पाचन का अध्ययन (Study of Gastric Digestion)

किण्वक पेप्सिन की प्रोटीन पर क्रिया (Action of Enzyme Pepsin on Proteins) :

सिद्धान्त (Principle) : आमाशय के जठर -रस में जल, रेनिन, पेप्सिन, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल तथा कुछ लाइपेस उपस्थित होता है । अम्लीय माध्यम में किण्वक पेप्सिन प्रोटीन को पाचित कर उन्हें क्रमश: प्रोटिओस, पेप्टोन तथा पॉलीपेप्टाइड में विखण्डित करता है ।

आमाशयी-कोशिकाओं में पेप्सिन पेप्सिनोजन नामक असक्रिय दशा में उपस्थित होता है किन्तु अम्लीय माध्यम में यह सक्रिय पेप्सिन में बदल जाता है । पेप्सिन pH-2 तथा 37^0C पर सबसे अधिक सक्रिय होता है ।

इस प्रयोग में पेप्सिन का 17% व्यापारिक घोल तथा अण्डे की स्कन्दित सफेदी प्रोटीन के रूप में उपयोग में लायी जायेगी ।

सामग्री (Material) :

1. काँचभण्ड एवं उपकरण : परखनर्लियाँ, परखनली-स्टैण्ड, परखनली-होल्डर, बड़ा बीकर (500 मिली), हाट -प्लेट अथवा गैस-बर्नर (स्टोव), 37^0सी पर स्थिर इन्क्यूबेटर (incubator) ।
2. रसायन : पेप्सिन (1% जलीय घोल), हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (0.4% जलीय), सोडियम कार्बोनेट (जलीय घोल) ।
3. परीक्षण सामग्री : मुर्गी का अण्डा ।

कार्य-विधि (Procedure) :

1. अण्डे की सफेदी बनाने की विधि : एक बड़े बीकर में अण्डे को पानी के साथ लगभग 5 मिनट तक उबालें । अण्डे को ठण्डा कर उसका कवच हटाकर स्कंदित अण्डे की सफेदी को पीले पीतक से पृथक् कर लें । सफेदी के लगभग 5 x 15 मिली के कुछ टुकड़े बना लें ।
2. 4 परखनलियाँ लीजिए तथा उन्हें क्रमश: 'अ', 'ब', 'स' एवं 'द' से नामांकित कीजिए ।
3. परखनली - 'अ' में 10 मिली. पेप्सिन घोल तथा अण्डे की सफेदी का एक टुकड़ा डालिए ।
4. परखनली - 'ब' में 5 मिली. 0.4% हाइड्रोक्लोरिक अम्ल तथा सफेदी का टुकड़ा डालिए ।
5. परखनली - 'स' में 1% सोडियम-कार्बोनेट का घोल, 5 मिली पेप्सिन घोल तथा सफेदी का एक टुकड़ा डालिए ।
6. पाखनली - 'द' में 5 मिली 0.4% हाइड्रोक्लोरिक अम्ल, 5 मिली पेप्सिन घोल तथा अण्डे की सफेदी का एक टुकड़ा डालिए ।
7. चारों परखनलियों को रातभर के लिए 37°C पर स्थिर एक इन्क्यूटर में रखिए ।
8. दूसरे दिन अण्डे की सफेदी की परखनलियों में दशा देखिए । परखनली 'अ', 'ब' एवं 'स' में सफेदी के टुकड़ो का पाचन नहीं होता है तथा वे ज्यों के त्यों रहते हैं किन्तु परखनली - 'द' में स्थित सफेदी के टुकड़े का विखण्डन (पाचन) हो जाता है, अत : इस परखनली में वह एक गदले निलम्बन के रूप में परिवर्तित हो जाता है । उस प्रयोग से ज्ञात होता है कि अनुरूप अम्लीय माध्यम में पेप्सिन प्रोटीन का पाचन करती है ।

परिणाम (Result) : प्रेक्षण एवं परिणाम को एक तालिका द्वारा दर्शाइए तथा परिणाम की समीक्षा कीजिए ।

9. कीट कायांतरण पर हॉर्मोन नियंत्रण का अध्ययन (Study of Hormonal Control of Insect Metamorphosis)

उद्देश्य (Features) : इस प्रयोग में घरेलू मक्खी के लार्वा के कायांतरण में हॉर्मोन के प्रभाव का अध्ययन किया जायेगा ।

सिद्धान्त (Principle) : कीटों में भी बहुत प्रकार की जैविक क्रियाओं का संचालन, नियमन व नियंत्रण उनमें पायी जाने वाली अंत :स्रावी ग्रन्थियों द्वारा होता है । उदाहरणार्थ, कुछ क्रियाएं जैसे कीटों में वृद्धि, विभेदन, कायान्तरण, उपरति अथवा डायपॉज (diapause), निर्मोचन, प्रजनन, वर्णकता सम्बन्धी परिवर्तन, उपापचय के विभिन्न पहलू सक्रियता की ताल (rhythem) और अंतरांग (visceral) पेशियों का संकुचन अंत : स्रावी ग्रन्थियों द्वारा स्रावित हॉर्मोनों द्वारा ही नियंत्रित होता है ।

कीटों में परिवर्द्धन के प्रकार : कीटों के विभिन्न वर्गो में निम्नलिखित प्रकार के परिवर्धन पाये जाते हैं :

(अ) कीट वर्ग के तीस से अधिक गणों (orders) में भ्रूणीय अवस्था के बाद के परिवर्धन में काफी विभिन्नता पायी जाती है । सबसे प्रारम्भिक पंखरहित कीटों (एप्टेरीगोट्स - apterygotes) में लगभग सतत या निरन्तर (continuous) वृद्धि होती है । इस प्रकार के परिवर्धन को अकायान्तरणी (ametabolous) परिवर्धन कहते हैं ।

(ब) इसके विपरीत कीट वर्ग के दस गणों में लारवा (larva) से वयस्क (adult) अवस्था तक होने वाले परिवर्तन प्रमुख होते हैं और इसमें, पहले लारवा की प्रावस्था से (जिसे इन्सटार (instar) कहते हैं) वयस्क इमेगो (imago) प्रावस्था तक सम्पूर्ण कायान्तरण होता है । इस प्रकार के परिवर्धन को पूर्णरूपान्तरणीय (holometabolous) परिवर्धन कहते हैं । इसके उदाहरण, इल्ली से तितली में कायान्तंरण, [गण लेपीडॉप्टेरा (Lepidoptera] 1, मैगट (maggot) से मक्खी और रिगलर (wriggler) से मच्छर में कायान्तरण है [गण डिप्टेरा (diptera)] । अन्य पूर्णरूपान्तरणीय समूह जिन पर अंत : स्राविकीय अध्ययन हुआ है, चीटियाँ (ant), मधुमक्खियाँ, बर्रे (wasp) (गण हायमेनॉप्टेरा (Hymenoptera)] हैं । कॉलिऑप्टेरा (Coleoptera) में भृगों (beetles) का उदाहरण दिया जा सकता है । प्रत्येक लारवा प्रावस्था के लिए नये बाह्य कंकाल का अध्यावरण (integument) आवश्यक है । निर्मोचन में पुराना अध्यावरण नष्ट हो जाता है । इसमें वृद्धि एवं विभेदन ऐसी घटनाएँ हैं जिन्हें अलग नहीं किया जा सकता । अंतिम लारवा प्रावस्था के बाद प्यूपा की प्रावस्था का आरम्भ होता है । प्यूपा की प्रावस्था में आतीरक ऊतकों (जो मोटे बाह्य कंकाल के केप्सूल द्वारा सुरक्षित रहते हैं) में काफी व्यपजन होकर उनका रूपान्तरण वयस्क संरचनाओं में होता है । प्यूपा के निर्मोचन के फलस्वरूप वयस्क बनता है । प्यूपा प्रावस्था में क्रियात्मक दृष्टि से निष्क्रिय अंतराल पाया जाता है ।

यह प्रसुप्त (dormant) अवधि (period) उपरति अथवा डायपॉज (diapause) कहलाता है । सामान्यत: प्यूपा में डायपॉज होता है । इसके अलावा ऐसी भी स्पीशीज हैं जिनमें डायपॉज अण्डाणु में होता है (उदाहरणार्थ : रेशम कीट की कुछ प्रजातियों (स्पीशीज) में] । कुछ स्पीशीज में वयस्क भी डायपॉज की स्थिति में रह सकता है (जैसे शीत - निष्क्रियता में) । डायपॉज के समय - निर्धारण में और इस स्थिति के समाप्त करने में, हॉर्मोन अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य हैं।

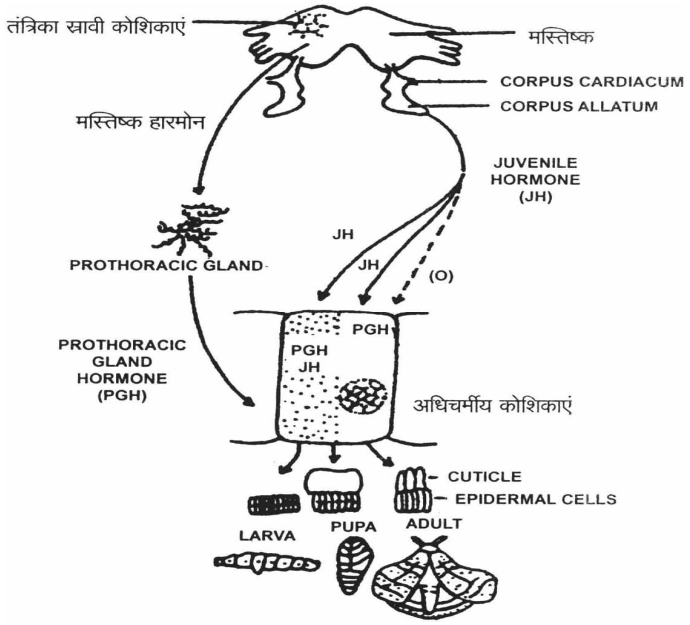

चित्र 4.13 : कायान्तरण का विभिन्न हॉर्मोनों द्वारा नियंत्रण

(स) कीटवर्ग के शेष गणों में साधारण कायान्तरण (metamorphosis) होता है जिसे प्रत्यक्ष (direct) या अपूर्ण (incomplete) कायान्तरण कहते हैं । अपक्व अवस्थाओं (immature stages) तथा वयस्क में केवल यह अन्तर होता है । इस प्रकार का परिवर्धन अल्पकायान्तरणी (hemimetabolous) परिवर्धन कहलाता है । इनमें निम्फ (nymphal) प्रावस्थाओं का एक क्रम होता है और इस क्रम द्वारा वयस्क अवस्था प्राप्त होती हैं । इन प्रजातियों में बाद की निम्फ प्रावस्थायें धीरे - धीरे वयस्क के समन दिखायी पड़ती है । पूर्ण रूपान्तरणीय कीटों के समान ही प्रत्येक अवस्था में निर्मोचन के समय अध्यावरण का नाश होता है । इस प्रकार के अपूर्ण कायान्तरण के उदाहरण हैं : विविध प्रकार के बग (bug), [हेमिप्टेरा व हैटेरॉप्टेरा (Hemiptera and Heteroptera)], रोचेस (roaches) और प्रेयिन्ग - मेन्टिस (praying mantis), ब्लेटिड्स (blattids) और मेन्टिडस् (mantids) (डिक्टियॉप्टेरा गण); वाकिंग स्टिक्स (walking sticks), (गण फेजमॉप्टरा (Phasmoptera)]; दीमक (termites); (गण - आइसोप्टेरा (Isoptera) और टिड्डा (grasshopper); टिड्डी (locust) एवं झींगुर (cricket) [गण ऑर्थोप्टेरा (Orthoptera)] हैं । प्रारंभिक पख वाले कीट, में फ्लाइजए (may flies) [गण ऐफेमॉप्टेरा (Ephemoptera)] और ड्रेगन फ्लाइज (dragon flies) (गण ऑडोनेटा (Odonata)] भी अल्पकायान्तरणी हैं ।

कीटों में कायांतरण (metamorphosis) हॉर्मोन द्वारा नियंत्रित किया जाता है । कीटों की अन्त : स्रावी ग्रन्थियों द्वारा स्रावित मुख्य हॉर्मोन निम्न प्रकार हैं :

1. मस्तिष्क हॉर्मोन (Brain Hormone, BH) : यह हॉर्मोन, मस्तिष्क की तंत्रिकास्रावी कोशिकाओं (neurosecretory cells) द्वारा स्रावित होता है । रासायनिक रूप में यह वसा होता है । यह हॉर्मोन कॉर्पस कार्डिएका को सक्रिय करता है ।
2. प्रोथोरेसिकोट्रोपिक हॉर्मोन (Prothoracicotropic Hormones, PTTH) : यह हॉर्मोन, कॉर्पस कार्डिएका द्वारा स्रावित होता है जो निर्मोकी अथवा प्रोथोरेसिक ग्रन्थि को उद्दीपित करता है । इस हॉर्मोन को इकडाइसियोट्रॉपिक (ecdysiotropic) हॉर्मोन भी कहते हैं ।
3. प्रोथोरेसिक ग्रन्थि हॉर्मोन (Prothoracic Gland Hormone, PGB) : यह हॉर्मोन प्रोथोरेसिक ग्रन्थि द्वारा स्रावित होता है । रासायनिक दृष्टि से यह स्टेरॉइड (steroid) होता है । इसे इकडाइसोन भी कहते हैं । यह हॉर्मोन निर्मोचन (moluting) में सहायक होता है ।
4. जुवेनायल हॉर्मोन (Juvenile Hormone, JH) : यह हॉर्मोन, कॉपर्स ऐलेटा द्वारा स्रावित होता है । यह टर्पिनोइड (terpenoid) होता है । यह एक असाबुनीकरणीय नॉन - स्टेरॉलिक वसा होती है । यह हॉर्मोन कायांतरण (metamorphosis) को नियंत्रित करता है

मस्तिष्क की तंत्रिकास्रावी कोशियाएं, मस्तिष्क हॉर्मोन (Brain Hormone PGB) : का स्रवण करती है जो कि इन कोशिकाओं के ऐक्सॉन अथवा तंत्रिकाक्ष (axon) द्वारा कॉर्पस कार्डिएका में पहुँचाया जाता है ।

मस्तिष्क हॉर्मोन, कॉर्पस कार्डिएका (corpus cardiaca) को उद्दीपित करता है । कॉर्पस कार्डिएका, इकडाइसियोट्र ओपिक हॉर्मोन (ecdysiotropic hormone) अथवा प्रोथोरेसिकोट्रॉपिक हार्मोन का स्रावण करता है जो निर्मोकी ग्रन्थि अथवा प्रोथोरेसिक ग्रन्थि (prothoracic gland) को उद्दीपित करता है । निर्मोकी ग्रन्थि, इस उद्दीपन के कारण, इकडाइसोन (ecdysone) नामक हॉर्मोन का स्रवण करती है जिसके फलस्वरूप निर्मोचन होता है ।

इसके साथ अंतिम निर्मोचन को छोड़कर सभी निर्मोचनों में कॉर्पस ऐलेटा जुवेनायल हॉर्मोन या निओटेनिन (juvenile Hormone, JH or Neotenin) का स्रावण करता है जिसके द्वारा अगला लारवा इन्स्टार बनता है । अन्तिम निर्मोचन में कॉर्पस ऐलेटा निष्क्रिय हो जाता है व वयस्क का निर्माण होता है ।

सामग्री (Material) :

1. **काँचभाड एवं उपकरण :** स्लाइड, वॉच ग्लास, ब्रुश, चिमटी, बीकर (100 मिली.) पैट्रीडिश, महीन धागा, आदि ।
2. **रसायन :** रिंगर विलयन ।
3. **परीक्षण सामग्री :** घरेलु मक्खी के तृतीय इन्स्टार लार्वा (मैगट) ।

कार्य - विधि (Procedure) :

1. घरेलु मक्खी के तृतीय इन्स्टार लार्वा को पुराने तथा गीले गोबर से एकत्रित करें तथा एक गीले फिल्टर पेपर लगे पैट्रीडिश में रखें ।
2. एक स्वच्छ स्लाइड पर लार्वा को एक बूँद रिंगर विलयन सहित रखकर इसके अग्र तथा पश्य भागों को पहचाने । अग्र भाग पश्य भाग से नुकीला होता है तथा इसके शीर्ष पर काले रंग के मैन्डीबल्स (mandibles) पाये जाते हैं ।
3. अब पतले धागे से एक फंदा (loop) बनायें तथा इसमें लार्वा के एक तिहाई अग्र भाग को प्रविष्ट करवा कर फंदे को हल्का सा कस दें । इस बात का ध्यान रखें कि लार्वा मर न जाये । इसी प्रकार कुल 4 - 5 लार्वा के अग्र भागों को फंदे से कस दें ।
4. इस प्रकार सभी लार्वा को 2 - 3 दिन के लिए गीले फिल्टर पेपर लगे पैट्रीडिश में छोड़ दें व निरन्तर प्रत्येक दिन अवलोकन करे।
5. आप देखेंगे कि 2 - 3 दिन पश्चात् धागा बंधे लार्वा के पश्च भाग का रंग परिवर्तित हो जाता है । यह बादामी या पीला - भूरा हो जाता है जबकि धागा बंधे भाग का ऊपर का अग्र भाग पहले के जैसा ही सफेद रंग का रहता है ।

परिणाम (Result) : लार्वा के पश्य भाग का बादामी या पीला- भूरा होना प्यूपा बनने का संकेत है।

लार्वा के अग्र भाग में धागा बाँधने से मस्तिष्क की तंत्रिकास्रावी कोशिकाओं से स्रावी हॉर्मोन के परिसंचरण का मार्ग बाधित होने से कॉर्पस ऐलेटा जुवेनाइल हॉर्मोन का स्त्रावण नहीं कर पाता है। इस स्थिति में प्रोथोरेसिक ग्रन्थि से स्रावित इकडाइसोन हॉर्मोन के प्रभाव में अंतिम लार्वा प्रावस्था कायांतरित होकर प्यूपा बन जाता है । इसी कारण धागे के बांधने के पश्च भाग में कायान्तरण के लक्षण स्पष्टत: दृष्टिगोचर होते हैं ।

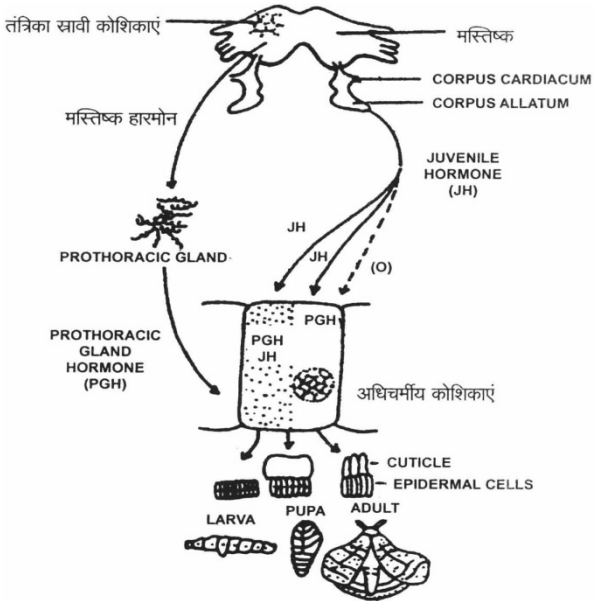

चित्र 4.14 : घरेलू मक्खी का तृतीय इन्स्टार लार्वा ।

इकाई 5 : सूक्ष्म जैविकी (Microbiology)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई में हमने सूक्ष्मजैविकी सम्बन्धी प्रयोगों का वर्णन किया है इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- सूक्ष्मजैविकी प्रयोगशाला की आधारभूत आवश्यकताओं को जान सकेंगे ।
- सूक्ष्म जीवाणुओं के अभिरंजन, पृथक्करण तथा गुणवत्ता को समझ सकेंगे ।

प्रस्तावना (Introduction)

सूक्ष्मजैविकी (सूक्ष्म जीवाणुओं की संरचना, कार्यिकी, जैविकी का अध्ययन) जीव विज्ञान की महत्वपूर्ण शाखा है । सूक्ष्म जीवाणु सर्वत्र विद्यमान हैं । तथा पृथ्वी की पारिस्थितिकी में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । लूइस पाश्चर के अनुसार "सूक्ष्म जीवाणुओं की अनुपस्थिति में पृथ्वी पर जीवन संभव नहीं है" । हालाँकि कुछ जीवाणु मानव, जन्तु व पादपों में रोग उत्पन्न करते हैं । जिस तरह विभिन्न जीव विज्ञान प्रयोगशाला में विशिष्ट नियम तथा उपकरणों की आवश्यकता होती हैं उसी प्रकार सूक्ष्मजैविकी प्रयोगशाला में भी कुछ नियमों की पालना तथा कुछ उपकरण आवश्यक हैं ।

सूक्ष्मजैविकी प्रयोगशाला के नियम

प्रयोगशाला में कार्य करते समय सावधानीपूर्वक प्रयोग करना चाहिए तथा निम्न नियमों का पालन करना चाहिए ।

प्रयोगशाला नियम

(1) स्वयं को जीवाणुओं के संक्रमण से तथा अभिरंजक के गिरने से बचाव के लिए सदैव एप्रोन तथा लेबकोट का प्रयोग करना चाहिए ।

(2) प्रयोग में उपर्युक्त मेज को विसंक्रामक (disiufactaut) जैसे - स्प्रिट आदि से साफ करना चाहिए ।

(3) प्रयोगशाला में धूम्रपान अथवा खाद्य पदार्थो का सेवन नहीं करना चाहिए ।

(4) प्रयोग में प्राप्त प्रेक्षण को तालिका बना कर पुस्तिका में पेन द्वारा लिखना चाहिए तथा प्रतिदिन आये परिणाम का रिकॉर्ड बनाना चाहिए।

(5) स्वयं के कटने, छिलने अथवा जल जाने पर तुरन्त विसंक्रामक से साफ करना चाहिए क्योंकि जीवाणु खुले घाव से प्रवेश करते हैं।

(6) बड़े व घने केश प्रयोगशाला में बाँधकर रखने चाहिए ।

(7) प्रयोगशाला में उपयुक्त उपकरणों को प्रयोग में आने के पश्चात् बंद कर दें ।

(8) जीवाणु अत्यन्त रोगकारक होते हैं अत: इन्हें सावधानीपूर्वक उपयोग करना चाहिए ।

(9) प्रयोग शुरू करने से पहले व खत्म होने के पश्चात् हाथों को साबुन से साफ करना चाहिए

(10) ब्राथ संवर्धन (एZ।णत) का प्रयोग करने के लिएमुख पिपेट का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(11) सम्पूर्ण प्रयोग को अजर्मित वातावरण में करना चाहिए ।

(12) प्रयोग शुरू करने से पहले ही सभी पेट्रीप्लेट, संवर्धन नलिकाओं तथा परखनलिकाओं को चिन्हित करना चाहिए।

(13) सूक्ष्मदर्शी स्टेज, ऑईपीस, लैंस तथा ऑब्जेक्टिव आदि को उपयोग लाने से पहले तथा बाद में लैस पेपर से साफ करना चाहिए।

(14) प्रयोग करते समय प्रयोगशाला के खिड़कियाँ तथा दरवाजे बंद रखने चाहिए ।

सूक्ष्मजैविकी प्रयोगशाला के आवश्यक उपकरण

सूक्ष्मजैविकी प्रयोगशाला में आवश्यक उपकरण निम्न हैं :

(1) बुन्सन बर्नर या स्प्रिट लेम्प

(2) लेमीनार एयर फ्लो

(3) सूक्ष्मदर्शी

(4) वॉटर बाथ

(5) ऑवन

(6) इन्क्यूबेटर (ऊष्मक)

(7) रेफ्रीजरेटर

(8) ऑटोक्लेव या प्रेशर कुकर

(9) ऊष्म पट्टिका (Hot plate)

(10) सेन्ट्रीफ्यूज

(11) pH मीटर

(12) स्पेक्ट्रोफोटोमीटर\

(13) क्यूबिक कॉलोनी काउँटर

(14) संतुलक (Balance)

बुन्सन बर्नर

बुन्सन बर्नर का नाम एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक आर.डब्ल्यू. बुन्सन ने दिया । इसका प्रयोग इनोकुलेटिंग लूप के निर्जमीकर के लिए किया जाता है । इसका प्रयोग संवर्धन नलिकाओं (culture tube) व फ्लॉस्क को संक्रमण से बचाने के लिए भी किया जाता है।

इस उपकरण द्वारा निर्जमीकरण का मुख्य सिद्धांत शुष्क ऊष्मन (dry heat) है ।

लेमीनार एयर फ्लो

लेमीनार एयर फ्लो का प्रयोग अजर्मित वातावरण उपलब्ध कराने के लिए तथा संक्रमण के बचाव के लिए किया जाता है ।

इस उपकरण का मुख्य सिद्धांत HEPA filter हाई एफीशिएन्सी पार्टीकुलेट एयर फिल्टर है । इस फिल्टर से शुद्ध वायु का प्रवाह किया जाता है तथा इस फिल्टर का छिद्र आकार (pare size) इतना छोटा होता है कि सूक्ष्म से सूक्ष्म जीवाणु भी इससे प्रवाहित नहीं हो सकता है ।

लेमीनार हुड में प्रवाहित होने वाली वायु पहले फिल्टर से होकर गुजरती है तथा यह एक दिशा में ही प्रवाहित होती है जिससे बाहर से जीवाणु कार्यक्षेत्र में प्रवाहित नहीं हो सकते । ले.ए.फ. के

अन्दर एक फ्लॉरोसेन्ट लाइट तथा एक पराबैंगनी (U.V.) प्रकाश स्रोत लगा रहता है । पराबैंगनी प्रकाश स्रोत (किरणों) द्वारा लेमीनार हुड में उपस्थित संक्रामक जीवाणुओं का हरण कर दिया जाता है । (U.V. किरण 30 मिनट तक प्रयोग शुरू करने से पहले प्रवाहित की जाती हैं ।) प्रयोग करते समय वायु प्रवाहित होती है जिससे बाह्य जीवाणु लेमीनार हुड में प्रवेश नहीं कर पाते हैं ।

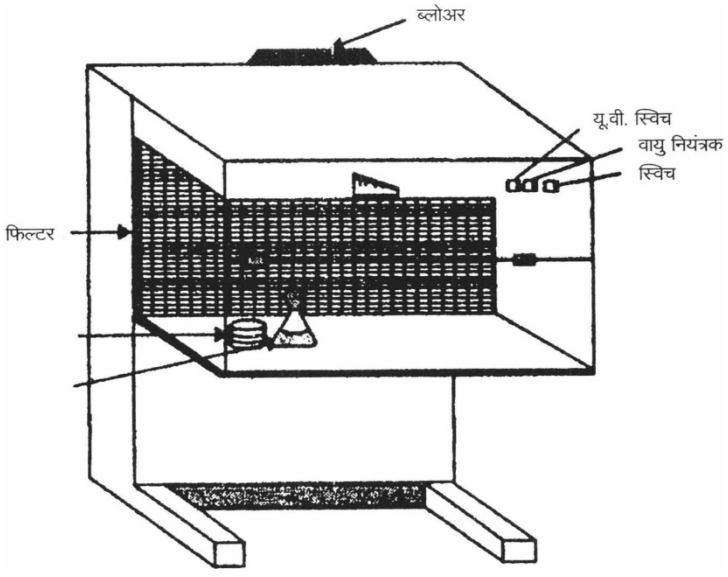

चित्र 5. 1 : लेमीनार एयर फलो

सूक्ष्मदर्शी

सूक्ष्म जीवाणुओं का आकार अत्यधिक छोटा होने के कारण वे नग्न नेत्रों से नहीं देखे जा सकते हैं उन्हें देखने के लिए सूक्ष्मदर्शी का प्रयोग किया जाता है । सूक्ष्मदर्शी में मुख्यता : एक नेत्रिका (eyepiece) होता है जिसका आवर्धन (magnification) 5 x or 10x होता है । आईपीस काय नलिका अथवा सूक्ष्मदर्शी नलिका (body tube) में लगा होता है । काय नलिका के दूसरे सिरे पर अभिदृश्यक (objectives) लैंस लगे रहते हैं इनकी क्षमता भिन्न-भिन्न होती है (10x, 90x and 100x) 100x का प्रयोग उच्च आवर्धन के लिए किया जाता है ।

सूक्ष्मदर्शी के अन्य महत्वपूर्ण भाग हैं आधारीय पाद (base) यह U अथवा Y आकार का होता है, आधार से निकला हुआ सीधा खड्डा छोटा भाग होता है जिसे फलक (limb) कहते हैं । सूक्ष्मदर्शी में एक वक्राकार भुजा (arm) होती है जिसे आगे-पीछे घुमाया जा सकता है । नली संधी (inclination joint) फलक व भुजा को जोड़ने का कार्य करता है । भुजा के आधारी भाग पर समकोण पर लगी प्लेट जिसके केन्द्र में एक छिद्र होता है मंच (stage) कहलाती है, इसके दोनों किनारों पर एक-एक क्लिप लगा रहता है जो स्लाइड पकड़ने का कार्य करता है । मंच के नीचे एक गोल डिस्क लगी रहती है जिसे आइरिस डायफ्राम कहते हैं जिससे होकर प्रकाश किरणें संग्राही लेंस तक पहुँचती हैं । डायफ्राम से नीचे की ओर स्तम्भ से जुड़ा समतल या अवतल दर्पण जो होता है प्रकाश को डायफ्राम की ओर निर्देशित करता है । कायनली को

समायोजन पेच दो प्रकार के होते हैं - काय नली को समायोजन पेच की सहायता से ऊपर नीचे सरकाया जा सकता है । समायोजन पेच 2 प्रकार के होते हैं :

1. **स्थूल समायोजन** (Coarse adjustment) : ये बड़े एवं भुजा पर ऊपर की ओर स्थित होते हैं, जिससे नली को तेजी से सरकाते हैं ।
2. **सूक्ष्म समायोजन** (Fine adumstment) : ये आकार में छोटे तथा भुजा पर थोड़े नीचे स्थित होते हैं जो कायनली को अत्यन्त धीमे सरकाते हैं ।

कायनली के नीचे नोज पीस (Nose piece) लगा रहता है जो घूमने वाली प्लेट होती है इस पर आब्जेक्टिव लगे होते हैं ।

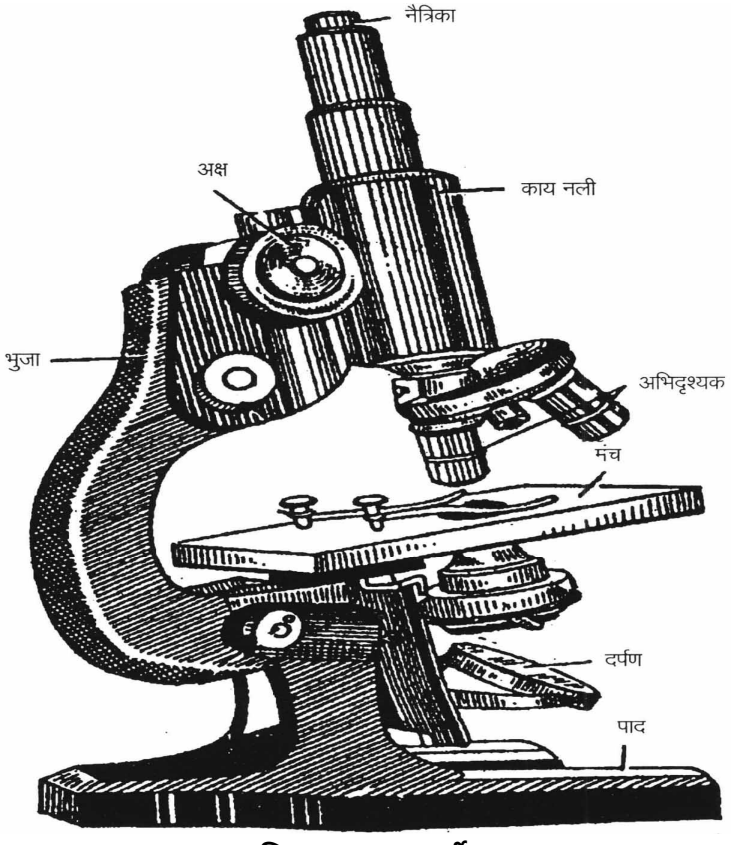

चित्र 5.2 सूक्ष्मदर्शी

वाटर बाथ

प्रयोग में लगातार स्थित ताप पर नमूने को गर्म करने के लिए वाटर-बाथ का प्रयोग किया जाता है । वाटर बाथ स्टील का बना एक ऊष्मारोधक (iusulating) बक्सा होता है जिसमें इलेक्ट्रोड ऊष्पक कुण्डली (heating coil) लगी रहती है । तापमान को थर्मोस्टेट की सहायता से नियंत्रित किया जाता है । वह वाटरबाथ जिसका प्लेटफार्म घूमता रहता है (घूर्णित) है उसे वाटरबाथ शेकर कहते हैं । यह सूक्ष्मजैविकी प्रयोगशाला में अधिक उपयोगी होता है क्योंकि यह संवर्धन को समान ताप उपलब्ध करता है ।

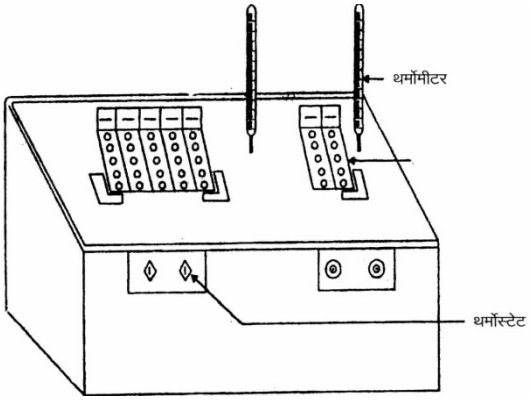

चित्र 5. 3 : वाटर बाथ

ऑटोक्लेव

ऑटोक्लेव का मुख्य सिद्धांत उच्च दाब पर ऊष्ण प्रवाहन है जो कि पूर्ण निर्जमीकरण के लिए अति आवश्यक है । जल पर उच्च दाब लगाने पर जल का वाष्पन बिन्दु (boiling point) बढ़ जाता है । जैव कोशिकाओं का हरण उच्च दाब से नहीं अपितु उच्च ताप से होता है । अधिकतर जीवाणु 121°C ताप व 15 पाँड दाब पर मृत हो जाते हैं ।

ऑटोक्लेव की सहायता से काँच के संसाधन, संवर्धन माध्यम आदि का निर्जमीकरण किया जाता है । प्लास्टिक संसाधन, तेल, पाउडर इत्यिादि को ऑटोक्लेव नहीं करना चाहिए । ऑटोक्लेव धातु ताँबा अथवा लोहे की बनी हुई दुहरी भित्ति से बना हुआ सिलेण्डर होता है जो एक तरफ से लिड द्वारा ढका जाता है तथा इसके आधार पर इलेक्ट्रॉड ऊष्मक कुण्डली लगी होती है । कुण्डली के ऊपर स्टैण्ड लगा होता है जिस पर निर्जमीकरण की जाने वाली वस्तु रखी जाती है । लिड के ऊपर दाब गाउज (pressure gauge) लगा होता है जिसके द्वारा दाब नियंत्रण होता है । लिड पर एक ऊष्म कॉक (steam cock) लगा रहता है जिससे सिलेण्डर से वाष्प का निर्वाहन होता है । ऑटोक्लेव को फटने से बचाने के लिए इस पर एक सेफ्टी वाल्व लगा रहता है ताप व दाब को नियंत्रित करने के लिए एक नियंत्रक भी लगा रहता है । ऑटोक्लेव निर्जमीकरण के लिए उपर्युक्त अत्यन्त आवश्यक उपकरण है जो कि सूक्ष्मजैविकी प्रयोगशाला में आवश्यक है ।

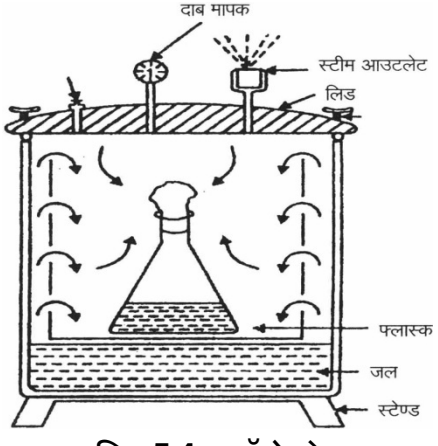

चित्र 5.4 : ऑटोक्लेव

p^H मीटर

हाइड्रोजन आयन सान्द्रता के ऋणात्मक लघु गणाँक (logarithum) को pH कहा जाता है।

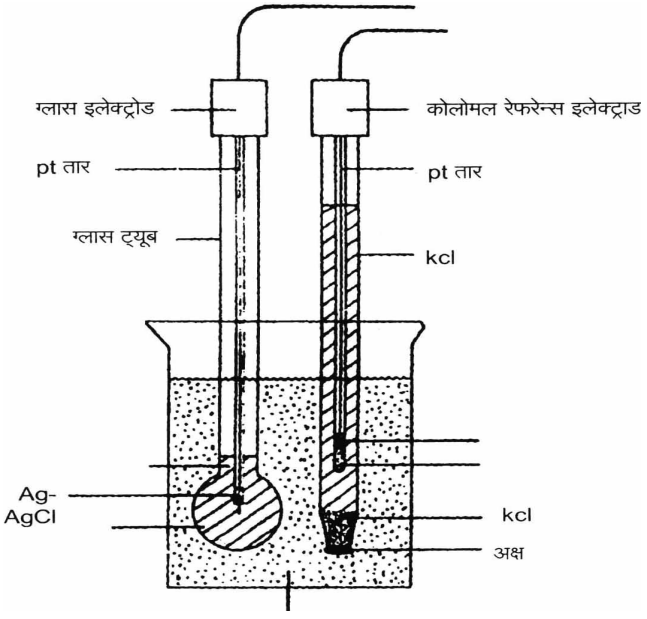

चित्र 5.5 : pH मीटर

मापक पर विलयन की अम्लीयता तथा क्षारीयता निर्धारण pH द्वारा किया जाता है । (1-14) अम्लीय माध्यम का pH 1-7 तक होता है तथा क्षारीय माध्यम का pH = 7-14 होता है । 7 pH के विलयन को उदासीन विलयन कहा जाता है । अस्त प्रोटीन दाता तथा क्षार प्रोटीन ग्राही होते हैं । सूक्ष्म जीवाणुओं की वृद्धि के लिए pH एक अतिआवश्यक परिमाप है । pH का निर्धारण pH मीटर की सहायता से किया जा सकता है । मीटर में 2 इलेक्ट्रॉड लगे होते हैं इनमें से एक काँच का इलेक्ट्रॉड (glass elactrode) तथा दूसरा मर्करी-मर्कयुरस क्लोराइड (कालोमल) अथवा सिल्वर-सिल्वर क्लोराइड रेफरेन्स इलेक्ट्रॉड होता है । संदर्भ (reference) इलेक्ट्रॉड KCl विलयन में डूबा रहता है । ग्लास इलेक्ट्रॉड H^+ आयन के लिए चयनित पारगम्य (selectively previable) होता है । अत : इलेक्ट्रॉड धातु इलेक्ट्रॉड (metallie elactrode) तथा विलयन के मध्य चालकता सेतु (conductive bridge) का कार्य करता है ।

pH मीटर की सहायता से अज्ञात विलयन का pH ज्ञात किया जाता है ।

ऑवन (Oven)

ऑवन की कार्य प्रणाली का मुख्य सिद्धांत शुष्क ऊष्मा (dry heat) का प्रवाह है । ऑवन में निर्जमीकरण के लिए ऑटोक्लेव की तुलना में अधिक समय की आवश्यकता होती है । गर्म वायु ऑवन का प्रयोग काँच के उपकरणों के निर्जमीकरण के लिए किया जाता है । इसके अलावा वे संसाधन जिनको ऑटोक्लेव नहीं किया जा सकता, को भी ऑवन द्वारा निर्जमित करते हैं । ऑवन में 150°C - 180°C ताप पर 2-4 घन्टे के लिए निर्जमीकरण किया जाता है ।

विद्युतीकृत ऊष्पन क्रिया द्वारा ऑवन के ऊष्मारोधक तंत्र में ताप नियंत्रित किया जाता है । सामान्य निर्जमीकरण के लिए ऑवन का ताप 160° नियंत्रित किया जाता है ।

ऊष्मक (Incubator)

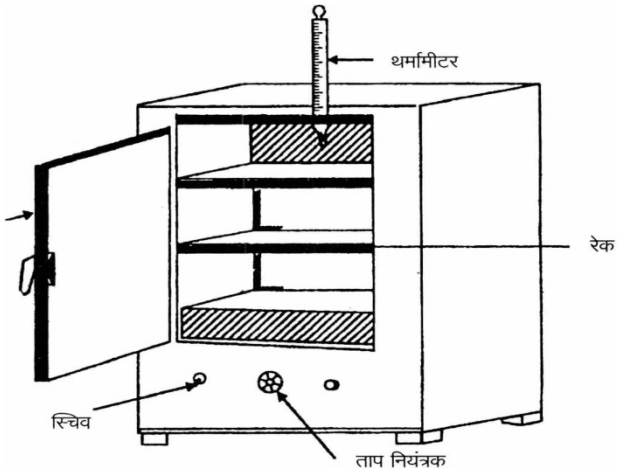

चित्र 5. 6 : ऊष्मक

ऊष्मक की सरंचना तथा प्रकार ऑवन के समान होता है तथा यह भी ऊष्मारोधक तंत्र होता है। ऊष्मक का प्रयोग निर्जमीकरण के लिए नहीं होता है अपितु जीवाणु संवर्धन (culture) के लिए उचित वातावरण (ताप, दाब, नमी) उपलब्ध कराने के लिए होता है । सामान्य ऊष्पम में ताप को शुष्क वायु द्वारा नियंत्रित किया जाता है तथा नमी उपलब्ध कराने के लिए एक वीकर में जल उपलब्ध करवाया जाता है । ऊष्मक में संवर्धन की वृद्धि के लिए उपर्युक्त प्रकाश भी उपलब्ध करवाया जाता है । ताप के नियंत्रण के लिए ऊष्मक पर एक ताप नॉब लगा रहता है ।

स्पेक्ट्रोफोटोमीटर

स्पेक्ट्रोफोटोमीटर अत्यन्त आवश्यक उपकरण है जिसकी सहायता से माध्यम में अणुओं की सान्द्रता ज्ञात की जाती है । इस उपकरण का मुख्य सिद्धांत अणुओं द्वारा निश्चित तरंग दैर्घ्य के प्रकाश का अवशोषण है । इस उपकरण द्वारा अणुओं द्वारा निश्चित प्रकाश के अवशोषणांक (absorbance) अथवा प्रकाशिक सघनता को ज्ञात किया जाता है । स्पेक्ट्रोमीटर का सिद्धान्त बीयर (Bear) तथा लेम्बर्ट (Lambert) ने प्रतिपादित किया था । इस सिद्धांत के अनुसार जब एक वर्णीय (monochromatic) प्रकाश किसी माध्यम से गुजरता है तब उसकी तीव्रता माध्यम में उपस्थित अणुओं की सान्द्रता तथा माध्यम की लम्बाई के अनुक्रमानुपाती होती है । चूँकि कुछ प्रकाश माध्यम के अणुओं द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है ।

$$\text{Log } Lo/L = Ke$$

Lo = प्रकाश की प्रारम्भिक तीव्रता

L = विलयन से प्रवाहित होने के पश्चात् माध्यम की तीव्रता

C = विलयन की सान्द्रता (मोल/लीटर)

K = गुणाँक

स्पेक्ट्रोफोटोमीटर ke मुख्य तीन bhag है -

(1) विकिरण का स्रोत जिस एक वर्णीय प्रकाश (monochromatic) में परिवर्तित किया जाता है ।

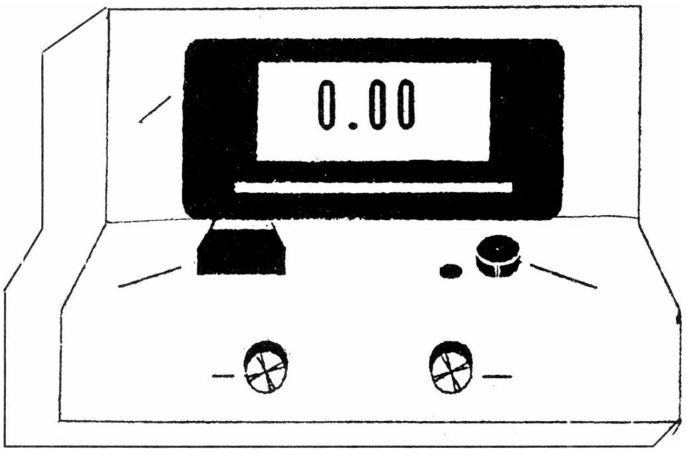

चित्र 5.7 : स्पेक्ट्रोफोटोमीटर

(2) क्यूवेट : वह यूनिट जिसमें माध्यम के नमूने को रखा जाता है जिसकी आण्विक सघनता ज्ञात करनी है ।

(3) डिटेक्टर : वह यूनिट जिसमें निश्चित तरंग दैर्ध्य पर प्रकाशिक सघनता को मापा जाता है।

स्पेक्ट्रोफोटोमीटर को प्रकाश पुँज के तरंग दैर्ध्य के आधार पर 3 भागों में बाँटा गया है :

(1) (Visible range spectrophotometer)

(2) पराबैंगनी (UV/Visible spectrophotometer)

(3) (IR spectrophotometer)

सेंट्रीफ्यूज (Centrifuge)

सेंट्रीफ्यूज वह उपकरण है जो अपकेन्द्रण तकनीक (centrifugation technique) पर कार्य करता है । अपकेन्द्रण तकनीक आण्विक भार, आकार तथा कण की सघनता पर आधारित है । विभिन्न अणुओं को उनके आण्विक द्रव्यमान के आधार पर पृथक करने के लिए इस तकनीक का प्रयोग किया जाता है । अणुओं के अवसादन (sedimentation) के लिण सेंट्रीफ़्यूज प्रयुक्त किया जाता है।

अवसादन की दर अणुओं व प्रकार पर निर्भर करती है । इस उपकरण में विलयन पर अपकेन्द्रण बल (centrifugal force) लगाया जाता है तथा यह केन्द्रीय अक्ष की दिशा में लगाया है । अगर घूर्णन गति अधिक होगी तो लगाया गया अपेकन्द्रीय बल भी अधिक होगा । अवसादन की मात्रा लगाये गये अवसान फील्ड (G) पर निर्भर करती है । G का मान कोणीय वेग (angular valocity) (रेडियन/सैकण्ड) तथा त्रिज्य दूरी (radial distance) पर निर्भर करती है ।

$$G = W^2r$$

क्योंकि 1 घूर्णन 2 त्रिज्या (radial) के समान है अत :

$$G = \frac{2\pi \left(revolution / \min\right)^2 r}{\left(60\right)^2} = \frac{4\pi r}{3600}$$

$$w = \frac{2\pi}{60} revolution / \min ute$$

अवसादन की दर अथवा वेग को रिलेटिव सेन्ट्रीफ्यूगल फील्ड भी कहा जाता है तथा g unit sec-^{2} or 980 से. कि./सैकण्ड 2 से व्यक्त किया जाता है रिलेटिव सेन्ट्रीफ्यूगल फील्ड का मान अणुओं की आकृति पर भी निर्भर करता है तथा इसे स्लेडबर्ग गुणाँक (s) से व्यक्त किया जाता है।

$$V = Sw^{2 \text{ or }} S = \frac{V}{W^2 r}$$

सेन्ट्रीफ़्यूज विभिन्न प्रकार के होते हैं जैसे -स्माल बैंच सेन्ट्रीफ्यूज, तीव्र गति सेन्ट्रीफ्यूज (high speed centrifuge) और अल्ट्रा सेन्ट्रीसुज ।

सर्वाधिक विकसित प्रकार अल्ट्रासेन्ट्रीफ्यूज है ।

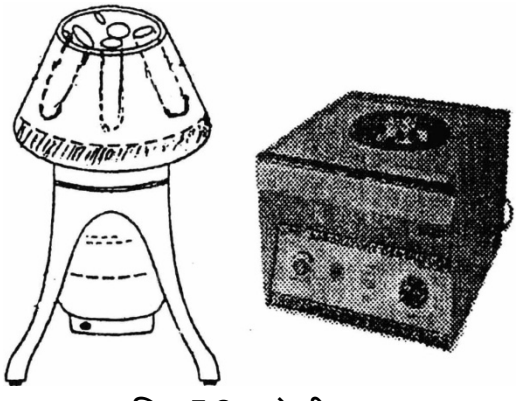

चित्र 5.8 : सेन्ट्रीफ्यूज

प्रयोगशाला में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के लिए उचित वातावरणीय माध्यम उपलब्ध कराकर शुद्ध संवर्धन (pure culture) प्राप्त किया जाता है । इन्हीं वातावरणीय माध्यमों को संवर्धन माध्यम (culture media) कहते हैं । संवर्धन माध्यम में सभी प्रकार के पोषणिक तत्व उपस्थित होने चाहिए जो कि सूक्ष्म जीवाणुओं के प्रजनन तथा वृद्धि के लिए अनुकूलतम हैं, अर्थात् उपयुक्त ऊर्जा स्रोत, संरचनात्मक तत्व एवं वृद्धि कारक उपस्थित हो ।

किसी माध्यम के निर्माण के लिए उसमें विभिन्न रासायनिक पदार्थ डाले जाते हैं, इस आधार पर माध्यम 2 प्रकार के होते हैं -

(1) जटिल अथवा असंश्लेषित माध्यम (Complex or non-synthetic)

(2) परिभाषित अथवा संश्लेषित माध्यम (Defined or synthetic)

वे माध्यम जिसके संगठन पदार्थ ठीक प्रकार से परिभाषित तथा परिष्कृत नहीं होते हैं उन्हें जटिल, अपरिभाषित अथवा असंश्लेषित माध्यम कहा जाता है ।

सूक्ष्मजीवों के संवर्धन के लिए माध्यम का निर्माण (Preperation of nutrient medium for cultivation of micro-organism)

प्रयोग - 1

उद्देश्य : जीवाणुओं के संवर्धन के लिए सामान्य तरल माध्यम (Basic liquid media) का निर्माण।

सिद्धान्त : जीवाणुओं को तरल माध्यम (broth) में संवर्धित किया जा सकता है । इस माध्यम के प्रमुख अपघटक (ingradients) बीफ एकस्ट्रेक्ट (यह कार्बन, नाइट्रोजन, विटामिन व अकार्बनिक लवणों का प्रमुख स्रोत है) तथा पेप्टोन हैं ।

पोषणिक माध्यम/न्यूट्रिएन्ट ब्रॉथ तथा ग्लूकोस ब्रॉथ प्रमुख तरल माध्यम हैं जो कि जीवाणुओं के संवर्धन के लिए उपयोग में लाये जाते हैं ।

पोषणिक ब्रॉथ का संगठन निम्न है :

(1) पेप्टोन = 10g

(2) बीफ = 5g

(3) Nacl = 5g

(4) आसुत जल = 1 लीटर

आवश्यक सामग्री : ग्लूकोज़, पेप्टोन, बीफ एक्सट्रेक्ट, सोडियम क्लोराइड सोडियम हाइड्रॉक्साइड, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल, pH मीटर, हीटर, ऑटोक्लेव, बीकर, कोनिकल फ्लास्क (1 ली.), मापक, रूई, ग्लास रॉड, संवर्धन नलिका आदि ।

प्रणाली : पोषणिक ब्रॉथ (pH = 7.0)

(1) मापे गये पेप्टोन व बीफ एक्सट्रेक्ट को 500 मि ली. आसुत जल में मिलायें ।

(2) ब्रॉथ के सभी संगठकों को जल में गरम करते हुए ग्लास रॉड से चलाते हुए घोल लें ।

(3) आसुत जल मिलाकर माध्यम के आयतन को 1 लीटर बनायें ।

(4) अम्ल अथवा क्षार की सहायता से pH मीटर द्वारा माध्यम के pH को 7 पर लायें ।

(5) प्रत्येक संवर्धन नलिका (culture tube) में 10 मि.ली. ब्रॉथ डालें तथा नलिका के मुख को रूई के बने कॉटन प्लग से ढक दें तथा कागज अथवा एल्यूमिनियम पर लगाकर रबरबैंड से सील कर दें ।

(6) ऑटोक्लेव में 121°C ताप व 15 पाँड दाब पर 15-20 मिनट तक रखें तथा ऑटोक्लेव के ठण्डा होने पर न्यूट्रिएन्ट ब्रॉथ नलिकाओं को निकाल लें तथा सामान्य ताप पर रख लें ।

ग्लूकोज ब्रॉथ (pH = 7.30) : ग्लूकोज़ ब्रॉथ को भी उपरोक्त प्रणाली से बनाया जाता है परन्तु रासायनिक संगठन में अन्तर के कारण माध्यम के pH को 7.3 पर निर्धारित किया जाता है ।

सावधानियाँ :

(1) ब्रॉथ का निर्जमीकरण (sterilization) सावधानीपूर्वक व उचित रूप से करना चाहिए ।

(2) ब्रॉथ का pH उचित निर्धारित करें ।

(3) ब्रॉथ को संरक्षित करने के लिए निम्न ताप का उपयोग करें ।

प्रयोग - 2

उद्देश्य : जीवाणुओं के संवर्धन के लिए सामान्य ठोस माध्यम (solid media) का निर्माण ।

सिद्धान्त : विभिन्न जीवाणुओं के संवर्धन के लिए अलग-अलग माध्यम प्रयोग किये जाते हैं, उनमें से प्रमुख माध्यम निम्न हैं :

ग्लूकोज़ पेप्टोन अगार (GPA) माध्यम, यीस्ट एक्सट्रेन्ट अगार (YEAM) उपरोक्त माध्यम का संगठन निम्न हैं :

(1) ग्लूकोज़ पेप्टोन अगार माध्यम (GPA)

ग्लूकोज़ = 40g
पेप्टोन = 10g
अगार = 15g
आसुत जल = 1 लीटर
pH = 5.6

(2) यीस्ट एक्सट्रेक्ट अगार माध्यम (YEAM)

यीस्ट एकस्ट्रेक्ट = 3g
पेप्टोन = 5g
अगार = 15g
आसुत जल = 1 लीटर
pH = 7.2

(3) पोषणिक अगार माध्यम (NAM)

पेप्टोन = 5g
बीफ एक्सट्रेक्ट = 1.5g
यीस्ट एक्सट्रेक्ट 1.5g
अगार = 15g
सोडियम क्लोराइड = 5g
आसुत जल = 1 लीटर
pH = 7.4

आवश्यक सामग्री : पेट्री प्लेट, परखनली, बुन्सन बर्नर, ग्लूकोज़, पेप्टोन, अगार, यीस्ट एक्सट्रेक्ट, आसुत जल, बीफ एक्सट्रक्ट, pH मीटर, मापक, हीटर तथा ऑटोक्लेव आदि ।

प्रणाली :

(1) उपरोक्त में से जिस माध्यम को बनाना है उसके रासायनिक संगठकों (अगार के अलावा) 500 मि. ली. आसुत जल में मिलायें ।

(2) माध्यम के सभी संगठकों को जल में गर्म करते हुए व ग्लास रॉड चलाते हुए घोल लें ।

(3) आसुत जल मिलाकर माध्यम के आयतन को 1 लीटर बनायें

(4) अम्ल अथवा क्षार की सहायता से pH मीटर द्वारा माध्यम के pH को उचित करें ।

(5) ऑटोक्लेव में 121°C ताप व 15 पाँड दाब पर 15-20 मिनट तक रखें तथा ऑटोक्लेव के ठण्डा होने पर माध्यम को बाहर निकालें ।

(6) निर्जमीकृत (sterlized) माध्यम को सामान्य ताप पर रख लें ।

सावधानियाँ :

(1) माध्यम का निर्जमीकरण (sterlization) सावधानीपूर्वक व उचित रूप से करना चाहिए ।

(2) माध्यम का pH उचित निर्धारित करें ।

(3) माध्यम को संरक्षित करने के लिए निम्न ताप का प्रयोग करें ।

प्रयोग - 3

उद्देश्य : कवक संवर्धन (fungal culture) के लिए अगार स्लान्ट व सामान्य ठोस माध्यम का निर्माण

सिद्धान्त : तरल माध्यम जिसमें सभी पोषणिक तत्व उपस्थित होते हैं, को अगार की सहायता से ठोस बनाया जाता है । अगार-अगार एक पोलीसेकेराइड () है जो कि 3, 6, -एनहाइड्रो - गेलेक्टोस व D- ग्लूकोज़ पाइरेनोज़ से मिल कर बना होता है । अगार को लाल शैवाल (red algae) से प्राप्त किया जाता है । अगार 96°C ताप पर तरल अवस्था में तथा 40-45°C ताप पर ठोस जैली के रूप में परिवर्तित हो जाता है । कवक (Fungi) वृद्धि के लिए पेट्रीप्लेट में ठोस माध्यम (solid media) एक कृत्रिम वातावरण उपलब्ध कराता है । तरल अवस्था में माध्यम को परखनली में डालकर स्लान्टेड अवस्था में रख तापमान 30-35°C तक रखने से अगार माध्यम स्तान्ट प्राप्त किये जाते हैं ।

कवक संवर्धन के लिए प्रयुक्त प्रमुख माध्यम निम्न हैं :

पोटेटो डेक्सट्रोज अगार माध्यम (PDA)

ग्लूकोज़ पेप्टोन अगार माध्यम (GPA)

पोटेटो डेक्सट्रोज अगार माध्यम का रासायनिक संगठन -

छिले हुए आलू = 200

डेक्सट्रोज = 20 g

अगार = 20 g

आसुत जल = 1 लीटर

pH = 6

आवश्यक सामग्री : कोनिकल फ्लास्क, चाकू, मलमल का कपड़ा, आसुत जल, मापक तथा हीटर

प्रणाली :

(1) एक बीकर में 500 मि.ली. आसुत जल लें ।

(2) इस बीकर में 200 gm. छिले हुए व टुकड़े करे हुए आलू लें तथा 30 मिनट तक उबालें।

(3) आलू के टुकड़ों को पानी में मसल लें तथा मलमल के कपड़े से छान लें ।

(4) एक अन्य बीकर में 500 मि. ली. आसुत जल लें तथा इसमें 20 gm. डेक्सट्रोज घोल लें।

(5) आलू सत्व (extract) को व डेक्सट्रोज घोल को एक बीकर में मिला लें तथा इसके आयतन को 1, 000 मि. ली. आसुत जल मिला कर रख लें ।

(6) माध्यम के pH को 6 तक लायें (अम्ल अथवा क्षार की सहायता से) ।

(7) इसमें 20 gm. अगार डाल के हीटर पर गरम कर घोल लें ।

(8) फ्लास्क के मुख को रूई के बने कॉटन प्लग से ढक देवें तथा इस पर कागज लगा कर रबरबैंड से बाँध देवें

(9) ऑटोक्लेव में 121°C ताप व 15 पॉण्ड दाब पर 30 मिनट के लिए रख दें तथा माध्यम के ठण्डा होने पर बाहर निकाल लें ।

(10) उचित ताप पर निर्जमीकृत माध्यम (sterilized media) को रख देवें ।

(11) अगार प्लेट प्राप्त करने के लिए तरल अवस्था में माध्यम को लेमिनार एयर फ्लो की अजर्मीकृत वातावरण में पेट्रीप्लेट में आधा भरने तक डालें ।

(12) अगार स्तान्ट प्राप्त करने के लिए अजर्मित वातावरण में टेस्ट ट्यूब के अन्दर 5-7 मि. ली. माध्यम डालें तथा निजर्मीकृत टेस्ट ट्यूब को 45° कोण व सामान्य ताप (28-30°) पर रख दें जब तक माध्यम ठोस हो जायें ।

(13) अगार स्लान्ट व पेट्रीप्लेट को निम्न ताप पर संग्रहित करें ।

प्रयोगशाला विधियों द्वारा सूक्ष्म जीवाणुओं का पृथक्करण (Isolation of Microganism using Different Laboratory Practices)

प्रयोग - 1

उद्देश्य : वायु में उपस्थित जीवाणुओं को पृथक करना ।

सिद्धान्त : विभिन्न स्रोतों की सहायता से वातावरण (वायु) में जीवाणु उपस्थित होते हैं, इनमें से प्रमुख स्रोत धूल के कण है जिनके साथ सूक्ष्म जीवाणुओं की शुष्क कायिक कोशिकाएँ तथा बीजाणु (spore) उपस्थित होते हैं । वायु में सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या वातावरणीय क्रियाओं पर निर्भर करती हैं । नम वातावरण तथा सामान्य ताप पर अधिक संख्या में जीवाणु उपस्थित होते हैं ।

वायु द्वारा सूक्ष्म जीवाणुओं को प्राप्त करने की मुख्यतया दो विधियाँ हैं :

(1) सेटल्ड प्लेट तकनीक (Sattled plated technique)

(2) स्लिट सेम्पलर तकनीक (Slit sampler technique)

(1) सेटल्ड प्लेट तकनीक : इस विधि द्वारा वायु में उपस्थित विभिन्न जीवाणु जाति को पृथक किया जाता है । इस विधि में निश्चित समय के लिए पेट्रीप्लेट को वायु में खोल दिया जाता है तथा इन्हें उचित ताप व नमी पर 24 घंटे के लिए ऊष्मित (incubate) करा जाता है । 24 घंटे पश्चात् पेट्रीप्लेट में विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं (जो वायु में उपस्थित थे) की कॉलोनी अथवा उपनिवेश उत्पन्न हो जाती है ।

(2) स्लिट सेम्पलर तकनीक : इस तकनीक में एक विशिष्ट उपकरण का प्रयोग किया जाता है जिसे स्लिट सेम्पलर कहा जाता है । इस तकनीक में स्लिट सेम्पलर की सहायता से एक ज्ञात माप में वायु को पेट्रीप्लेट पर प्रवाहित किया जाता है व जीवाणु की कॉलोनी प्राप्त की जाती है ।

प्रयोगशालाओं में अधिकतर सेटल्ड प्लेट तकनीक का उपयोग किया जाता है ।

आवश्यक सामग्री : पेट्रीप्लेट, बीकर, ऑटोक्लेव, संवर्धन माध्यम आदि

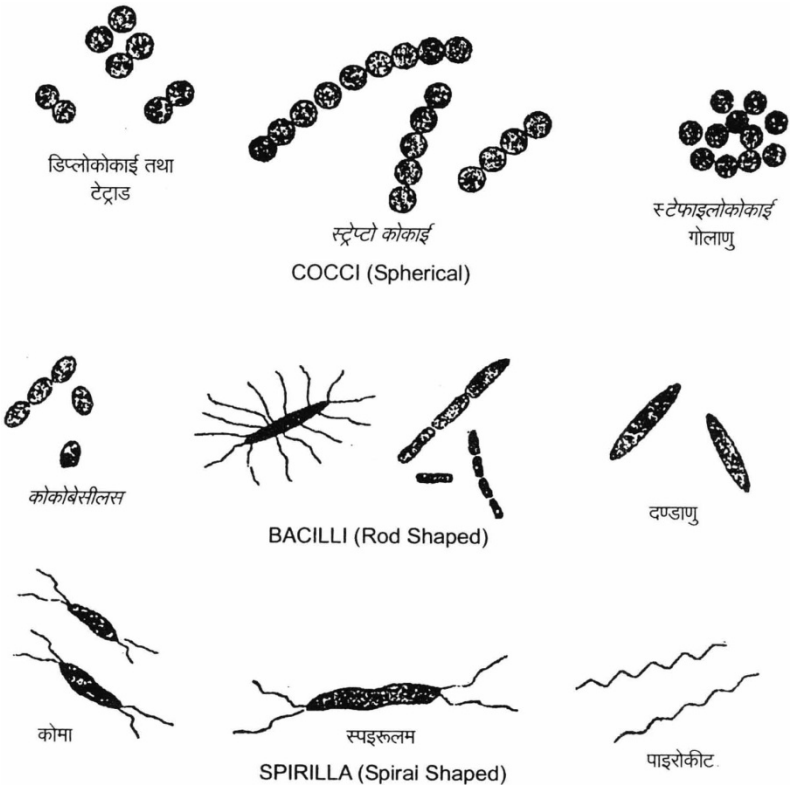

चित्र 5. 9 : विभिन्न प्रकार के जीवाणु

प्रणाली :

(1) लेमीनार एयरफ्लो में ऑटोक्लेव मीडिया को निजर्मीकृत (sterlized) पेट्रीप्लेट में 1/2 भरें तथा ठोस होने तक अजर्मित वातावरण में रखें।

(2) विभिन्न वातावरण में पेट्रप्लेट को 1/2 घंटे के लिए खुला छोड़ दें ।

(3) इन पेट्रप्लेटों को 37°C ताप पर 24-48 घंटे के लिए ऊष्मित (iucubate) करें ।

प्रेक्षण (Observation) : विभिन्न प्रकार की जीवाणु (bacterial) तथा कवक (fungal) कोशिकाएँ प्राप्त की गयी.

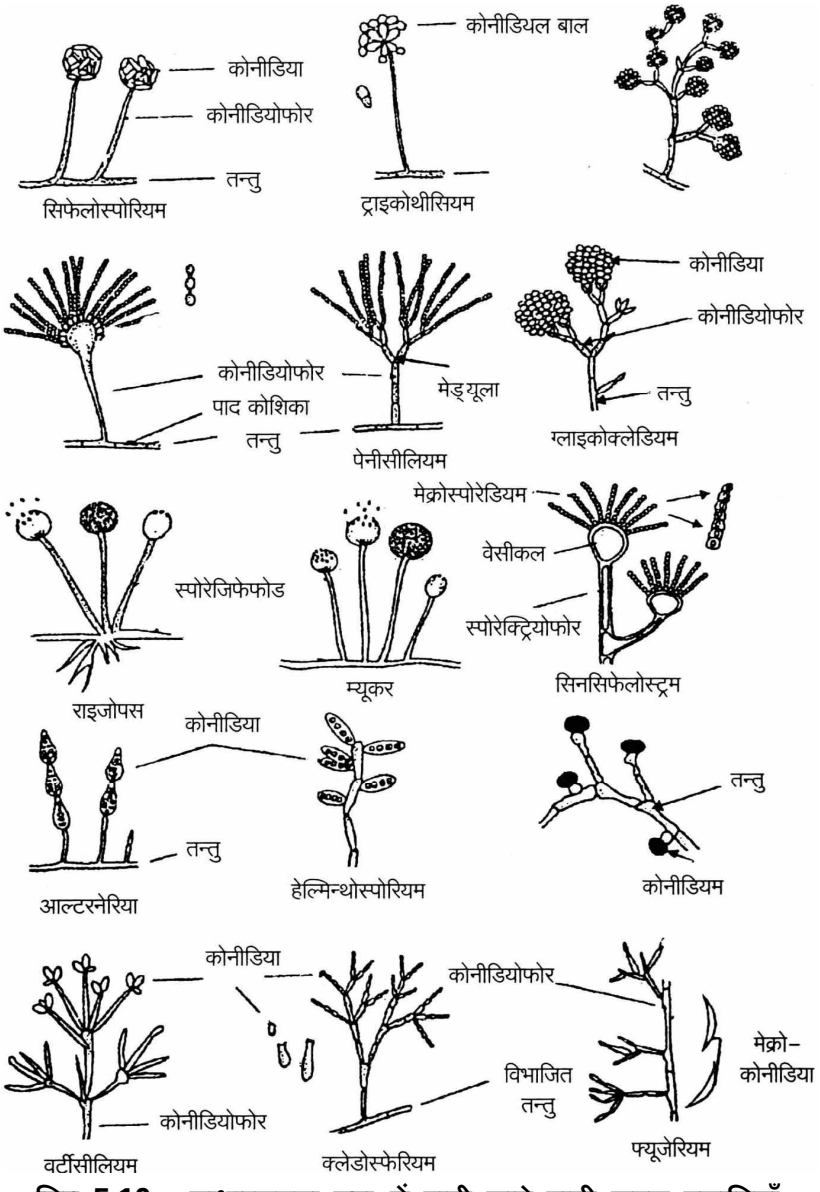

चित्र 5.10 : साधारणतया मृदा में पायी जाने वाली कवक प्रजातियाँ

प्रयोग - 2

उद्देश्य : मृदा में उपस्थित विभिन्न सूक्ष्म जीवाणुओं को पृथक करना ।

सिद्धांत : अधिकतर जीवाणु मृदा की ऊपरी सतह पर उपस्थित होते हैं तथा गहराई बढ़ने के साथ -साथ जीवाणुओं की संख्या में कमी आती है । वह मृदा जिसमें अधिक ऑक्सीजन उपस्थित होती है, में अधिक जीवाणु उपस्थित होते हैं तथा अनॉक्सीकृत मृदा में जीवाणुओं की संख्या कम होती हैं । अगार प्लेट तकनीक की सहायता से मृदा में उपस्थित जीवाणुओं को पृथक किया जा सकता है । इस तकनीक में नापी हुई मात्रा में मृदा को पेट्रीप्लेट पर वितरित किया जाता है तथा उचित ताप व नमी पर ऊष्मित कर सूक्ष्म जीवाणुओं को पृथक किया जाता है ।

आवश्यक सामग्री : मृदा का नमूना (soil sample), आसुत जल पोषणिक अगार माध्यम, ऑटोक्लेव, लेमीनार, एयरफ्लो, पेट्रीप्लेट, स्प्रिट लेम्प, स्प्रेडर आदि ।

प्रणाली :

(1) ऑटोक्लेव किये गये माध्यम को निजर्मीकृत पेट्रीप्लेट में 1/2 भरने तक डालें । यह क्रिया लेमीनार एयरफ्लो में करें तथा माध्यम के ठोस होने तक अजर्मित वातावारण में रखें ।

(2) प्रत्येक पेट्रीप्लेट में 0.06g मृदा वितरित कर दें ।

(3) 38° ताप पर 24-48 घंटे तक पेट्रीप्लेट को ऊष्मित (incubate) करें ।

(4) विभिन्न जीवाणुओं का अध्ययन सूक्ष्मदर्शी में करें ।

प्रयोग - 3

उद्देश्य : जल में उपस्थित विभिन्न सूक्ष्म जीवाणुओं को पृथक करना ।

सिद्धांत : जल में उपस्थित जीवाणुओं की संख्या तथा प्रजाति वहाँ की वातावरणीय अवस्था पर निर्भर करती है । जैसे. प्रकाश, वायु, गहराई, कार्बनिक पदार्थों की मात्रा, विषैले पदार्थ इत्यादि । शुद्ध बहते हुए जल में सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या स्थिर जल की तुलना में अधिक होती हैं ।

निम्न दो विधियों की सहायता से, जल से सूक्ष्म जीवाणुओं को पृथक किया जा सकता है :

(1) अगार प्लेट विधि (agar plate method)

(2) मेम्ब्रेन फिल्टर तकनीक (membrane filter technique)

प्रयोगशालाओं में अधिकतर अगार प्लेट विधि द्वारा जीवाणुओं को पृथक किया जाता हैं ।

आवश्यक सामग्री : जल का नमूना, पोषणिक अगार माध्यम, लेमीनार एयरफ्लो, पेट्रीप्लेट, स्प्रिट लेम्प, स्प्रेडर आदि ।

प्रणाली :

(1) लेमीनार एयरफ्लो में ऑटोक्लेव किये गये माध्यम को निजर्मीकृत (sterlized) पेट्रीप्लेट में 1/2 भरें तथा ठोस होने तक अजर्मित वातावरण में रखें ।

(2) विभिन्न पेट्रप्लेटों में 0.1-1 मि. ली. जल के नमूनों को डालें ।

(3) 24 - 48 घंटे तक 38°C ताप पर पेट्रीप्लेटों को ऊष्पित करें ।

(4) सूक्ष्मदर्शी में विभिन्न जीवाणुओं का अध्ययन करें ।

सावधानियाँ :

(1) माध्यम को पूर्ण रूप से निजर्मीकृत करना चाहिए ।

(2) सम्पूर्ण प्रयोग को अजर्मित (asptic) वातावरण में करना चाहिए ।

(3) उचित ताप व समय के लिए पेट्रीप्लेटों को ऊष्मित (iucubate) करना चाहिए ।

(4) प्रेक्षण उचित तरीके से करना चाहिए ।

शुद्ध संवर्धन प्राप्त करने की विधियाँ (Techniques for isolation of Pure Culture)

सामान्यत: जीवाणु एक मिश्रित समूह में पाये जाते हैं, अत : इन्हें एकल तथा शुद्ध रूप (single and pure) में प्राप्त करना अत्यन्त मुश्किल है । जीवाणुओं की संरचनात्मक तथा जैविक लक्षणों का अध्ययन करने के लिए शुद्ध रूप में प्राप्त करना आवश्यक है इस क्रिया को शुद्ध संवर्धन कहा जाता है । शुद्ध संवर्धन प्राप्त करने की विभिन्न विधियाँ हैं जिनका विवेचन निम्न हैं

प्रयोग - 1

उद्देश्य : स्ट्रीक प्लेट तकनीक की सहायता से सूक्ष्म जीवाणुओं को पृथक करना

सिद्धांत : स्ट्रीक प्लेट तकनीक को सर्वप्रथम लोफलर तथा गेफकै ने विकसित किया था । यह तकनीक शुद्ध संवर्धन (pure culture) प्राप्त करने की सर्वाधिक प्रायोगिक विधि है । स्ट्रीक प्लेट तकनीक को 5 विभिन्न प्रकार से किया जा सकता हैं -

(1) वितत रेखा प्लेट विधि (continous streak plate technique)

(2) वृतुल रेखा प्लेट विधि (Circular streak plate technique)

(3) अरीय रेखा प्लेट विधि (Radial streak plate)

(4) चतुध्रुवी रेखा प्लेट (quadrat streakplate technique)

(5) टी रेखा प्लेट विधि (T- Streakplate technique)

आवश्यक सामग्री : पोषणिक अगार माध्यम, ऑटोक्लेव, लेमीनार एयरफ्लो, ऊष्मक (iucubator), पेट्रीप्लेट, स्प्रिट लेम्प इतियादि ।

प्रणाली :

(1) लेमीनार एयरफ्लो में ऑटोक्लेव किये गये माध्यम को निजर्मित पेट्रीप्लेट में डालें (10-15 मि. ली.) तथा माध्यम के ठोस होने तक पेट्रीप्लेट को अजर्मित (aseptic) वातावरण में रखें ।

(2) इनोकुलेटिंग लूप को स्प्रिट से साफ कर लेम्प की सहायता रक्त लाल होने तक गर्म करें, जिससे यह पूर्ण रूप से निजर्मित हो जायें ।

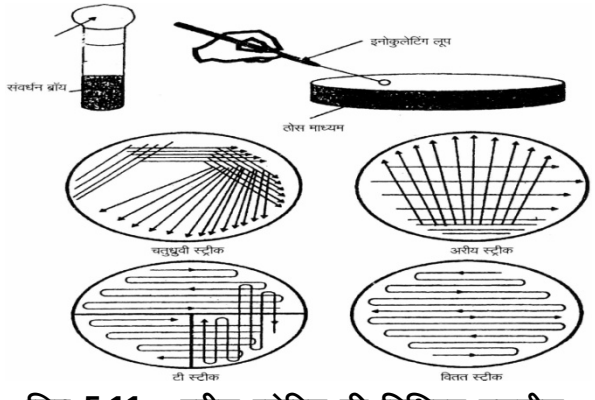

चित्र 5.11 : स्ट्रीक प्लेटिग की विभिन्न तकनीक

(3) मिश्रित संवर्धनकी परखनली से इनोकुलेटिंग लूप की सहायता से एक लूप संवर्धन लें तथा इसे पेट्रीप्लेट पर उपरोक्त में से किसी भी 1 विधि द्वारा स्ट्रीक करें ।

(4) पेट्रीप्लेट को 37° ताप पर 24-48 घंटे तक ऊष्मित (iucubate)करें ।

(5) 48 घंटे बाद पेट्रीप्लेट पर सूक्ष्म जीवाणुओं की वृद्धि का अध्ययन करें ।

(6) सूक्ष्म दर्शी की सहायता से सूक्ष्म जीवाणुओं का अध्ययन करें ।

परिणाम : प्रारम्भिक स्ट्रीक में सूक्ष्म जीवाणुओं की सघन कॉलोनी प्राप्त होती है तथा जैसे -जैसे स्ट्रीक क्षेत्र बढ़ता है सूक्ष्म जीवाणुओं की एकल तथा वितरित कॉलोनी प्राप्त होती है ।

इस प्रकार हम स्ट्रीक प्लेट तकनीक द्वारा शुद्ध संवर्धन प्राप्त कर सकते हैं ।

प्रयोग - 2

उद्देश्य : स्प्रेड प्लेट तकनीक की सहायता से सूक्ष्म जीवाणुओं का पृथक्करण ।

सिद्धांत : तनु तथा मिश्रित कॉलोनी से सूक्ष्म जीवाणुओं का पृथक्करण करने के लिए स्प्रेड प्लेट तकनीक का प्रयोग किया जाता है । इस तकनीक में सूक्ष्म जीवाणुओं की मिश्रित जनसंख्या (mixed population) को ठोस अगार माध्यम पर डाल दिया जाता है तथा L-आकार के स्प्रेडर की सहायता से इस निलंबित संवर्धन (suspension culture) को पूर्ण पेट्रीप्लेट पर वितरित कर दिया जाता है । इस तकनीक का मुख्य सिद्धांत है कि जब मिश्रित कॉलोनी को स्प्रेडर की सहायता से पेट्रीप्लेट पर वितरित किया जाता है तो कुछ एकल कॉलोनी (single colony) निश्चित दूरी पर वितरित हो जाती हैं ।

प्रणाली :

(1) ऑटोक्लेव किये हुए माध्यम को निजर्मीकृत (sterlized) पेट्रीप्लेट में (10-15 मि.ली.) डालें तथा ठोस होने तक अजर्मित (aseptic) वातावरण में रखें ।

(2) 0.2-2 मि. ली. निवेशक (inoculum) लें तथा इसे पेट्रीप्लेट के मध्य में डालें ।

(3) काँच के स्प्रेडर अथवा वितरक को स्प्रिट से साफ कर स्प्रिट लेम्प पर गर्म करें जिससे स्प्रेडर पूर्ण रूप से निजर्मित (sterlize) हो जायें ।

(4) स्प्रेडर के ठण्डा होने पर पेट्रीप्लेट के लिड (ढक्कन) को हटा कर स्प्रेडर की सहायता से इनोकुलम को पूर्ण रूप से वितरित करें । (यह क्रिया स्प्रिट लेम्प के सामने लेमीनार एयरफ्लो के अन्दर अजर्मित वातावरण में करें ।)

(5) पेट्रीप्लेट का लिड बंद कर दें तथा 37°C ताप पर 24-48 घंटे के लिए ऊष्मक (incubator) में ऊष्मित (incubate) करें।

(6) 48 घंटे बाद पेट्रीप्लेट पर जीवाणुओं की वृद्धि का अध्ययन करें तथा सूक्ष्मदर्शी में जीवाणु कोशिका का अध्ययन करें ।

आवश्यक सामग्री : पोषणिक अगार माध्यम, ऑटोक्लेव, लेमीनार एयरफ्लो, इन्क्युबेटर, इनोकुलेटिंग लूप, पेट्रीप्लेट, परखनली आदि ।

प्रयोग - 3

उद्देश्य : पोर प्लेट तकनीक की सहायता से सूक्ष्म जीवाणुओं का पृथक्करण ।

सिद्धांत : इस तकनीक का विकास प्रसिद्ध जीवाणुविज्ञ रॉबर्टकॉव की प्रयोगशाला में किया गया था । इस तकनीक में सीरियली डाइल्यूट किये गये इनॉकुलम अथवा निवेशक को पेट्रीप्लेट में डाला जाता है तथा इस पर माध्यम (10-15 मि. ली.) उड़ेल दिया जाता है व पेट्रीप्लेट को हिला कर माध्यम को इनाकुलम में मिला दिया जाता है तथा इसे ठोस (solidizy) कर दिया जाता है । उचित उष्मत (incubation) के पश्चात् पेट्रीप्लेट में एकल कॉलोनी की वृद्धि परीक्षण करते हैं ।

पोर प्लेट तकनीक का प्रयोग तरल माध्यम में उपस्थित सूक्ष्म जीवाणुओं की सख्या व प्रकार को निर्धारित करने के लिए किया जाता है । जैसे : मूत्र, मल, दुग्ध, ब्रॉथ संवर्धन इत्यादि ।

आवश्यक सामग्री : पोषणिक अगार माध्यम, ऑटोक्लेव, लेमीनार एयरफ्लो, इन्क्युबेटर, इनोकुलेटिंग लूप, पेट्रीप्लेट, परखनली, स्प्रिट लेम्प, मार्कर आदि ।

प्रणाली :

(1) ऑटोक्लेव किये हुए पोषणिक अगार माध्यम को अजर्मित परखनली (3 परखनलियों) में ले तथा उन पर I, II, III चिन्हित करें।

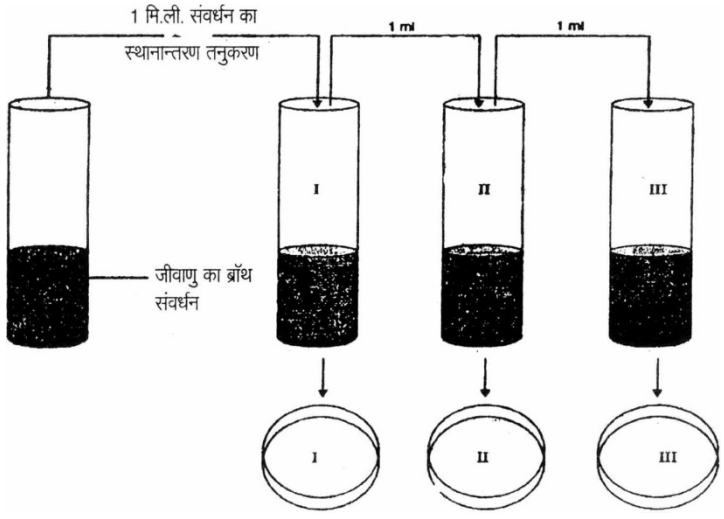

चित्र 5. 12 : पोर प्लेट तकनीक द्वारा जीवाणुओं का शुद्ध संवर्धन

(2) परखनली 1 में एक लूप इनॉकुलम डालें तथा इसे उचित रूप से मिश्रित करें । परखनली 1 से 1 लूप इनॉकुलम परखनली II में डाल अच्छी तरह हिलावें तथा परखनली II से 1 लूप इनॉकुलम परखनली III में मिलायें ।

(3) तीनों परखनलियों को गर्म वाटर ब्राथ में रख अच्छी तरह घुमावें ताकि इनॉकुलम उचित रूप से माध्यम में घुल जायें ।

(4) तीन निजर्मित पेट्रीप्लेट पर I, II, III अंकित करें तथा परखनली I, II, III का माध्यम क्रमश : पेट्रीप्लेट I, II, III में डालें, माध्यम को ठोस होने तक अजर्मित वातावरण में रखें ।

(5) पेट्रीप्लेट को 37°C ताप पर 24-48 घंटे के लिए ऊष्मित करें ।

(6) 48 घंटे बाद पेट्रीप्लेट में सूक्ष्मजीवाणु की वृद्धि, आकार व (pigmentation) वर्णकता का अध्ययन करें तथा सूक्ष्मदर्शी में कोशिका प्रकार का अध्ययन करें ।

परिणाम : प्रारम्भिक पेट्रीप्लेट में सघन सूक्ष्म जीवाणु कॉलोनी प्राप्त होती है तथा बाद में जीवाणु की पृथक कॉलोनी प्राप्त होती है।

प्रयोग - 4

उद्देश्य : क्रमिक तनुकरण अगार प्लेट तकनीक (serial dilution agar plate technique) द्वारा सूक्ष्म जीवाणुओं का पृथक्करण ।

सिद्धांत : इस तकनीक द्वारा दिये गये नमूने में सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या को ज्ञात किया जाता है अत : इसे वायेबल प्लेट काउंट तकनीक (viable plate count technique) भी कहते हैं । इस तकनीक के अनुसार जब माध्यम पर सूक्ष्म जीवाणु के जीवित भाग (live propoagule) को वितरित किया जाता है तो उससे सम्पूर्ण कॉलोनी का निर्माण हो जाता है । इस तकनीक में मृदा अथवा जल (दिये गये नमूने) के निश्चित माप को (10 ग्रा./10 मि.ली. अथवा 1 ग्रा./ 1 मि ली.) को निर्जमित आसुत जल के ज्ञात आयतन (90 मि.ली. अथवा 9 मि. ली.) में मिला दिया जाता है जिससे 100 मि. ली. अथवा 10 मि ली. निलंबन (suspension) प्राप्त होता है । इस सस्पेंशन अथवा निलंबन का 10 मि. ली. अथवा 1 मि. ली. भाग अन्य फ्लास्क में डाल दिया जाता है जिसमें 90 मि. ली. निर्जित आसुत जल मिला देते हैं । इस प्रकार क्रमिक तनुकरण श्रेणी बनाई जाती है । (serial dilution series) जो क्रमश : 10^{-2}, 10^{-3}, 10^{-4}, 10^{-5}..... तनुता होती है । इस तनुत श्रेणी को ठोस माध्यम पर (मि. ली.) वितरित किया जाता है । तनु सस्पेंशन से अधिक वितरित कॉलोनी प्राप्त होती है व सान्द्र सस्पेंशन से सघन कॉलोनी प्राप्त होती है ।

आवश्यक सामग्री : मृदा अथवा मिश्रित जीवाणु संवर्धन, अथवा जल पोषणिक अगार माध्यम, ऑटोक्लेव, लेमीनार एयरफ्लो, परखनली, पेट्रीप्लेट, स्प्रिट लेम्प, स्प्रेडर आदि ।

प्रणाली :

(1) 1 ग्राम मृदा अथवा 1 मि. ली. जल का नमूना लें तथा इसे 90 मि. ली. निजर्मित आसुत जल में मिलाएँ, फ्लास्क को 10 मिनट तक अच्छी तरह हिलाएँ ताकि समाँगी (homologous) सस्पेंशन प्राप्त हो जायें ।

(2) 1 मि. ली. सस्पेंशन को फ्लास्क 1 से फ्लास्क 2 में डालें जिसमें 9 मिली. निजर्मित आसुत जल है इस प्रकार 10^{-2} डाइइल्यूटन फ्लास्क 2 से 1 मि. ली. सस्पेंशन फ्लास्क 3 (जिसमें 9 मि. ली. निजर्मित आसुत जल है) में डालें तथा 10^{-3} डाइल्यूटन प्राप्त करें । इस प्रकार 10^{-4}, 10^{-5}.....10^{-10} तक डाइल्यूटन बनायें ।

(3) ऑटोक्लेव किये हुए माध्यम को निजर्मित पेट्रीप्लेट में डालें (10-15 मि. ली.) तथा ठोस होने तक अजर्मित वातावरण में रखें ।

(4) पेट्रीप्लेट पर 10^{-1}, 10^{-2}, 10^{-3}.....10^{-10} अंकित करें ।

(5) 10^{-1} पेट्रीप्लेट में फ्लास्क 1 से 0.1 मि. ली. सस्पेशंन डालें, 10^{-2} पेट्रीप्लेट में फ्लास्क 2 से 1 मि. ली. सस्पेंशन डालें तथा क्रमश: प्रक्रिया 10-10 पेट्रीप्लेट तक दोहरायें ।

(6) स्प्रेडर को एल्कोहल से साफ कर स्प्रिट लेम्प पर गर्म कर निजर्मित करें तथा ठण्डा होने दें।

(7) स्प्रेडर की सहायता से पेट्रीप्लेट पर सस्पेंशन को पूर्ण रूप से वितरित करें । (यह क्रिया लेमीनार एयरफ्लो में स्प्रिट लेम्प के सामने करें ताकि अजर्मित वातावरण उपलब्ध हो ।)

(8) पेट्रीप्लेट को 24-48 घंटे के लिए 37°C ताप पर ऊष्पित करें तथा उचित समय पश्चात् पेट्रीप्लेट का प्रेक्षण करें ।

प्रेक्षण :

जैसे-जैसे सस्पेंशन का तनुकरण किया जाता है, जीवाणुओं की वितरित कॉलोनी प्राप्त होती हैं। जीवाणुओं के पृथक्करण में प्रयुक्त विभिन्न तकनीकों में निम्न सावधानियाँ रखनी चाहिए :

(1) माध्यम (media) को उचित रूप से बनावें तथा निजर्मित करें ।

(2) पूर्ण रूप से अजर्मित वातावरण में तकनीक प्रयुक्त करनी चाहिए ।

(3) इनोकुलेशन अथवा निलंबन सावधानीपूर्वक करना चाहिए ।

(4) उचित ताप व समय के लिए ही पेट्रीप्लेट को ऊष्मित करना चाहिए ।

(5) प्रेक्षण सावधानीपूर्वक करना चाहिए ।

(6) ऊष्मन के लिए पेट्रीप्लेट को प्रतिलोमित (inverted) अवस्था में रखना चाहिए अगर सीधी पेट्रीप्लेट रख दी जायेगी तो जल वाष्प माध्यम पर गिरने से सूक्ष्म जीवाणु कॉलोनी विसरित (diffuse) हो जायेगी ।

(7) ऑटोक्लेव किये हुए माध्यम को तकनीक प्रयोग करने के 24 घंटे पहले ही पेट्रीप्लेट में डाल देना चाहिए ।

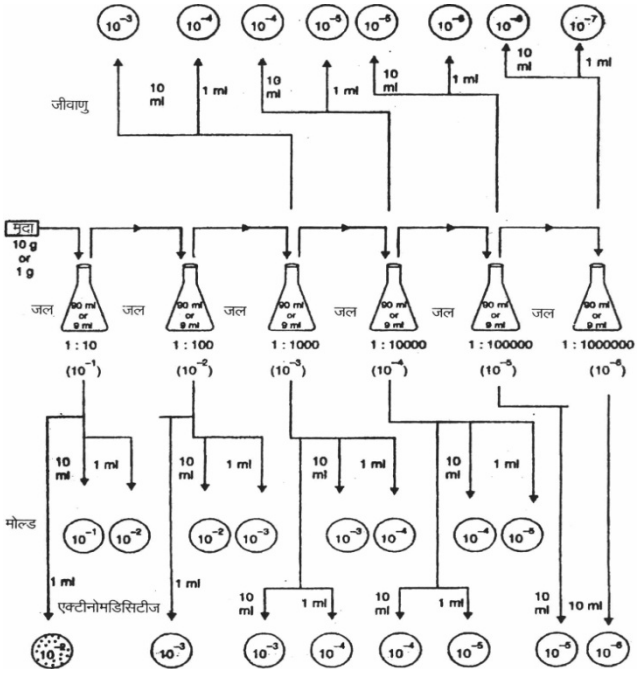

चित्र 5. 13 : क्रमिक तनुकरण अगार प्लेट तकनीक की सहायता से शुद्ध संवर्धन

सूक्ष्म जीवाणुओं का अभिरंजन (Bacterial Staining)

विभिन्न सूक्ष्म जीवाणुओं को सूक्ष्मदर्शी में नहीं देखा जा सकता हैं क्योंकि वे पारदर्शी तथा अत्यंत सूक्ष्म होते हैं तथा तरल माध्यम में दिखाई नहीं देते हैं इसलिए सूक्ष्म जीवाणुओं का अध्ययन करने के लिए अभिरंजित किया जाता है । वे रासायनिक पदार्थ जिससे जीवाणुओं का अभिरंजन किया जाता है, अभिरंजक कहलाते हैं । अभिरंजक दो प्रकार के होते हैं. प्राकृतिक तथा कृत्रिम (synthetic) रासायनिक रूप से अभिरंजक वे पदार्थ होते हैं जिनमें एक वर्णमूलक (chromophore) तथा एक वर्णवर्धक (auxotroph) मूलक बेन्जीन वलय से जुड़े रहते हैं । अभिरंजक अम्लीय, क्षारीय अथवा उदासीन हो सकते हैं ।

अभिरंजन विधियाँ दो प्रकार की होती हैं :

(1) सामान्य अभिरंजन (simple staining)

(2) अवकल सर्वग्राही अभिरंजन (differential staining)

सामान्य अभिरंजन में 1 अभिरंजक का प्रयोग होता है तथा अवकल अभिरंजन में 2 या 2 से अधिक अभिरंजकों का उपयोग होता है।

जीवाणुओं के अभिरंजन के लिए विभिन्न तकनीक :

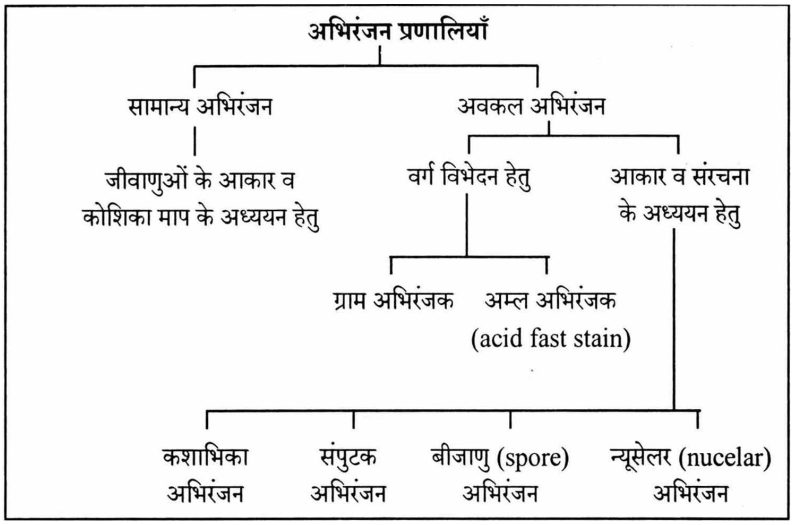

प्रयोग - 1

उद्देश्य : जीवाणुओं का सामान्य अभिरंजन ।

सिद्धांत : इस तकनीक का प्रयोग जीवाणु कोशिका का आकार, संरचना माप तथा कोशिका स्थापन ज्ञात करने के लिए किया जाता है ।

आवश्यक सामग्री :

जीवाणु संवर्धन, अभिरंजक (मिथाइलीन ब्लू), काँच की स्लाइड, इनॉकुलेटिंग लूप, स्प्रिट लेम्प, फिल्अर पेपर आदि ।

प्रणाली :

(1) काँच की स्लाइड को स्प्रिट से साफ कर शुष्क बनाएँ ।

(2) स्लाइड पर जीवाणु संवर्धन की एक बूँद डालें तथा दूसरी स्लाइड की सहायता से इस संवर्धन को फैलाएं ताकि वह पूरी स्लाइड पर समान रूप से वितरित हो । बनाये गये स्मेयर को स्प्रिट लेम्प पर 1-2 बार घुमाये ताकि जीवाणु कोशिका स्लाइड पर स्थापित हो जायें ।

(3) इस स्लाइड पर अभिरंजक डालें तथा 1-2 मिनट बाद आसुत जल से धो लें ।

(4) फिल्टर पेपर की सहायता से स्लाइड का अतिरिक्त जल सुखा लें ।

(5) सूक्ष्मदर्शी में कोशिका प्रकार व संरचना का अध्ययन करें ।

प्रयोग - 2

उद्देश्य : दिया गया जीवाणु संवर्धन (Bacterial culture) ग्राम ग्राही (G + ve) है अथवा ग्राम अग्राही (G - ve) है ।

अभिरंजक	ग्राम ग्राही	ग्राम अग्राही
स्नेयर	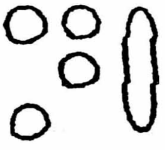 रंगहीन	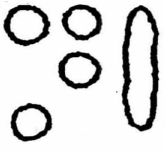 रंगहीन
क्रिस्टल वायलेट 20 सैकण्ड	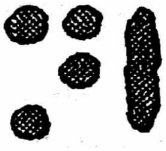 बैंगनी	बैंगनी
ग्रास आयोडिन (1 मिनट)	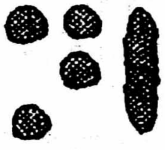 बैंगनी	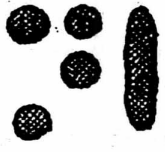 बैंगनी
इथाइल एल्कोहल (10–20 सैकण्ड)	बैंगनी	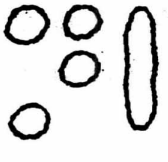 रंगहीन
सैफरेनिन (20 सैकण्ड)	बैंगनी	लाल – गुलाबी

चित्र 5.14 : ग्राम अभिरंजन विधि के अन्तर्गत विभिन्न चरणों में जीवाणु कोशिकाएँ

सिद्धांत : डेनमार्क के प्रसिद्ध चिकित्सक क्रिश्चियन ग्राम (Chrristain Gram 1984) ने प्रसिद्ध एवं सर्वग्राही अभिरंजन विधि (staining method) प्रस्तुत की थी । इस विधि द्वारा उन्होने जीवाणुओं को दो भागों में विभाजित किया था -

(1) ग्राम ग्राही अथवा ग्राम धनात्मक (G + ve) : वे जीवाणु जो ग्राम के अभिरंजन (Crystal violet) से अभिरंजित (stain) कर एल्कोहल से धोने पर भी अभिरंजित बने रहते है।

(2) ग्राम अग्राही अथवा ग्राम ऋणात्मक (G - ve) : जीवाणुओं का वह समूह जो ग्राम अभिरंजन से अभिरंजित कर एल्कोहल से धोने के पश्चात् विरंजित (destain) हो जाता है ग्राम अग्राही कहलाते हैं ।

आवश्यक सामग्री : जीवाणु संवर्धन, स्लाइड, स्प्रिट लेम्प, इनोकुलेशन लूप, बीकर, ग्राम आयोडिन, क्रिस्टल वायलेट, सेफरनिन, इथाइल एल्कोहल आसुत जल, वाशबॉटल, सूक्ष्मदर्शी आदि ।

प्रणाली :

(1) स्लाइड पर जीवाणु संवर्धन का स्मेयर बनाइये तथा स्मेयर इस तरह से बने कि वह पूरी स्लाइड पर समान रूप से वितरित हो तथा अधिक सघन न हो ।

(2) इस स्मेयर पर क्रिस्टल वायलेट अभिरंजन डालें तथा 20 सेकण्ड तक रखें । यह अभिरंजन ग्राम ग्राही व ग्राम अग्राही, दोनों तरह के जीवाणुओं को बैंगनी रंग कर देता है ।

(3) अभिरंजन को आसुत जल की सहायता से धो लें तथा अतिरिक्त जल को सुखा लें ।

(4) स्मेयर पर ग्राम आयोडिन डालें तथा 1 मिनट तक छोड़ दें । यहाँ ग्राम आयोडिन एक रंग बंधक (mordant) की तरह कार्य करता है जो कि क्रिस्टल वायलेट के साथ मिलकर ग्राम ग्राही जीवाणुओं में एक अघुलनशील संगठक (compound) बनाता है जब कि ग्राम अग्राही जीवाणुओं में नहीं बन पाता है ।

(5) अतिरिक्त ग्राम आयोडिन को हटाकर स्मेयर को 95% इथाइल एल्कोहल से धो लें व इसमें 15-20 सेकण्ड के लिए छोड दें।

(6) इथाइल एल्कोहल एक विरंजक का कार्य करता है तथा इसकी गतिविधि को रोकने के लिए स्लाइड को आसुत जल से धो लें।

(7) अब स्मेयर को सेफ्रेनिन में डुबो दें तथा 20 सेकण्ड के बाद स्लाइड को आसुत जल से धोकर सूक्ष्मदर्शी में देखें ।

प्रेक्षण (Observations) : ग्राम ग्राही जीवाणु सूक्ष्मदर्शी में बैंगनी रंग के दिखाई देंगे तथा ग्राम अग्राही जीवाणु लाल रंग के दिखाई देंगे ।

दुग्ध गुणवत्ता का अध्ययन (Milk Quality)

सूक्ष्म जीवाणु सर्वव्यापी होते हैं तथा वातावरण में वितरित होते हैं, हालाँ कि वातावरण में कुछ सूक्ष्म जीवाणु अनावश्यक होते हैं परन्तु कुछ सूक्ष्मजीवाणुओं की जैविक क्रियाएँ अत्यन्त आवश्यक होती हैं, जैसे सेकेरोमाइसिस सेरेविसी (यीस्ट) की किण्वन क्रिया से एल्कोहॉलिक उत्पाद प्राप्त किये जाते हैं । पेनीसीलियम तथा अन्य कवकों की जैविक क्रियाओं द्वारा

पेनीसिलिन जैसे एन्टीबॉयोटिक का उत्पादन किया जाता है । सूक्ष्म जैविकी में जीवाणुओं की जैविक क्रियाओं द्वारा खाद्य पदार्थों, दुग्ध, जल व अन्य उत्पादों में विकृति (spoilage) का अध्ययन किया जाता है ।

प्रयोग - 1

उद्देश्य : मिथाइलीन ब्ल्यू रिडक्टेरज टेस्ट (MBRT) की सहायता से दुग्ध गुणवत्ता का अध्ययन।

सिद्धांत : अपरिष्कृत (कच्चे) दुग्ध में अधिक संख्या में सूक्ष्म जीवाणु उपस्थित होते हैं जैसे : इश्चेरेशिया कोलाईव स्ट्रेप्टीकोकस लेक्टिस । ये सूक्ष्म जीवाणु दुग्ध को निम्न (खराब) प्रोसेसिंग के सूचक होते हैं । जीवाणु दुग्ध में उपस्थित ऑक्सीजन का उपयोग कर, अपघटित वातावरण उत्पन्न करते हैं । अपघटन प्रयोग (Reductase test) का मुख्य आधार जीवाणुओं द्वारा दुग्ध में ऑक्सीकरण - अपचयन अभिक्रिया (Oxidation reduction reactions) हैं ।

इस प्रयोग में दूध में मिथाइलीन ब्ल्यू डाला जाता है जिसका रंग दुग्ध में उपस्थित ऑक्सीजन सान्द्रता पर निर्भर करता है । ऑक्सीकृत अवस्था में मिथाइलीन ब्ल्यू नीले रंग का होता है तथा अनॉक्सीकृत (अपचयित) अवस्था में यह सफेद अथवा ल्यूको रंग का हो जाता है ।

मिथाइलीन ब्ल्यू के रंग में परिवर्तन की गति, दुग्ध में उपस्थित जीवाणुओं की संख्या पर निर्भर करती है, अगर अधिक संख्या में सूक्ष्म जीवाणु उपस्थित हैं तो रंग परिवर्तन शीघ्र हो जायेगा क्योंकि इस स्थिति में ऑक्सीजन सान्द्रता शीघ्र गिर जाती है व अपचयित वातावरण उत्पन्न हो जाता है । उच्च गुणवत्ता वाले दुग्ध में मिथाइलीन ब्ल्यू का अपचयन 6-7 घंटे में होता है तथा निम्न गुणवत्ता वाले दूध में अपचयन 30 मिनट में ही शुरू हो जाता है ।

आवश्यक सामग्री :

दूग्ध का नमूना, मिथाइलीन ब्ल्यू विलयन, निजर्मीकृत परखनली निजर्मीकृत पिपेट, वाटरबाथ, आसुत जल, स्प्रिट लेम्प ।

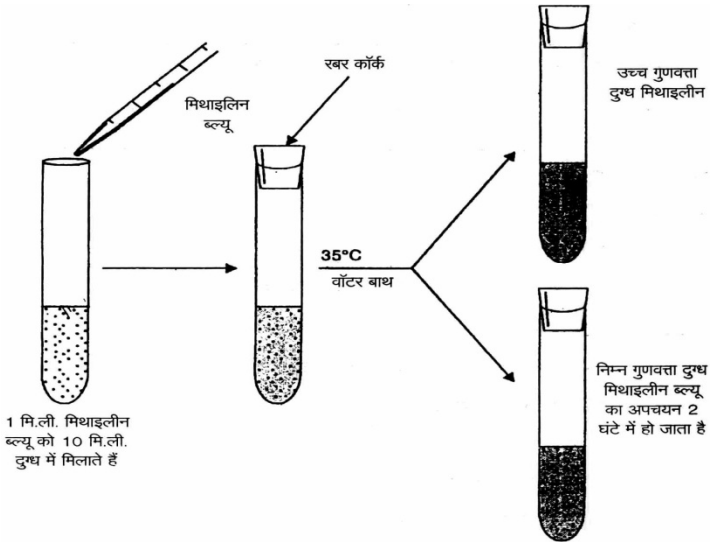

चित्र 5.15:

कार्य प्रणाली :

(1) 1 ग्राम मिथाइलीन ब्ल्यू 250 मि.ली. आसुतजलमें डालकर मिथाइलीन ब्ल्यू विलयन बनायें।

(2) दुग्ध को एक बीकर में अच्छी तरह मिलायें तथा निजर्मित परखनली में 10 मि.ली. डालें । (विभिन्न नमूनों को अलग- अलग परखनली में डालें ।

(3) प्रत्येक परखनली में 1-1 मि.ली. मिथाइलीन ब्ल्यू विलयन डालें ।

(4) 2-3 बार परखनली को हिलाकर विलयन तथा दुग्ध को मिला लें ।

(5) परखनलियों को 37°C ताप पर 6 घंटे के लिए ऊष्मित करें ।

(6) 10 मि.ली. उबले हुए दुग्ध को 1 मि.ली. मिथाइलीन ब्ल्यू के साथ मिलाकर कन्ट्रोल बनायें।

(7) प्रत्येक 30 मिनट में परखनलियों का निरीक्षण करें ।

प्रेक्षण तालिका

मिथाइलीन ब्ल्यू के अपचयन में लगा समय	दुग्ध प्रकार
30-120 मिनट	निम्न गुणवत्ता
121-360 मिनट	सामान्य गुणवत्ता
361-480 मिनट	उच्च गुणवत्ता

सावधानी : सदैव अपरिष्कृत दुग्ध का प्रयोग कर दुग्ध गुणवत्ता का निर्धारण करना चाहिए ।

अभ्यासार्थ प्रश्न

1. ऑटोक्लेव का सिद्धांत समझाइये ।
2. इन्क्यूबेटर तथा ऑवन में अन्तर बताओ?
3. वीर लेम्बर्ट सिद्धांत क्या है?
4. ग्राम ग्राही तथा ग्राम अग्राही बेक्टीरिया की कोशिका भित्ति मे अन्तर समझाइये ।
5. सूक्ष्मजीवों के शुद्ध संवर्धन की विभिन्न विधियाँ बताइये ।
6. संवर्धन माध्यम से क्या तात्पर्य है? माध्यम को ठोस बनाने के लिए किस पदार्थ का प्रयोग किया जाता है ।
7. स्ट्रीक प्लेट तकनीक की विभिन्न विधियाँ समझाइये ।
8. सीरियल डाइल्यूशन तकनीक का सिद्धांत समझाइये ।
9. विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं का उल्लेख कीजिए ।
10. सूक्ष्मविज्ञान प्रयोगशाला के विभिन्न अवयवों की विवेचना कीजिए ।

इकाई 6 : संग्रहालय निदर्श का अध्ययन (Study of Museum Specimens)

इस इकाई में हम संग्रहालय में उपस्थित विभिन्न संघों के प्रतिनिधि प्राणियों के वर्गीकरण व लक्षणों का अध्ययन करेंगे ।

संघ: प्लेटिहैल्मिन्थीज (Phylum: Platyhelmenthes)

टीनिया (फीता कृमि) [Taenia (Tape worms)]

फाइलम (Phylum) - प्लेटिहैल्मिन्थीज

1. चपटे (fleat), द्विपार्श्व सम्मित (bilateral), त्रिस्तरीय (triploblastic)
2. देहगुहा का अभाव (Acoelmate)
3. चूषक अथवा हुक दोनों उपस्थित

क्लास (Class) - सेस्टोडा (Cestoda)

1. खण्ड युक्त (segmented), अन्तःपरजीवी
2. शरीर स्कॉलेक्स (scolex) तथा कई प्रोग्लोटिड (proglottids) का बना होता है ।

गण (Order) टिनॉइडिया (Taenoidea)

स्कॉलेक्स पर चार चूषक होते हैं ।

श्रेणी (genus) टीनिया सालियन (Taenia solium)

आवास एवं प्रकृति (Habit & Habitat)

यह मनुष्य की आँत में अन्त: परजीवी के रूप में पाया जाता है ।

वितरण (Distribution)

यह उन देशों में पाया जाता है जहाँ अधकच्चा सूअर का गोश्त खाया जाता है । प्राय: यह भारत, चीन, यूगोस्लाविया व जर्मनी में पाया जाता है।

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. सामान्यत: यह पोर्क फीता कृमि (pork tapeworm) के नाम से जाना जाता है ।
2. यह अन्त: परजीवी प्राणी है, जो कशेरुकियों की आहारनाल को दूषित करता है ।
3. शरीर स्कौलेक्स (scolex), गर्दन (neck) तीन प्रकार के देहखण्डों क्रमश: अविकसित (immature), विकसित (mature) तथा अतिविकसित (gravid) में विभाजित होता है ।
4. शरीर का अग्र भाग स्कौलेक्स कहलाता है यह गोलाकार होता है तथा इसके पार्श्व में 4 चूषक होते है ।

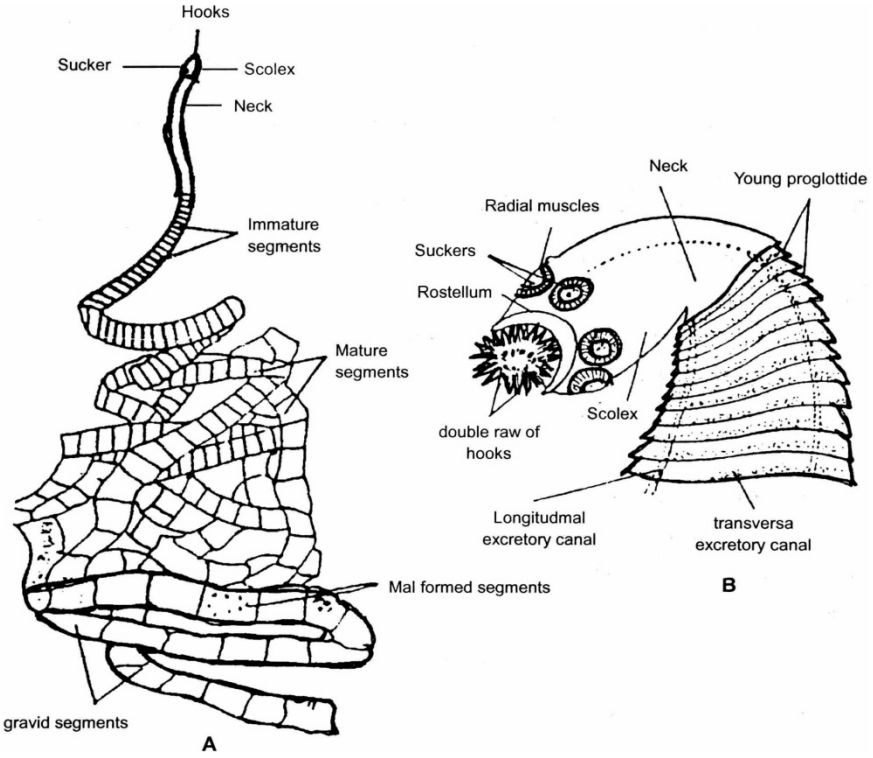

चित्र 6.1: A Taenia Solium; B. Scolex of Taenia Solium

5. स्कौलेक्स का ऊपरी सिरा रोस्टेलम (rostellum) कहलाता है इस पर 2 चक्रों में हुक व्यवस्थित (बाहर छोटे तथा भीतर बड़े) होते हैं । यह आंक्र से चिपकने में सहायक होते हैं।
6. स्कौलेक्स के पीछे अविभाजित गर्दन होती है तथा गर्दन से लगे हुये 800 से 900 देहखण्ड होते हैं यह भाग स्ट्रोबिला (strobila) कहलाता है ।
7. प्रत्येक देहखण्ड में पूर्णविकसित नर व मादा जननांग होते है किन्तु आहारनाल व मुख नहीं होते हैं ।
8. यह खाद्य को अपने शरीर के द्वारा सोखता है ।
9. यह अपने जीवन चक्र का एक चरण सूअर की माँसपेशियों में बिताता है व दूसरा चक्र मनुष्य की आँत में पूरा करता है । छः शूक वाला हैक्साकेन्थ व ब्लैडरवर्म इसमें मिलने वाली लारवा अवस्थाएँ हैं ।
10. यह मनुष्य में कमजोरी तथा पेट दर्द करता है ।

विशिष्ट लक्षण (Special Features)

मनुष्यों में यह एनीमिया, (anaemia) डायरिया या अतिसार (diarrhoea), खून बहना (halmorrhage), ओकाई nausea तथा अनिद्रा insomnia आदि बीमारियाँ फैलाता है । इसमें जनन क्षमता अभूतपूर्व होती है ।

संघ: एसकेल्मिनथीज (Phylum : Aschelmenthes)

गोलकृमि एस्केरिस [Round warm : (Ascaris)]

फाइलम — एस्केल्मिन्थीज

मिथ्यागुहा युक्त (Pseualo coelmate), अविखण्डित (unsegmented) तथा एक लिंगी (unsexual), उपस्थित

क्लास — निमेटोडा (Nematoda)

गोलकृमि (round worm), शरीर नलाकार (cylindrical)

गण (Order) — एस्केरोइडिया (Ascaroidea)

मुख पर तीन ओष्ठ उपस्थित, ग्रहणी (oesophagus) के तीन भाग होते हैं, नर व मादा में लैंगिक विभेद

श्रेणी (Genus) — ऐस्केरिस (Ascaris)

आवास एवं प्रकृति

एस्केरिस लम्ब्रिकोयाडिस मनुष्य एवं सूअर की आंत में पाया जाता है तथा उन्हें दूषित करता है। मनुष्य में पाये जाने वाला ऐस्केरिस हयुमेनिस (A. humanis) तथा सूअर में पाये जाने वाला ऐस्केरिस लस्त्रिकोयाडिस (A. lumbricoides) होता है । वयस्क की तुलना में बच्चों में अधिक पाया जाता है ।

वितरण

संसार में सभी जगह पाया जाता है । किन्तु मुख्यत: भारत, चीन, फिलीपीन कोरिया तथा प्रशान्त महासागर में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण :

1. सामान्यात: गोलकृमि के नाम से जाना जाता है । इसका शरीर लम्बा तथा नलाकार होता है।
2. इनमें लैंगिक भेद (Sexual dimorphism) होता है अर्थात् नर व मादा अलग - अलग होते हैं । नर प्राय: 15 से 30 सेमी लम्बा तथा मादा 20 से 35 सेमी लम्बी होती है ।
3. नर का पिछला सिरा मुड़ा हुआ घुमावदार जबकि मादा का पिछला सिरा सीधा होता है ।
4. मादा के पिछले सिरे पर गुदा (anus), नर के एक अवस्कर (cloaca) होता है जिसमें दो काइटिन (chitin) के सीटी (setae) बाहर को निकले दिखाई देते हैं ।
5. अग्र सिरा नर व मादा में समान होता है ।

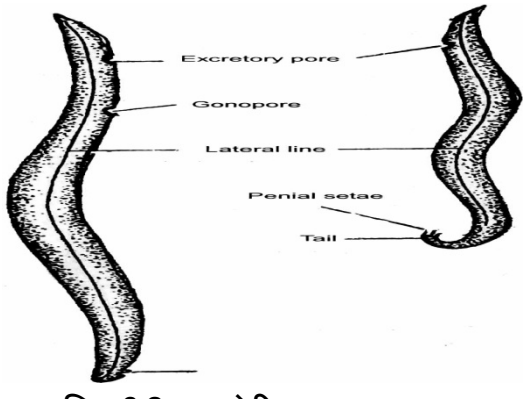

चित्र 6.2 : एस्केरिस : मादा व नर

6. अग्र सिरे पर मुख होता है जो तीन होठों से घिरा रहता है ।
7. नर व मादा की देह को अग्र भाग में मध्य अधर रेखा पर उत्सर्जन छिद्र होता है ।
8. मादा के अग्र भाग से करीब एक तिहाई दूरी पर मध्य अधर रेखा पर जनन छिद्र (ganopare) होता है । यह मोनोजैनेटिक प्राणी है अर्थात् एक ही पोषक में अपना जीवन व्यतीत करता है ।
9. जीवन चक्र में कोई मध्य परजीवी (intermediate) नहीं होता है ।

विशिष्ट लक्षण

रोगजनक परजीवी के रूप में यह विभिन्न रोग जैसे अतिसार (diarrhoea), रक्तस्राव (haemorrhage), गाँठ (tumour), अल्सर, एपेन्डीसाइटिस आदि फैलाता है । बच्चों में यह एस्केरियासिस (ascariasis) रोग उत्पन्न करता है । रोग व बचाव हेतु कच्ची, बिना धुली या बिना उबली सब्जी नहीं खानी चाहिए गंदे जल का सेवन नहीं करना चाहिए ।

संघ: ऐनोलिडा (Phylum : Annelida)

नेरीज = निऐन्थीज Nereis = Neanthes (Ragwormor calmun)

फाइलम - ऐनोलिडा (Annelida)

मेटामेरिकली विखण्डित शरीर, सीलोमयुक्त, बेलनाकार, लम्बी देह

वर्ग: पॉलीकीटा (Polychaeta)

अनेक सीटी तथा पौरापोडिया उपस्थित., क्लाइटेलम अनुपस्थित

गण : इरेन्शिया (Errantia)

सभी देहखण्ड समान (सिर व अंतिम एनलखण्ड को छोड़कर) ग्रसिका पलट कर बाहर जा सकती है ।

सभी पार्श्वपाद एक समान होते हैं ।

श्रेणी : निएन्थीज (Neanthes) रेग वॉर्म

आवास एवम् प्रकृति (Habit & Habitat)

ये समुद्री, रेंगने वाले, रेत में में बिल बनार (200 मी गहराई तक) रहने वाले जन्तु है । ये रत्रिचर (nocturanal) माँसाहारी (carnivorous) होते हैं ये मुक्त रूप से तैरती भी है ।

वितरण (Distribution)

विश्वव्यापी, उत्तरी अटलांटिक, तथा प्रशान्त महासागर के तट पर, अमेरिका तथा यूरोप में पाये जाते हैं ।

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. सामान्यतया रेग वर्म (Rag Worm) के नाम से जाने जाते हैं ।
2. शरीर 10 से 40 सेमी. लम्बा, चपटा, हरे अथवा नीले रंग का होता है
3. देह समान खण्डों की बनी होती है । व 80-120 खंड पाये जाते है ।

4. अग्र भाग में सिर होता है यह प्रोस्टोमियम तथा पैरिस्टोमियम का बना होता है । प्रोस्टोमियम पर चार नेत्र व 2 पेल्पस व दो स्पर्शक व पेरीस्टोनियम पर चार जोड़ी स्पर्शक पाये जाते हैं ।
5. प्रोस्टोमियम के अधर सतह पर मुख स्थित होता है ।
6. देह पर गमन अंग पैरापोडिया (Parapodia) पाये जाते हैं किन्तु सिर तथा अंतिम खण्ड (and segment) पैरापोडिया रहित होती है । अंतिम खण्ड पर एक जोड़ी एनलसिराई (analicirri) तथा एक गुदाछिद्र (anus) स्थित होता है ।
7. प्रत्येक पैरापोडिया पृष्ठ नोटोपोडियम तथा अधर न्यूपोडियम का बना होता है ये श्वसन तथा परिसंचरण में भी सहायक होते हैं ।
8. यह (dioecioeus) होता है अर्थात् नर व मादा अलग-अलग होते हैं ।

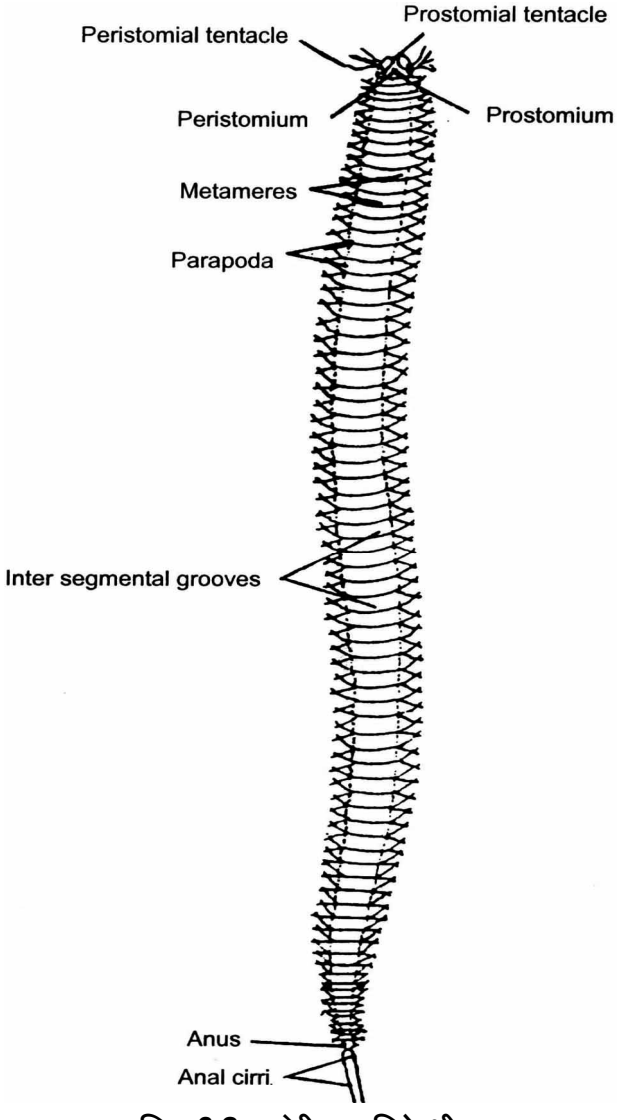

चित्र 6.3 : नेरीज - निऐन्थीज

हिटरोनेरीज चरण (Heteronereis phase)

वर्गीकरण (Classification) - नैरीज के समान

आवास एवं प्रकृति (Habit & Habitat)

समुद्री तथा मुक्त रूप से तैरने वाले जन्तु हैं ।

वितरण (Distribution)

नेरीज के समान

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. यह नेरीज की लैंगिक प्रावस्था होती है । इसमें शरीर के पश्चखण्डों का विकास होता है । जहाँ अस्थाई जनदो (वृषणों एवम् अण्डाशयों) का विकास होता है ।
2. प्रजनन काल के दौरान यह समुद्र की सतह पर स्वतंत्र रूप से तैरती है ।
3. शरीर दो स्पष्ट भागों में विभेदित हो जाता है । अग्र अलैंगिक भाग एटोक (atoke) व पश्च लैंगिक भाग एपीटोक (epitoke) कहलाता है ।
4. सिर पर बड़े व्यास के नेत्र तथा चार जोड़ी सिराई पायी जाती है ।
5. एपीटोक भाग में पाये जाने वाले पैरापोडिया (न्यूरोपोडियम तथा नोटोपोडियम) बड़े एवं पंखे जैसी आकृति के हो जाते हैं ।
6. सीटी चम्मच रूपी हो जाते हैं व तैरने में मदद करते हैं ।

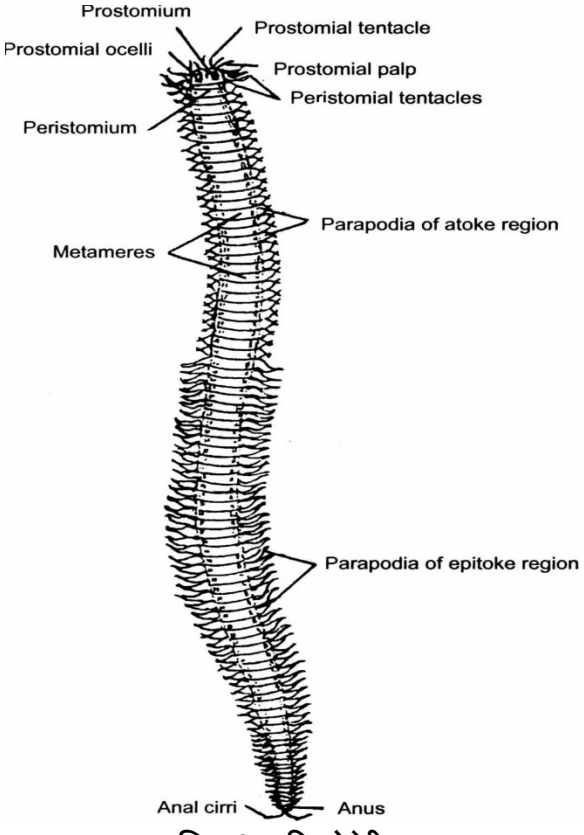

चित्र 6.4 हिटरोनेरीज

7. जनदों के विकास के कारण आंत्र संक्षिप्त (campress) हो जाती है ।
8. अण्डे देने के पश्चात् हिटेरोनेरीज मर जाती है ।
9. गुदा खंड पर विशेष संवेदी पैपिला का विकास हो जाता है ।

विशिष्ट लक्षण (Special Features)

हिटेरोनेरीज झुण्ड बनाकर रहती है । समूह में एक साथ तैरकर अण्डों तथा शुक्राणुओं की रक्षा करती है । रात्रि के समय इनकी कुछ प्रजातियाँ समूह नृत्य करती है । परिवर्धन के दौरान ट्रोकोफोर लाबी का निर्माण होता है ।

एफ्रोडाइट (समुद्री चूहा) [Aphrodite (Sea-mouse)]

वर्गीकरण (Classification)

नेरीज के समान

आवास एवम् प्रकृति (Habit & Habitat)

यह समुद्री प्राणी है जो गहरे जल अथवा कीचड़ में धँसा हुआ अथवा गड्ढे में रहता है।

वितरण (Distribution)

यह यू एस. ए. में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. सामान्यत: समुद्री चूहा कहलाता है यह 12 सेमी. लम्बा तथा लगभग 30 से 35 खण्डों का बना होता है ।
2. शरीर अण्डाकार, पृष्ठ सतह से उठा हुआ तथा अधर सतह से चपटा होता है ।
3. अग्र छोर पर शीर्ष होता है । जो प्रोस्टोमियम तथा पेरोस्टोमियम में विभाजित होता है ।
4. प्रोस्टोमियम के नीचे मुख होता है इस पर मध्य में एक स्पर्शक तथा पार्श्व में (palps) होते हैं ।
5. पृष्ठ भाग के अंतिम सिरे पर गुदा (anus) होता है ।
6. पेरापोडिया विकसित हो जाते हैं । नोटोपोडिया भाग में तीन प्रकार के सीटी होते हैं (i) सख्त सीटो (stiff setae) (ii) कोमल सीटो (soft setae) (iii) सतरंग सीटो (iridescent setae)
7. न्यूरोपोडिया भाग के सीटो भूरे व सख्त होते है ।
8. पृष्ठ तल पर 15 जोड़ी खण्डीय इलाइट्रा (ellytra) अर्थात् शल्क (scales) स्थित होते हैं ये पार्श्व पादों की पृष्ठ सिराई (dorsal cirri) के विभेदन से बनते हैं ।
9. चपटे अधर तल पर स्थित पाद पर अनुप्रस्थ दरारें होती है । ये पैंदे पर रेंगने का काम करते हैं ।

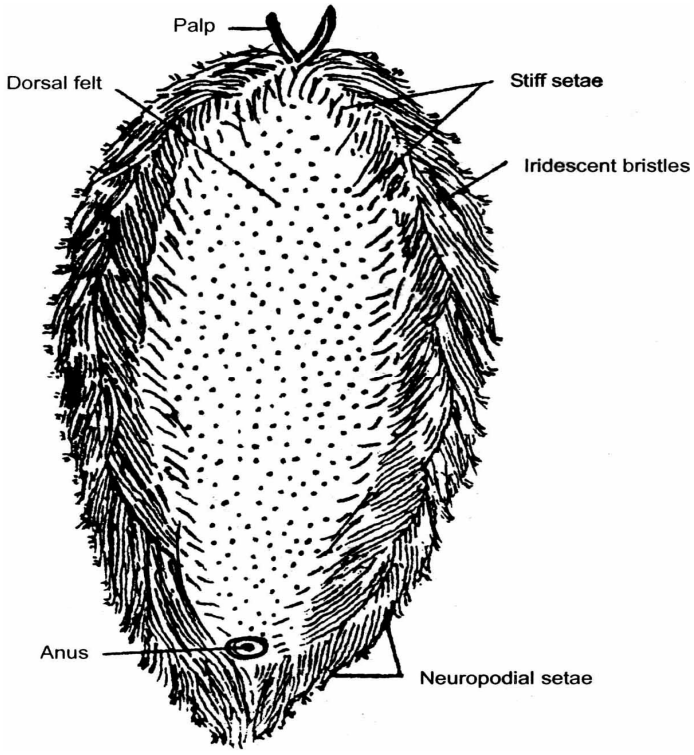

चित्र 6.5: एफ्रोडाइट (समुद्री चूहा)

विशिष्ट लक्षण (Special Features)

शत्रु से बचाव करने के लिए अपने शरीर को गोल कर लेते हैं सीटी कड़े होकर बाहर की ओर होते हैं इस समय यह सेही (porcupine) के समान दिखाई देते हैं । गतिशील अवस्था में इसका रंग सुनहरे से बदलकर बैंगनी नीला हो जाता है । यह समुद्र परिस्थिति की तंत्र की खाद्य श्रृंखला का एक घटक है ।

कीटोप्टेरस (Chaetopterus)

संघ (Phylum): ऐनेलिडा (Annelida)

वर्ग (Class): पॉलीकीटा (Polychaeta)

गण (Order): टयूबीकोला (Tubicola)

नलिकाकार, स्थविर (sedentary), ग्रसिका बहिवर्तनशील नहीं होती है तथा इस पर जबड़े व दाँत नहीं होते हैं ।

श्रेणी (Genus): कीटोप्टेरस

आवास एवं प्रकृति (Habit & Habitat)

नलिकाकार, समुद्री श्लेष्म, संदीप्तशील, U के आकार की नलिकाओं में स्थायी रूप से रहने वाला जीव है । यह इस बिल से बाहर नहीं आता है यह प्लवक व अपरद (detritus) खाता है।

वितरण (Distribution)

सामान्यत: यह यूरोप, अमेरिका तथा उत्तरी कैरोलिना (North Carolina) में पाया जाता है ।

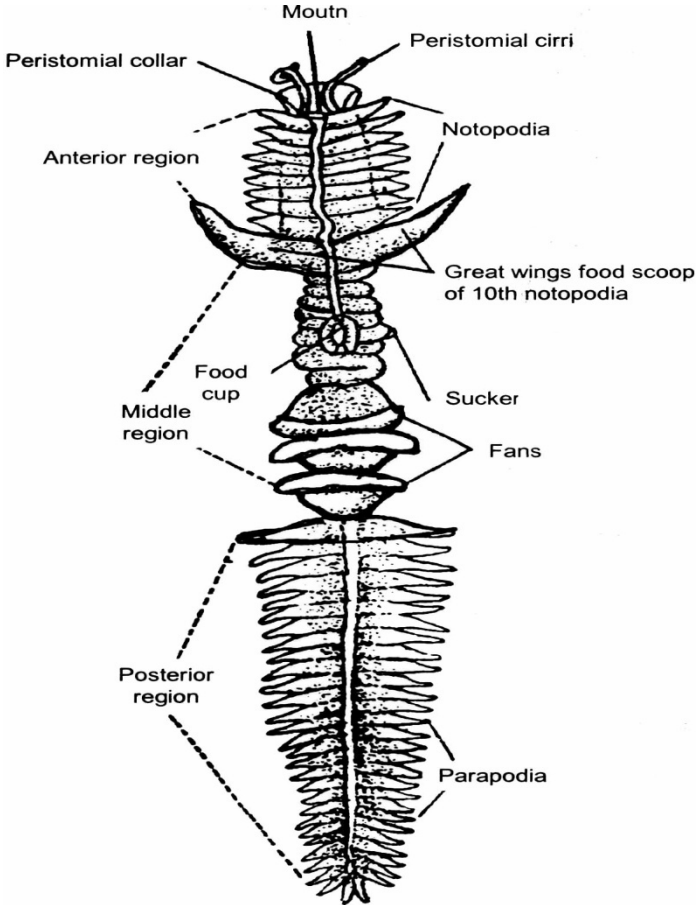

चित्र 6. 6 : कीटोप्टेरस

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. सामान्यत: पैडल वार्म (paddle worm) के नाम से जाने जाते हैं ।
2. शरीर सफेद, लचीला 15 से 30 सेमी लम्बा तथा 3 स्पष्ट भागों में बँटा होता है - अग्र, मध्य एवम् पश्च भाग
3. अग्र भाग के स्वतंत्र अन्त पर एक जोड़ी स्पर्शक होते हैं ये कीप रूपी पेरीस्टोमियल पट्टी (collar) द्वारा घिरे होते हैं । चौथे खण्ड को सीटो आकार में बड़े तथा दॅसवें खण्ड पर एक जोड़ी पार्श्वीय पंख रूपी एलीफार्म नोटोपोडिया स्थित होते हैं । ये पंख रूपी नोटोपोडिया भोजन एकत्र करने का कार्य करते है तथा रोमाभी व श्लेष्म स्रावी होते हैं ।
4. एक पृष्ठ कप्यूल (dorsal cupule) होती है जो मध्य पृष्ठीय खाँच मुख से एक रोमाभी भोजन प्याली (food cup) तक फैला रहता है ।
5. मध्य भाग में जुड़े हुए खण्ड होते हैं ये बड़े परिमाण के पंख रूपी होते हैं
6. अंतिम भाग लम्बा, कई छोटे (11-30) पार्श्वपादों युक्त समखण्डों का बना होता है ।

विशिष्ट लक्षण (Special Features)

श्लेष्म, सदीप्तशील, चमकदार नीले व हरे रंग का प्रकाश उत्सर्जित करता है, इसमें पुनरुदभवन की क्षमता होती है । एक ही खण्ड से पूरे शरीर का पुनरुदभवन हो सकता है । इसके बिल में सहभोजी कैव भी पाये जाते हैं । अत: यह सहभोजिता का अच्छा उदाहरण है ।

एरेनिकोला (Arenicola Lug warm)

संघ (Phylum)- पॉलीकीटा (Polychaeta)

गण (Order)- सिडन्टेरिया (Sedentaria)

नलिकाकार, स्थविर, ग्रसिका बहिवर्तनशील नहीं होती है व इस पर जबड़े व दाँत अनुपस्थित

श्रेणी (Genus)- एरेनिकोला (Arenicola)

आवास एवम् प्रकृति (Habitat & Habitat)

नलिकाकार समुद्री रेत में धँसा, (J) जे की आकृति में रहता है । यह निक्षेप भोजी (direct deposit feeder) की श्रेणी में आता है ।

वितरण (Distribution)

ये यूरोप तथा अमेरिका तथा फ्लोरिडा के समुद्रों में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. शरीर 15 सेमी. लम्बा, नलिकाकार, कृमि रूपी, भूरा तथा हरे रंग का होता है ।
2. शरीर तीन भागों में बँटा होता है ।

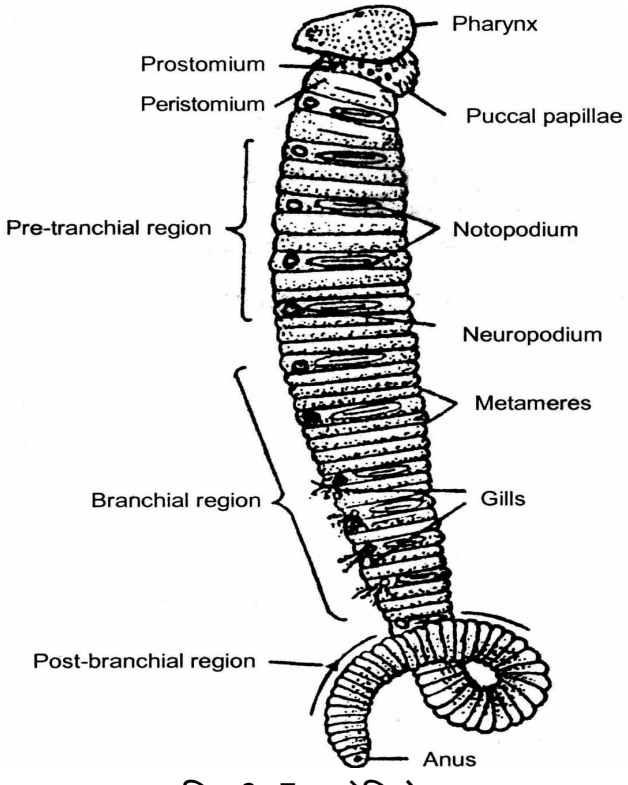

चित्र 6. 7 : एरेनिकोला

3. अग्र भाग में 8 खण्ड प्रोस्टोमियम, पैरोस्लोमियम तथा अग्रलम तीन खण्ड मिलकर एक छोटा शीर्ष बनाते है । शीर्ष के अंत पर मुख स्थित होता है तथा शेष 5 समखण्डों पर पार्श्वपादों की जोडिया स्थित होती है ।
4. भोजन ग्रहण करते समय मुख से, मुखीय पिण्ड तथा ग्रसिका (buccal mass and pharynx) एक प्रोथ (probosics) के रूप में बहिवर्तित की जाती है ।
5. मध्य भाग 13 खण्डों का बना होता है जिस पर पार्श्वपाद लगे होते हैं । पहले खण्डों पर 11 जोड़ी लाल रंग के क्लोम (gills) लगे होते हैं । ये पार्श्वपादों के नोटोपोडिया की सिराई के विभेदन से बनते हैं ।
6. पृष्ठीय भाग (नोटोपोडियम) की सीटों शूक समान तथा गुच्छों में होती है तथा अधरीय न्यूरोपोडियम खाँच पर होते हैं इन पर हुक रुपी सीटों लगी होती है ।
7. देह का अंतिम भाग 30 खण्डों का गुच्छ रुपी होती है अंतिम भाग पर गुद छिद्र (anus) होता है ।
8. पश्चखण्डों पर पार्श्वपाद तथा क्लोम का अभाव होता है ।
9. इसे प्राय: मछली पकड़ने के दौरान चारे के रूप में काम में लिया जाता है ।

विशिष्ट लक्षण (Special Features)

पूरी देह अनुप्रस्थ छल्ले सदृश्य खाँच पाई जाती है जिस कारण समखण्डन स्पष्ट दिखाई नहीं देता है । मछलियों के लिए बेट (bait) के रूप में काम में लिया जाता है ।

ग्लॉसीफोनिया (क्लेपासाइन) [Glosiphonia (Clepsine)]

संघ (Phylum)- ऐनेलिडा (Annelida)

वर्ग (Class)- हिरुडडीनिया (Hirudinea)

बाह्य रूपी, देह पर अग्रव पश्च चूषक उप., स्पर्शक, पैरापोडिया व सीटो अनुपस्थित

गण (Order- रिन्क्रॉब्डोलिडा (Rhynchobdellida)

बहिवर्तनशील प्रोथ उपस्थित, हनु अनुपस्थित

श्रेणी (Genus)- ग्लॉसीफोनिया (Glossiphonia)

आवास एवम प्रकृति (Habit & Habitat)

यह स्वच्छ, अलवणित जल में पायी जाने वाली जोंक है यह घोंघे, काइरोनेमस लार्वा, कीटों के वर्णकों आदि पर बाह्य परजीवी के रूप में पायी जाती है ।

वितरण (Distribution)

विश्वव्यापी यूरोप, उत्तरी अमेरिका में तथा भारत में नैनीताल, आसाम तथा बंगाल में पायी जाती है ।

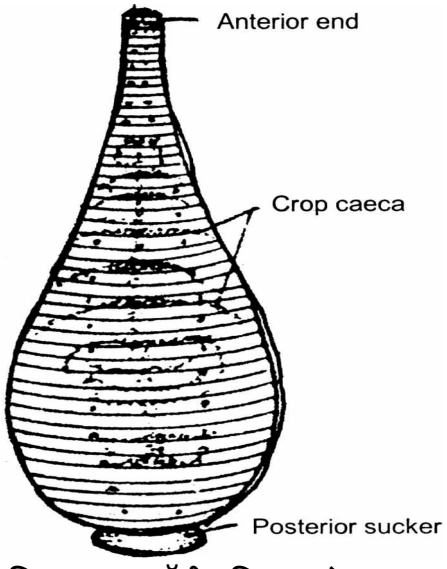

चित्र 6.8 : ग्लॉसीफानिया (क्लेपासाइन)

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. शरीर चौड़ा हरे पीला या गुलाबी रंग का, चपट, अग्र सिरे से सकरा व पश्च सिरा चौड़ा होता है ।
2. यह 15 मिमि लम्बा तथा 5 मिमि चौड़ा होता है ।
3. अग्र संकरे सिरे पर मुख होता है व इनमें ग्रसिका का अभाव होता है ।
4. अग्र चूषक मुख से जुड़ा किंतु पश्च चूषक पृथक दिखाई देता है ।
5. प्रत्येक देह समखण्ड बाहर से तीन छल्लेदार उपखण्डों में बँटा होता है ।
6. तीन जोड़ी आँखें तथा लार ग्रन्थि उप. होती है ।
7. यह अपने अण्डों तथा शिशु वस्थाओं को पश्च चूषक से संलग्न रखता है ।

विशिष्ट लक्षण (Special Features)

यह तैर नहीं सकता है किंतु खतरे के समय अपने शरीर को गोल (rolls up) कर लेता है ।

पॉन्टोब्डेला (Pontobdella)

वर्गीकरण (Classification) ग्लॉसीफोनिया के समान

आवास एवं प्रकृति (General Characters)

बाह्य परजीवी, यह समुद्र में रहने वाली स्केट तथा रे पर बाहय परजीवी होता है ।

वितरण (Distribution)

यह यूरोप तथा अमेरिका में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. शरीर लम्बा, गदा की आकृति का, अग्र सिरे से संकरा व लगभग 20 सेमी. लम्बा होता है ।

2. अग्रचूषक तश्तरी के समान (मुख पर) तथा अधर चूषक देह के पश्च अन्त पर स्थित होता है ।
3. देह पर नियमित चक्रिकाओं में घुण्डी रुपी प्रवर्ध अर्थात् वार्ट (warts) स्थित होते हैं । जिसके कारण त्वचा खुरदुरी होती है ।
4. नैत्र व गिल अनुपस्थित होते हैं ।
5. भोजन ग्रहण करते समय मुख से ग्रसिका एक प्रोथ के रूप में बहिवर्तित की जाती है ।
6. 6. उभयलिंगी तथालैंगिक जनन होता है । अण्डे मखमली होते हैं व मॉलस्क के खाली खोल में दिये जाते हैं ।

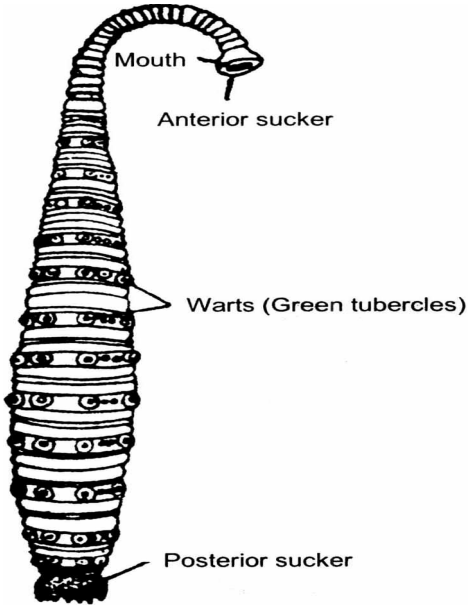

चित्र 6. 9 : पॉन्टोब्डेला

विशिष्ट लक्षण (General Features)

स्केट अण्डों की रक्षा का कार्य करती है (लगभग 3 महीने तक)

पॉलीगॉर्डियस (Polygordius)

संघ- **एनेलिडा**

वर्ग- आरकीऐनेलिडा (Archiannelida)

बाह्य समखण्डम अस्पष्ट, किंतु आंतीरक रूप से खण्ड स्पष्ट आदि ऐनेलिडा (primitive annelida), पार्श्वपाद व सीटो अनुपस्थित,

श्रेणी (Genus)- पॉलीगोर्डियस (Polygordius)

स्वभाव एवं प्रकृति (Habit & Habitat)

यह छोटे परिमाण का समुद्री कृमि है ।

वितरण (Distribution)

यह यूरोप के समुद्री तटों पर पाया जाता है ।

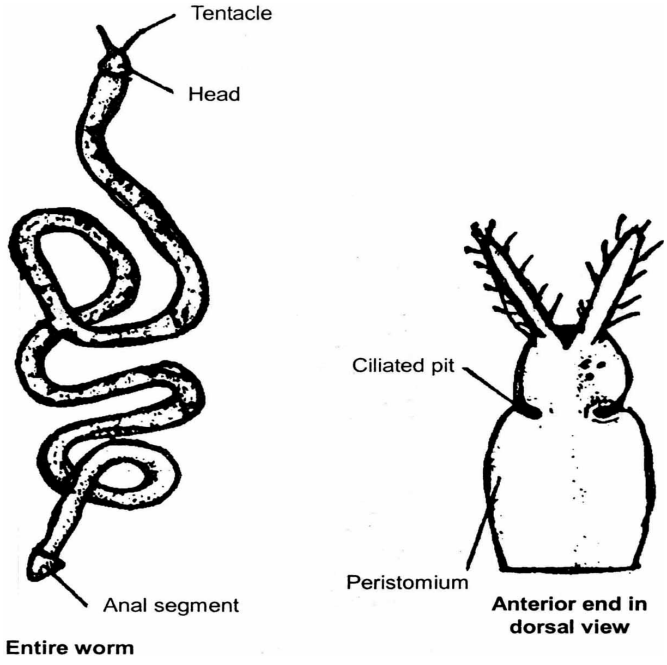

चित्र 6.10 पॉलीगॉर्डियस

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. शरीर 30 से 100 मिमि लम्बा, नलिकाकार पॉलीकोट लार्वा के समान होता है ।
2. शरीर सिर और देहखण्डों में विभक्त होता है ।
3. सिर पर प्रोस्टोमियम छोटा तथा पेरिस्टोमियम बड़ा होता है । प्रोस्टोमियम पर एक जोड़ी स्पर्शक पाये जाते हैं । पेरिस्टोमियम के अधर तल पर मुख स्थित होता है ।
4. अंतिम देह खण्ड (गुद खण्ड) फूला हुआ तथा त्रिकोणाकार होता है इसके अधर पश्च अंत पर गुद छिद्र तथा एडहिसिव पैपिली होते हैं ।
5. लिंग पृथक होते हैं । जनदों का परिवर्धन पश्च भाग में होता है । जनन नलिका अनुपस्थित होती है । परिवर्धन अप्रत्यक्ष होता है ।
6. वर्णक अन्य ऐनेलिडन सदस्यों के समान ट्रोकोफोर होता है ।

संघ: ऑनिकोफोरा (Phylum : Onychophora)

पैरीपेटस (Peripatus)

संघ (phylum): ऑनिकोफोरा (Onychophora)

शरीर नलिकाकार, अविखण्डित, एक जोड़ी नेत्र, श्रंगिका तथा एक जोड़ी मुखीय अंकुरक (oral papillal) हैं । देह पर छोटे उपांग उपस्थित

श्रेणी (Genus) : पेरीपेटस (Peripatus)

स्वभाव एवं प्रकृति (Habit & Habitat)

इस संघ में केवल एक जीवित श्रेणी है व यह असवत वितरण का एक उत्तम उदाहरण है । यह चट्टानों की दरारों, पत्थरो वृक्ष की छाल के नीचे नम व अंधेरे स्थानों पर पाया जाता है । यह माँसाहारी व रात्रिचर होता है ।

वितरण (Distribution)

यह मलेशिया, ऑस्ट्रेलिया, अफ्रीका, वेस्टइंडीज, मध्य अमेरिका आदि देशों में पाया जाता है।

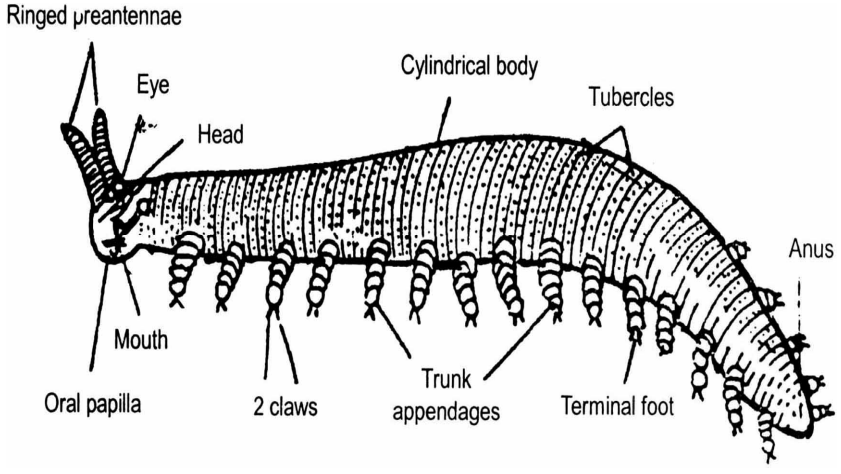

चित्र 6.11 : पेरीपेटस

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. यह ऐनेलिडा तथा आप्रोपोडा के बीच की संयोजक कड़ी है ।
2. यह थलचर व रात्रिचर होता है जो नमी वाले स्थान, लकड़ी की छाल भीगे हुये पत्थरों के नीचे पाया जाता है ।
3. आथ्रोपोडा के समान इसमें श्रंगिकायें तथा हनुओं के जोड़े पाये जाते हैं ।
4. मुखीय अंकुरक के स्वतंत्र सिरों पर ग्रंथियों के छिद्र खुलते हैं जिनसे चिपचिपे पदार्थ का स्रावण होता है जो शिकार सहायक होता है ।
5. देह के पश्च अंत पर गुद छिद्र पाया जाता है ।
6. यह परभक्षी तथा माँसाहारी होता है ।
7. प्रत्येक टाँग के आधार पर नेफ्रीडियल द्वार होता है ।

विशिष्ट लक्षण

आथ्रोपोडा और ऐनेलिडा दोनों के लक्षणों के उपिस्थत होने के कारण यह इनके मध्य की योजक कड़ी के रूप में पाया जाता है व इसे स्वतंत्र संघ ओनिकोफोरा का दर्जा प्राप्त है ।

संघ: आथ्रोपोडा (Phylum : Arthropoda)

लिमुलस = जीफोस्यूरा [(Limulus= Xiphosura Kingcrab]

संघ (Phylum)- आथ्रोपोडा (Arthropoda)

शरीर द्विपार्श्वसम्मित, विखण्डित, संधियुक्त उपांग उपस्थित बाह्य कंकाल काइटिन द्वारा निर्मित होता है ।

उपसंघ (Subphylum)- केलीसिरेटा (Chelicerata)

शरीर शिरोवक्ष तथा उदर में विभाजित, तथा शिरोवक्ष पर चिमटी रूपी कैलिसेरी तथा 4 जोड़ी संधियुक्त टाँग उपस्थित

वर्ग (Class)- एरेकनिडा (Arachnida)

जलीय एवं स्थलीय, पुस्तक फुफ्फुस उप.,

गण (Order)- जीफोस्यूरा (Xiphosura)

शिरोवृक्ष पृष्ठ पर केरापेस द्वारा ढ़का होता है

श्रेणी (Genus)- लिमुलस (Limulus)

स्वभाव एवं प्रकृति (Habit & Habitat)

समुद्री, समुद्र के पेंदे में 2 से 6 फेदम गहराई तक पाया जाता है । समुद्री तटों पर छिछले पानी में पाया जाता है । ग्रीष्म ऋतु प्रारम्भ होने से पूर्व रेतीलों तटों पर प्रजनन हेतु आ जाते हैं यह कृमि व मॉलस्का के जंतु को खाता है ।

वितरण (Distribution)

यह प्रशान्त, हिन्द तथा एटलाँटिक महासागर में समुद्र के पेंदे में पाये जाते है । इसके अलावा ये एशिया के पूर्वी तटों पर व उत्तरी अमेरिका में फ्लौरिडा में पाये जाते हैं ।

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. सामान्यत: यह किंगक्रैब के नाम से जाना जाता है ।
2. शरीर दो भागों में बँटा होता है अग्र भाग शिरोवृक्ष अर्थात् प्रोसोमा (prosoma) तथा पश्च उदर नुकीला ओपिस्थोमा कहलाता है । उदर के पश्च सिरे पर लम्बा, नुकीला टेल्सन (telson) होता है ।

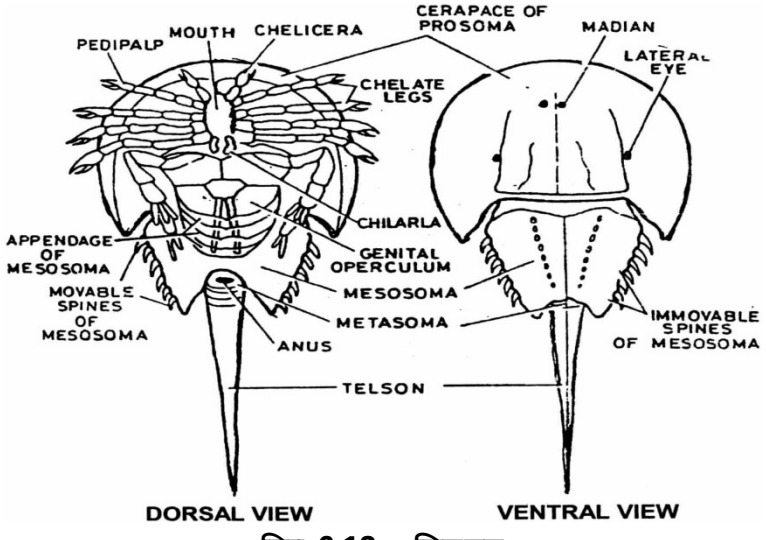

चित्र 6.12 : लिमुलस

3. शिरोवृक्ष पृष्ठ पर कठोर कवच केरापेस से ढ़का रहता है जिस पर सरल तथा संयुक्त नेत्र उपिस्थत होते हैं ।
4. शिरोवृक्ष के अधर तल पर 6 जोड़ी संधियुक्त उपांग पाये जाते हैं ।
5. जिनमें पहले पाँच के अंत चिमटीरुपी (chetae) होते हैं । दो मध्य नेत्र (median eye) व दो पार्श्व नेत्र (lateral eye) पाये जाते हैं ।
6. उदर के अधर तल पर भी 6 जोड़ी उपांग होते हैं ये चपटे चौड़े तथा मध्य में परस्पर जुड़े होते हैं ।

विशिष्ट लक्षण

ये बड़े आकार के होते हैं इन्हें जीवित जीवाश्म भी कहते है । इनका आर्थिक उपयोग होता है । कनाडा तथा अमेरिका में चूजे तथा सूअरों द्वारा भोजन के रूप में प्रयोग में लिया जाता है । इन्हें जीवन रक्षक दवाओं के निर्माण में भी उपयोग किया जाता है ।

मकड़ी (Spider)

संघ- आथ्रोपोडा

उपसंघ- कैलिसिरेटा

वर्ग- एरेकनिडा

गण- ऐनेनिडा (माप्त०001ंतप्त)

सिफ्रेलोलोथोरेक्स व उदर एक दूसरे से जुड़े होते हैं, शरीर अविखण्डित

श्रेणी- मकड़ी (spider)

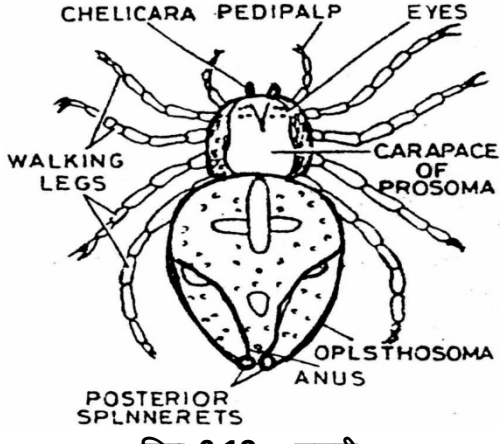

चित्र 6.13 : मकड़ी

स्वभाव एवं प्रकृति (Habit and Habitat)

विश्वव्यापी, माँसाहारी, थलचर, घरों तथा उद्यानों में पायी जाती है शिकार के रूप में छोटे - छोटे कीड़ों को खाती है । लगभग 20 हजार से अधिक जातियाँ ज्ञात है ।

वितरण (Distribution)

भारत, न्यूजीलैण्ड, अफ्रीका, अमेरिका, बर्मा तथा बांग्लादेश में पायी जाती है ।

सामान्य लक्षण (General Characters)

1. सामान्यत: मकड़ी कहलाती है ।
2. शरीर शिरोवृक्ष तथा उदर में बँटा होता है, जिन्हें क्रमश: प्रोसोमा तथा ऑपिस्थोसोमा भी कहते हैं ।
3. त्वचा खुरदुरी व उस पर बाल, शल्क या काँटे के समान संरचनायें पायी जाती है ।
4. शिरोवृक्ष के अग्रभाग में 8 सरल नेत्र व मुख होता है ।
5. अधर तल पर तीन तरह के उपांग होते हैं जिनमें प्रथम जोड़ी चिमटी रूपी व विषयुक्त जो केलिसेरा (chelicera), दूसरी जोड़ी छोटे पेडिपेल्प तथा शेष चार जोड़ी उपांग टाँगे (walking legs) कहलाते हैं ।
6. उदर पर उपांग अनुपस्थित होते हैं । उदर के अधर तल पर 4 जोड़ी स्पीनैरे अर्थात् जाल बनाने वाले अंग (spinnerets spinning organ) पाये जाते हैं । उदर के अंतिम सिरे पर मलद्वार होता है ।
7. उत्सर्जी अंग मैल्पीघिमन ट्यूब तथा कॉक्सल (coxal gland) होते हैं ।
8. उदर के अधर तल पर एक मध्य अग्र जननछिद्र (genital opening) होती है ।
9. प्राय: नर मादा से छोटा होता है ।
10. जनन के बाद मादा नर को मार देती है व भक्षण कर लेती है ।

विशिष्ट लक्षण

यह विभिन्न प्रकार के जाल बुनती है । खतरे के समय कभी-कभी ये रंग भी परिवर्तित कर लेती है ।

बिच्छू (पेलमनिअस) [Scorpion (Palamneus)]

संघ- आथ्रोपोडा

उपसंघ- कैलिसिरेटा

वर्ग- ऐरेकनिडा

गण- स्कॉरपियोनिडा (Scorpionida)

एम्बोलोब्रेकिएट (Embolobranchiates) कहलाते हैं । जिनमें केलिसेटा तथा पेडिपेल्प होते हैं ।

श्रेणी - बिच्छू

आवास एवं प्रकृति (Habit & Habitat)

यह रात्रिचर है दिन के समय मिट्टी, टूटे हुये पेड़ तथा पत्थरों के नीचे पाया जाता है । यह कीड़े मकौड़ों तथा मकडी को डंक मारकर उन्हें भोजन के रूप में प्रयोग करता है ।

वितरण (Distribution)

यह विश्वव्यापी है किन्तु मुख्यत: भारत, यूरोप, तथा अमेरिका में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. शरीर लम्बा, खण्डयुक्त अग्र भाग प्रोसोमा तथा पश्च ऑपिस्थोसोमा में विभाजित होता है। इसके अंतिम खण्ड पर विभदंश होता है ।

2. ऑपिस्थोसोमा क्रमश: अग्र चौड़े भाग मीसोसोमा (mesosoma) तथा पश्च संकरा भाग मेटासोमा (metasoma) में विभाजित होता है ।
3. शरीर पर काइटिन का कंकाल होता है । श्वसन बुक लंग्स द्वारा तथा उत्सर्जन कॉक्सल ग्रंथि द्वारा होता है ।
4. प्रोसोमा पर 6 जोड़ी उपांग, जिनमें पहली जोड़ी केलिसेरा (चिमटी रूपी दूसरी जोड़ी पेडी पेल्प (शिकार संबंधी) तथा चार जोड़ी गमन टाँगे (walking legs) होते हैं ।
5. मीसोसोमा 7 चौड़े खण्डों का जबकि मेटासोमा 5 सकड़े एवं गोलाकार खण्डों का बना होता है ।
6. मीसोसोमा में दूसरे खण्ड के अधर तल पर एक जोड़ी कंधे के समान पेक्टेन (pecten) होते हैं ये संवेदी होते हैं (स्पर्श संवेदी) ।
7. लिंग अलग-अलग होते हैं किंतु लैंगिक द्विरुपता (sexual dimorphism) नहीं होती है । विवीपेरस (viviparus) होता है । कोर्टिशिप (सहचर) प्रदर्शित करते हैं ।

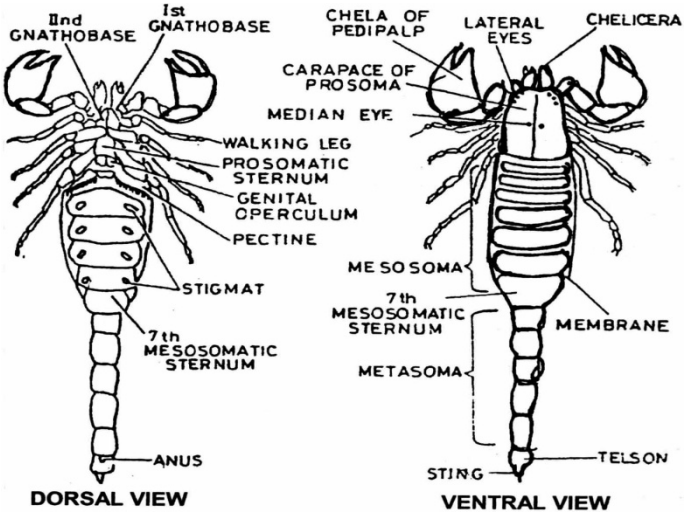

चित्र 6. 14 : बिच्छू

विशिष्ट लक्षण (Special Features)

यह मनुष्य जाति के लिए हानिकारक है इसमें विष दंश तथा विष ग्रंथि पायी जाती है । इसके डंक मारने पर तेज दर्द होता है तथा बुखार हो जाता है । इसकी अन्य श्रेणियाँ बुथस (Buthus) तथा सेन्ट्रूरस (Centrurus) है ।

कानखजूरा (शतपद) [Scolopendra (Centipede)]

वर्गीकरण

संघ- अथ्रोपोडा

उपसंघ- मेण्डीब्यूलेटा (Mandibulata)

शरीर सिर वृक्ष व उदर में विभाजित, सिर पर 1 या 2 जोड़ी श्रंगिकायें, 1 जोड़ी हनु, 1 या अधिक जोड़ी मैक्सीली तथा धड़ पर कम से कम 3 जोड़ी टाँगे होती है ।

थलचर, शरीर शीर्ष एवम् धड़ में विभाजित, खण्डयुक्त शरीर श्वसन ट्रेकिया द्वारा होता है ।

गण- कीलोपोडा (Chilopoda)

माँसाहारी, शरीर प्रतिपृष्ठ सतह से चपटा, प्रत्येक देहखण्ड पर एक जोड़ी टाँगे होती है ।

श्रेणी- कानखखजूरा

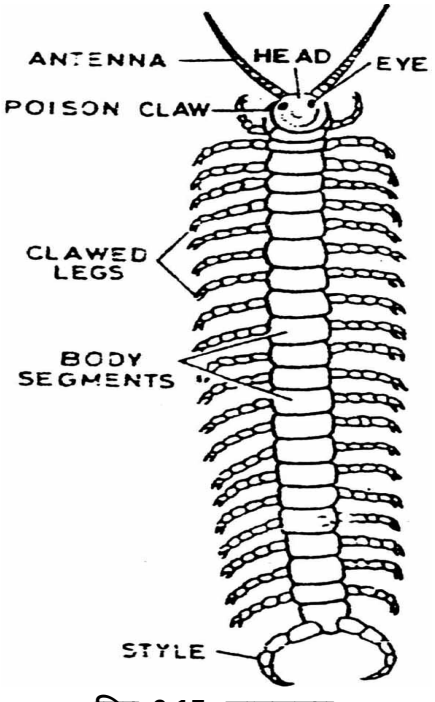

चित्र 6.15: कानखजूरा

स्वभाव एवम् प्रकृति

उष्णकटिबंधीय, माँसाहारी प्राणी है यह दलदल वाले स्थान पर अंधेरे में पत्थरों तथा लकड़ी के नीचे पाया जाता है । यह रात्रि के समय फुर्ती के साथ कीड़ों तथा केंचुओं का शिकार करता है । कभी-कभी घरों में भी आ जाता है ।

वितरण

यह भारत तथा अमेरिका (ऑस्टिन तथा टेक्सास) में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. शरीर लम्बा, गहरा हरा अथवा भूरा, सिर व धड़ में विभाजित होता है ।
2. सिर पर एक जोड़ी लम्बे स्लीना, नेत्र, मेण्डीबल तथा मैक्सिला पाये जाते हैं ।
3. हर खण्ड के पार्श्व में एक जोड़ी संधियुक्त टाँगे होती है किंतु प्रथम खण्ड की टाँगे (मैक्सलीपीड) विष पंजों में विभेदित होती
4. इनके विष से चक्कर, सिरदर्द तथा बुखार हो जाता है ।
5. देह के पिछले सिरे पर जनन छिद्र होता है । अण्डे जमीन के अदर जून व जुलाई में दिये जाते हैं ।

6. 9 जोड़ी अण्डाकार, स्पाइरेकल क्रमश: चौथे, छठे, नवें, तेरहवें, पन्द्रहवें, सत्रवें उन्नीसवें तथा 21 वे खण्ड पाये जाते हैं ।

विशिष्ट लक्षण

यह स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र की खाद्य श्रृंखला का एक घटक है ।

प्रत्येक खण्ड में संधियुक्त टाँगे पाया जाना इसका मुख्य लक्षण है ।

रामधोड़ी अर्थात् गजाई (मिलीपीड) (Millipede)

फाइलम- आथ्रोपोडा

उपसंघ- मेण्डीब्यूलेटा

वर्ग- मिरियापोडा

गण- डिप्लोपोडा

शाकाहारी, पत्येक देह खण्ड पर दो जोड़ी टाँगे उपस्थित

श्रेणी- मिलीपीड (जूलस)

स्वभाव एवम् प्रकृति

गर्म प्रदेशों में पाया जाने वाला प्राणी है प्राय: यह अंधेरे, गीले स्थान पर बगीचों में गीली लकड़िया, पत्थरों व सीलन वाली जगहों पर पाया जाता है यह गड्ढे करके पौधों की जड़ों को खाकर उन्हें हानि पहुँचाता है ।

वितरण (Distribution)

विश्वव्यापी, भारत अमेरिका व यूरोप में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. प्राय तार कृमि (wire worm) के नाम से जाना जाता है यह भूरा, लाल अथवा पीले रंग का होता है ।
2. शरीर सिर, वक्ष व उदर में विभाजित होता है ।
3. सिर पर 2 जोड़ी नेत्र, 1 जोड़ी एन्टीनी (antennae), 1 जोड़ी मैक्सीली व एक जोड़ी मेण्डीबल होते हैं ।
4. वक्ष 4 खण्डों का बना होता है इसके प्रत्येक खण्ड में एक जोड़ी टाँगे होती है ।
5. प्रत्येक उदर खण्ड पर 7 टुकड़ों की बनी हुई 2 जोड़ी टाँगे पायी जाती है ।
6. धड़खण्डों के पार्श्वों पर गंध ग्रंथियाँ होती है । जो गंधयुक्त पदार्थ स्रावित करती है ।
7. बहुत सारे उपांगों होने पर भी यह धीमा व कायर प्राणी है ।
8. खतरे के समय देह को गोल कर लेता है ।
9. इसमें विष डंक नहीं होता है ।
10. जननछिद्र अग्र भाग में तीसरें ग्रसिका खण्ड के अधर तल पर स्थित होता है ।

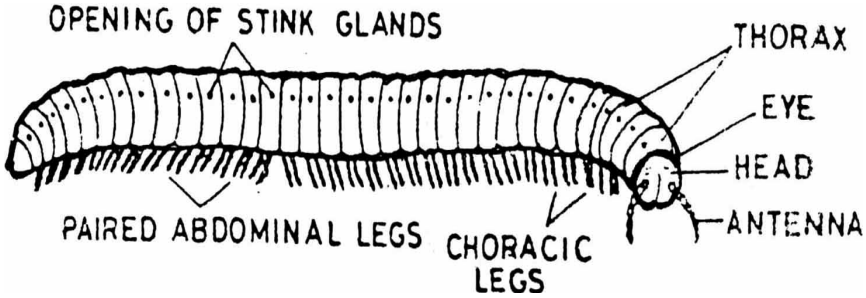

चित्र 6.16 : रामघोड़ी अर्थात् गजाई (मिलीपीड)

विशिष्ट लक्षण

छोटे किन्तु अनेक उपांग इसका मुख्य लक्षण है ।

लिपस (हंस नाक चिमटी) [Lepas (Goose Barnacle)]

संघ- आथ्रोपोडा

उपसंघ- मेण्डीब्यूलेटा

वर्ग- क्रस्टेसिया

बाह्यकंकाल काइटिन एवम् कैल्सियम कार्बोनेट का बना होता है, केरापेस, 2 जोड़ी एन्टीनी व तीन जोड़ी मुखाँग (1 जोड़ी मेण्डीबल, 2 जोड़ी मैक्सीली) उप.

उपवर्ग (Subclass) सीरिपीडिया (Cirripedia)

वयस्क स्थानबद्ध, सयुंक्त नेत्र अनुपस्थित, केरापेस कैल्सियम कार्बोनेट से बना 6 जोड़ी द्विशाखित उपांग उप.

गण- थोरोसिका (Thoracica)

केरापेस पर पट्टिकायें उप.

श्रेणी- लिपस

स्वभाव एवम् प्रकृति

समुद्री प्लवकों (planktons) के भोजन के रूप में प्रयोग करता है यह चट्टानों लकड़ी के लट्ठों व जहाजों की निचली चिपका रहता है । ये प्लवकों को खाते हैं ।

वितरण

विश्वव्यापी, किंतु मुख्य रूप से प्रशान्त महासागर, तथा बंगाल की खाड़ी आदि तटों पर पाया जाता है ।

मुख्य लक्षण

1. समान्यतया: हंस नाक चिमटी (goose barnacle) तथा जहाज नाक चिमटों (ship barnacle) के नाम से जाना जाता है ।
2. शरीर दोनों सतहों से दबा हुआ (compressed), खण्डरहित होता है ।

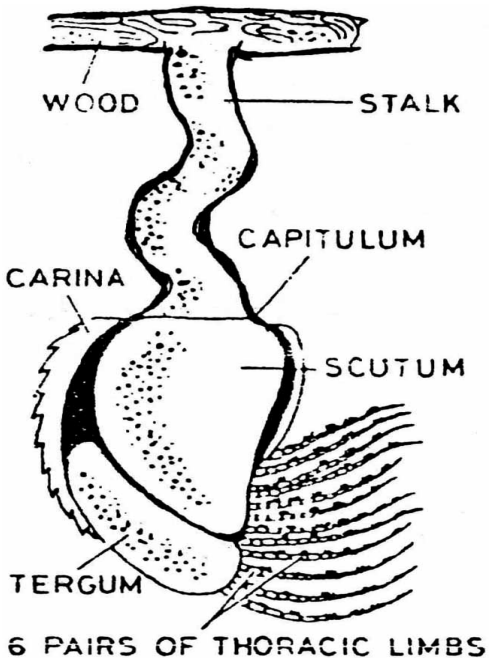

चित्र 6.17 : लिपस

3. देह अर्थात् कैपिटुलम (capitulum) कैल्सियम कार्बोनेट की बनी पट्टिकाओं से ढकी रहती है।
4. कैपिटुलम के नीचे एक लम्बा वृन्त (peduncle) निकला होता है यह अग्रअंत होता है व आधारवस्तु से संलग्न होने में सहायक होता है ।
5. वृन्त में शीर्ष, 1 जोड़ी एन्टीन्यूल होते हैं अन्य शीर्ष उपांग उप. होते हैं किंतु श्रृंगिकाओं का अभाव होता है ।
6. वक्ष पर 6 जोडी द्विशाखित उपांग पाये जाते हैं जो भोजन एकत्रीकरण में सहायक होते हैं।
7. उदर का अभाव होता है ।
8. अधिकांश सदस्य जलीय होने के कारण श्वसन गिल द्वारा होता है ।
9. जन्तु उभयलिंगी (heormophroite) होता है किंतु क्रॉस निषेचन (cross fertilization) होता है ।

विशिष्ट लक्षण

6 जोड़ी द्विशाखित वक्षीय उपांगों तक वृन्त का पाया जाना मुख्य लक्षण है ।

बैलनस (बॉंजफल नाक चिमटी) [Balanus (Acorn Barnacle)]

वर्गीकरण= लीपस के समान

स्वभाव एवम् प्रकृति

यह चट्टानों, घोंघें के कवचों छिछले पानी में तथा तैरने वाली वस्तुओं से चिपके रहते हैं ।

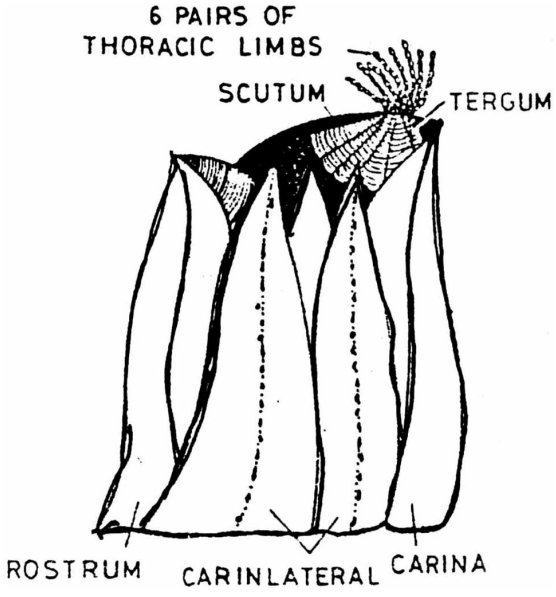

चित्र 6. 18 : बेलेनस

वितरण (Distribution)

विश्वव्यापी, मुख्य रूप से प्रशान्त महासागर, उत्तरी अटलांटिक महासागर, वेस्टइंडीज तथा वाशिंगटन से अलास्का तक पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: यह चट्टान नाक चिमटी या बांजफल नाक चिमटी कहलाता है ।
2. सिर चौड़ा एवम् छोटा होता है ।
3. देह 6 पट्टिकाओं युक्त प्रकार से ढकी रहती है तथा वृन्त (peduncle) का अभाव होता है।
4. शीर्ष पर एन्टीन्यूल होते हैं जो सीमेन्ट ग्रंथि युक्त होते हैं ।
5. सभी उपांग उपस्थित होते हैं किंतु श्रृंगिकाओं का अभाव होता है ।
6. वक्ष पर 6 जोड़ी, लचीले, शीधयुक्त, लहरदार तथा घुमावदार उपांग होते हैं जो भोजन इकट्ठा करने में सहायक होते हैं
7. उदर अनुपस्थित होता है ।
8. जीवन चक्र में लारवा प्रावस्था (नाप्लियस Nauplius) पायी जाती है ।

विशिष्ट लक्षण

कई देशों में यह भोजन के रूप में प्रयोग में लाया जाता है । इसे अतिविकसित क्रस्टेसिया वर्ग में रखा गया है इनमें नर व मादा सदैव साथ रहते हैं ।

स्किला (मेन्टिस झींगा) [Squilla (Mantis Shrimp)]

संघ-	आथ्रोपोडा
उपसंघ-	मेण्डीब्यूलेटा
वर्ग-	क्रस्टेसिया
उपवर्ग-	मेलेकॉस्ट्रेका (Malacostraca)

6 उदर उपांग तथा शरीर स्पष्ट रूप से खाण्डित

गण- स्टोमेटोपोडा (Stomatopoda)

शिरोवक्ष की तुलना में उदर चौड़ा होता है ।

श्रेणी- स्क्विला

आवास एवम् प्रकृति

यह बड़ा समुद्री जंतु है यह समुद्र तल में मिट्टी, कीचड़ और गड्ढे में धंसा हुआ पाया जाता है। यह परभक्षी होता है शिकार के लिए यह शक्तिशाली मेक्सीलीपीड का इस्तेमाल करता है ।

वितरण

यह भारत, मैक्सिको की खाड़ी, फ्लोरिडा के दक्षिणी तट पर पाया जाता है ।

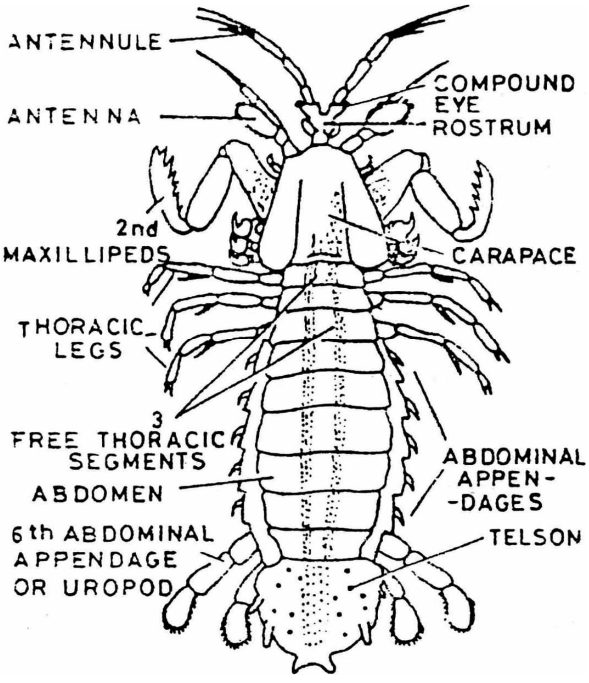

चित्र 6.19 : स्किब्ला (मेन्टिस झींगा)

सामान्य लक्षण

1. शरीर सफेद रंग का, अल्प पारदर्शी लगभग 25 सेमी लम्बा होता है ।
2. शरीर सिरोवक्ष, वक्ष व उदर में विभाजित होता हैक़ ।
3. केरापेस छोटा, चपटा, 3 वक्षीय खण्डों को ढके रहता है । लगभग 4 वक्षीय खण्ड ढके नहीं होते हैं ।
4. सिर पर एन्टीन्यूल, एन्टीना, मेण्डीवल तथा मेक्सीला की जोड़ियाँ होती है ।
5. एक जोड़ी वृन्तरहित संयुक्त नेत्र पाये जाते हैं ।
6. पहले पाँच जोड़ी वक्षीय उपांग मेक्सलीपीड कहलाते हैं दूसरी जोड़ी मेक्सलीपीड तथा चिमटीरूपी होती है यह शिकार पकड़ने का कार्य करती है । अंतिम तीन जोड़ी उपांग टाँगे कहलाते है ये पतले, छोटे व द्विशाखान्तवित होते हैं ।

7. उदर भाग अपेक्षाकृत लम्बा होता है इस पर पाये जाने वाले उपांग लम्बे, चपटे द्विशाखान्वित व क्लोम युक्त होते है । ये प्लिओपोड कहलाते है । अंतिम खण्ड के उपांग बड़े व चपटे होते हैं ये यूरोपोड (uropod) कहलाते हैं । ये टेल्सन (telson) के नीचे स्थित होते हैं ।
8. हृदय बड़ा होता है यह वक्ष से उदर तक स्थित होता है ।
9. लार्वा सतह पर तैरते है व केकड़ों के जोइया लार्वा के समान दिखाई देते हैं ।
10. मानव द्वारा इसका सेवन किया जाता है अत: आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है ।

विशिष्ट लक्षण

सफेद, अल्पपादर्शी शरीर ही उसका मुख्य लक्षण है ।

यूपैग्यूरस (हर्मिट-केंकड़ा) [Eupagurus (Hermit Crab)]

संघ- आथ्रोपोडा

उपवर्ग- मेण्डीब्यूलेटा

वर्ग- क्रस्टेसिया

उपवर्ग- मेलेकॉस्ट्रेका

गण- डेकापोडा

कैरापेस उप., प्रथम तीन वक्षीय उपांग मिलकर मैक्सीलीपीड बनाते हैं ।

उपगण- एनोम्यूरा

उदर अविकसित व छोटा होता है ।

आवास एवम् प्रकृति

यह समुद्र में पाया जाता है । यह शरीर को गोलाकार कर घोंघे के खाली कवचों सहजीवी के रूप में रहता है ।

वितरण

विश्वव्यापी, यह अलास्का से केलीफोर्निया तक तथा फ्लोरिडा में पाया जाता है । मुंबई तथा गोआ के समुद्री किनारों पर पाया जाता है ।

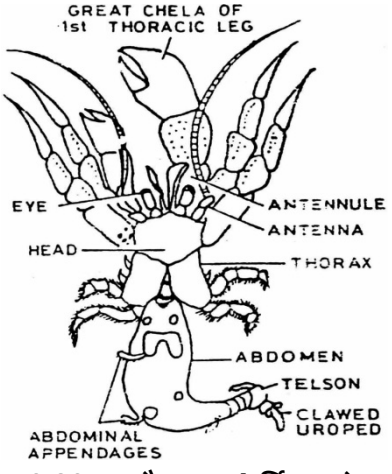

चित्र 6.20 : यूपैग्यूरस (हर्मिट - केकड़ा)

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: यह हर्मिट केकड़ा कहलाता है ।
2. शरीर घोंघे के कवच में रहने के कारण मुख्य रूप से विभेदित होता है ।
   I. शरीर होये असम्मित किंतु सिर वक्ष व उदर में विभाजित होता है ।
   II. शीर्ष पर एन्टीन्यूल, एन्टीना तथा वृन्तयुक्त संयुक्त नेत्र होते हैं ।
   III. वक्षीय उपांगों में पहले तीन जोड़ी मैक्सलीपीड तथा शेष 5 जोड़ी टाँगों में विभेदित होती है।
   IV. इनमें पहली वक्षीय टाँग बहुत बड़ी एवम् मजबूत होती है इनमे दाहिनी टाँग अपेक्षाकृत बड़ी होती है ।
   V. खतरे के समय चिमटी रूपी बड़ी टाँगे कवच को बंद करने का कार्य करती है ।
4. उदर के बायीं ओर 2 या 3 अविकसित छोटे उपांग होते हैं किंतु दाहिने भाग पर उपांग अनुपस्थित होते हैं ।
5. अंतिम यूरोपोड छोटे हुक के समान होते हैं ।

विशिष्ट लक्षण

यह सजीव का अच्छा उदाहरण है । यह समुद्री एनीमोन के साथ रहता है यह अपने उपांगों द्वारा एनीमोन को एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाता है बदले में समुद्री एनीमोन इसकी रक्षा का कार्य करती है ।

केकड़ा (Crab)

संघ - आथ्रोपोडा

वर्ग - क्रस्टेसिया

उपवर्ग - मैलाकॉस्ट्रेका

गण - डेकापोडा

उपगण - ब्रेकीयूरा

उदर अविकसित एवं छोटा, वक्ष भाग से स्थायी रूप से जुड़ा हुआ

श्रेणी - केकड़ा

आवास एवं प्रकृति

यह चट्टानों के नीचे, अथवा कीचड़ में तथा छिछले जल में पाया जाता है । इनका प्रजननकाल बसन्त ऋतु होता है ।

वितरण

विश्वव्यापी, मुख्य रूप से यूरोप अमेरिका तथा भारत में पाया जाता है ।

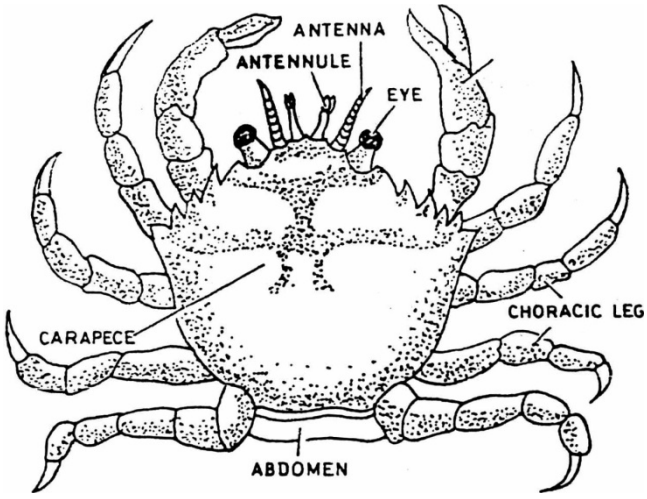

चित्र 6.21 केकड़ा

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: चट्टानी केकड (rock crab) कहलाता है ।
2. शरीर पृष्ठ अधर दिशा से दबा हुआ होता है । इसमें शिरोवक्ष बड़ा होता है जबकि उदर छोटा तथा ठूँठ के समान होता है ।
3. शिरोवक्ष की चौड़ाई, लम्बाई की अपेक्षा अधिक होती है ।
4. केरापेस मध्य में तथा एपीस्टोम (epistome) से जुड़ा होता है ।
5. रॉस्ट्रम (rostrum) अनुपस्थित होता है ।
6. एन्टीन्यूल, एन्टीना छोटे होते है । नेत्र वृन्तयुक्त संख्या में 2 तथा केरापेस पर उपस्थित कोटरों में स्थित होते है ।
7. पहली 3 जोड़ी उपांग वक्षीय मेक्सीलीपीड होते हैं तथा शेष टाँगे गमन के लिये विभेदित रहती है । यूरोपोड अनुपस्थित होता है ।
8. उदर अण्डों के थामने का कार्य करता है ।
9. लार्वा प्रावस्थाओं में जोइया (zoaea) प्रावस्था होती है जो परिवर्धित हो मेगालोपा (megalopa) बनती है ।
10. यह आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण है । यह भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है ।

मेन्टिस (प्रेइंगमेन्टिस) [Mantis (Praying-mantis)]

संघ - आथ्रोपोडा

उपसंघ- मेण्डीब्यूलेटा

वर्ग - इन्सेक्टा

03 जोड़ी टाँगे उपस्थित

उपवर्ग- टेरीगोटा (Pterygota)

पंख उपस्थित

गण- मेन्टोडिया (Mantodea)

अग्रपाद शिकार ग्रहण करने हेतु परिवर्धित होते हैं । अग्रवक्ष अत्यधिक लम्बाकार होता है ।

श्रेणी - मेन्टिस

आवास एवम् प्रकृति

सामान्यतया: यह बाग में घास तथा हरी पत्तियों पर पाया जाता है । यह परभक्षी माँसाहारी होता है ।

वितरण

यह उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका, यूरोप के दक्षिणी भागों तथा एशिया के पश्चिमी भागों में पाया जाता है । भारत में यह इन्डो-मलाया क्षेत्र में पाये जाते हैं ।

सामान्य लक्षण

1. सामान्यतया प्रेइंग मेन्टिस कहलाता है । क्योंकि इसकी पहली जोड़ी टाँगे ऊपर उठी हुई एक दूसरे के पास 'प्रार्थना की मुद्रा' में रहती है ।
2. शरीर सिर, वक्ष तथा उदर में विभाजित होता है ।
3. आँखे बड़ी-बड़ी तथा गतिशील त्रिभुजाकार शीर्ष पर स्थित होती है ।
4. मुखांग काटने व चबाने का कार्य करते है ।

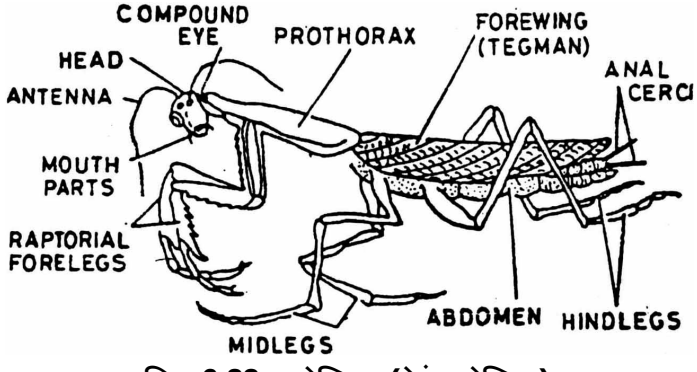

चित्र 6.22 : मेन्टिस (प्रेइंग मेन्टिस)

5. सिर पर संयुक्त नेत्र, एन्टीनी पाये जाते हैं ।
6. अग्रवक्ष (prothorax) लम्बा व सिर से संयुक्त रहता है ।
7. वक्ष पर 2 जोड़ी पंख तथा तीन जोड़ी टाँगे होती है । पहली जोड़ी टाँगे कठोर, मजबूत व चिमटी स्वरुप होती है ।
8. उदर में 10 खण्ड होते है । उदर के आखिरी खण्ड पर 1 जोड़ी गुद्रीयलूम (anal cerci) होता है ।
9. इनमें बड़ी प्रजाति छोंटी प्रजाति का अर्थात् मादा मैथुन के समय नर का भक्षण भी करती जाती है । इसके नर को पिंजरे में रखकर मेंटिस कुश्ती का प्रदर्शन किया जाता है ।

विशिष्ट लक्षण

देह का रंग वातावरण के प्रति अनुकूलित होता है । अत: तुरन्त पहचाना नहीं जा सकता है । इसकी कई प्रजातियाँ पायी जाती है । मेंटिस रेलिग्योसा (mentis religiosa) अति सामान्य जाति है ।

मधुमक्खी (Honey Bee)

संघ- अथ्रोपोडा
उपसंघ- मेण्डीब्यूलेटा
वर्ग- इनसेक्टा
उपवर्ग- टेरीगोटा
गण- हाइमैनोप्टेरा
2 जोड़ी पंख उपस्थित, मुखांग चबाने व चाटने के लिये विभेदित
श्रेणी - एपिस (Apis)

आवास एवम् प्रकृति

यह एक सामाजिक कीट है यह निवह (colony) बनाकर छत्तों (beehive) में रहती है । यह बहुरूपी (polymorphic) प्राणी है जिसमें नर, मादा व श्रमिक होते है । एक छत्ते में लगभग 50, 000 से 80, 000 मधुमक्खियाँ रहती है ।

वितरण

विश्वव्यापी अथवा सर्वव्यापी

सामान्य लक्षण

1. सामान्य भाषा में मधुमक्खी कहलाती है ।
2. शरीर सिर, वक्ष व उदर में विभाजित होता है ।
3. मादा आकृति में सबसे बडी होती है तथा अण्डे देने का कार्य करती है ।
4. श्रमिक आकृति में छोटी होती है । इसका सिर त्रिकोणाकार इस पर एक जोड़ी संयुक्त नेत्र, तथा एन्टीनी पाये जाते हैं ।
5. अन्य मुखांग पार्श्व सतह पर दिखाई देते हैं ये खुरचने (rasping) फूलों का रस चूसने तथा चाटने (lapping) के लिए अनुकूलित होते हैं ।

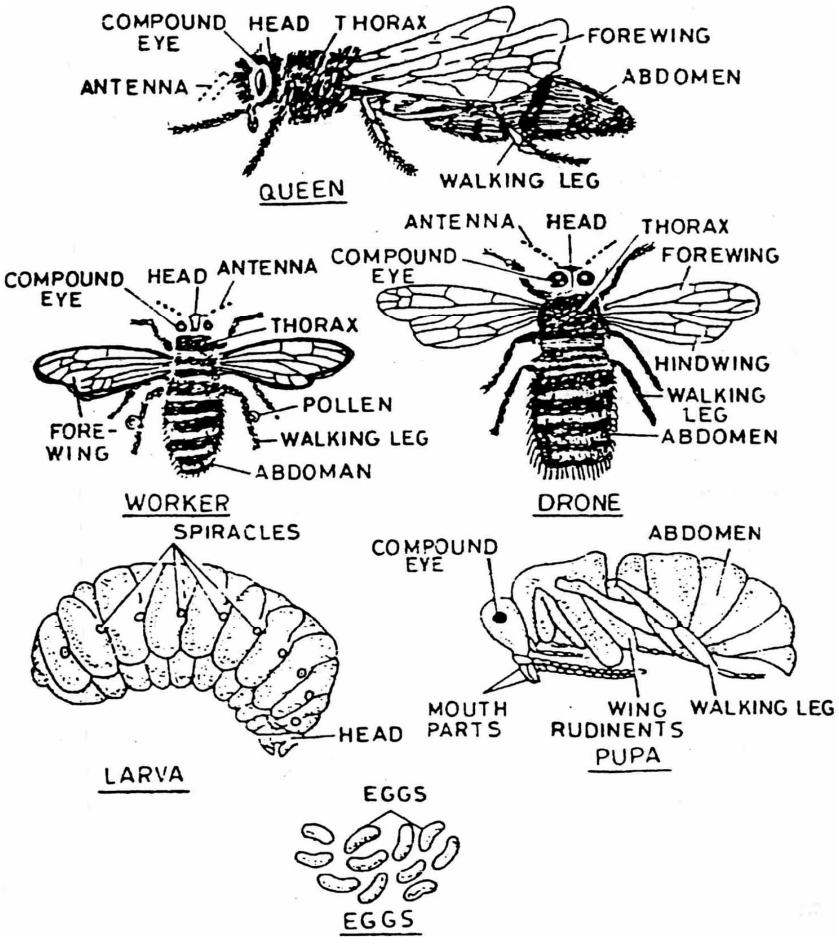

चित्र 6.23 : मधुमक्खी

6. वक्ष तीन भागों में बँटा होता है । प्रत्येक भाग पर एक जोड़ी टाँगे पायी जाती है । प्रत्येक टाँग पर पराग (pollen) साफ करने के लिये (bristles) ब्रिसल होते हैं । आखिरी जोड़ी टाँगों पर पराग टोकरी (pollen basket) होती है जिसमें पॉलन भरे जाते हैं ।
7. उदर उपांग रहित होता है किंतु अंतिम खण्ड पर एक विष ग्रंथि व डंक होता है । उनका कार्य मधु निर्माण, छत्तों की सफाई तथा लारवों की सेवा करना है ।
8. रानी का उदर परों से बाहर निकला हुआ लम्बा होता है । इसका मुख्य कार्य अण्डे देना है। रानी व नौकर निषेचित (fertilized) अण्डों से उपजते हैं ।
9. ड्रोन (Drone) - यह नौकर से बड़ी व मोटी होती है । पृष्ठ पर दोनों नेत्र एक दूसरे से मिले होते हैं । इनमें मेण्डीबल मोम नहीं बनाते है । इनमें डंक पाया जाता है । ये अनिषेचित अण्डों से उपजते है ।
10. यह उपयोगी प्राणी है । क्योंकि इसे मोम व शहद की प्राप्ति होती है जो मनुष्य के काम आता है । चिकित्सकीय दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण है ।

लोकस्ट - टिड्डी (Locusta)

फाइलम - आथ्रोपोडा

उपसंघ - मेण्डीब्यूलेटा

वर्ग - इन्सेक्टा

उपवर्ग - टेरीगोटा

गण - ऑरथोप्टेरा (Orthoptera)

पंख सीधे (straight wing) होते हैं अग्र पंख कठोर पारमासी संकरे तथा पश्च पंख झिल्लीमय चौड़े होते हैं ।

आवास एवम् प्रकृति

ये एकल तथा शाकाहारी होते हैं । वनस्पति बाहुल क्षेत्रों में पाये जाते हैं ये घास तथा हरे पौधों को भोजन के रूप में प्रयोग करते हैं ।

वितरण

ये अफ्रीका, अरब, भारत, मेक्सिको, जापान, फिलीपीन्स, अफगानिस्तान तथा अमेरिका में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: यह रेगिस्तानी टिड्डा (desert locust) के नाम से जाना जाता है ।
2. इसका रंग घास व वनस्पति के समान हरा व पीला होता है । ।
3. शरीर लगभग 6 सेमी लम्बा सिर, वक्ष तथा उदर में विभाजित होता है ।
4. शीघ्र बड़ा होता है इसकी पृष्ठ पार्श्वीय सतह पर संयुक्त नेत्र पाये जाते हैं मुख नीचे की ओर मुड़ा हुआ, स्व जोड़ी श्रृंगिकायें (antennae) तथा काटने व चबाने के मुखांग उपस्थित होते हैं ।

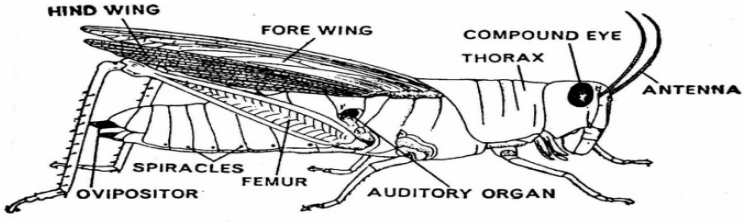

चित्र 6.24 :

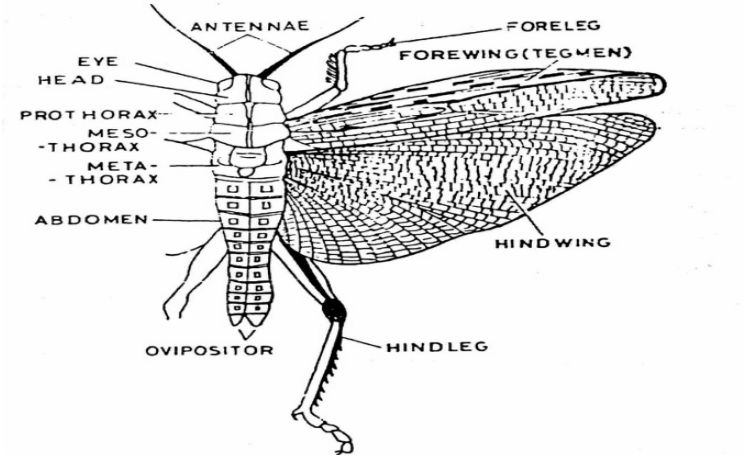

चित्र 6.25 : लोकस्ट - टिड्डी

5. तीन जोड़ी चलन टाँगे पायी जाती है । पश्च टाँगों की फीमर विकसित होने के कारण ये काफी दूर तक उछल लेता है ।
6. दो जोड़ी पंख पाये जाते हैं । अग्र पंख मोटे चमड़ी (leathery) के होते हैं जबकि पश्च पंख झिल्लीनुमा होते है ।
7. उदर 11 खण्डों का बना होता है प्रत्येक खण्ड के अधर पार्श्व सतह पर स्पाइरेकल उप. होते हैं ।
8. नर व मादा अलग-अलग होते हैं नर में एनल स्टाइल (anal style) व मादा में अस्पष्ट ओवीपोसिटर ovipositor) पाया जाता है ।
9. यह यूथी तथा प्रवासी दो प्रावस्थाओं में रहता है । यूथी (solitary) प्रावस्था के दौरान यह पीले रंग का तथा प्रवासी (migratory) प्रावस्था के समय यह गुलाबी रंग का होता है । प्रवास के समय ये अफ्रीका से भारत के मरु स्थानों तक पहुँच जाते हैं ।

विशिष्ट लक्षण

यह तीन प्रकार से नुकसानदायक है ।

1. ये हरे पौधों तथा फसल को नुकसान पहुँचाते हैं ।
2. हेल्मिन्थीज परजीवी में यह मध्य मेजबान (intermediate host) की भूमिका निभाते हैं ।
3. ये सरीसृप, चिड़िया, कीड़ों आदि के द्वारा भोजन के रूप में प्रयोग में लाये जाते हैं । मिस्र व अफ्रीका के आदिवासी इन्हें भोजन के रूप में खाते हैं ।

रेशम का कीड़ा (Silk worm moth)

संघ - आथ्रोपोडा

उपसंघ - मेण्डीब्यूलेटा

वर्ग - इनसेक्टा

उपवर्ग - टेरिगोटा

गण - लेपीडोप्टेरा (Lepidoptera)

शल्कीय भड़कीले लाल रंग के पंख, मुखांग चूसने के लिये विभेदित

आवास एवम् प्रकृति

यह शहतूत के पेड़ों पर पाला जाता है व यह शहतूत की पत्तियों का सेवन करता है ।

वितरण

यह मुख्यता: चीन में पया जाता है । अन्य देशों में भी इसे पाला जाता है । इसके प्यूपा से रेशम बनता है । जापान व भारत में भी पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. शरीर लगभग 4-5cm. लम्बा, बालों से ढ़का होता है ।
2. सिर पर एक जोड़ी संयकुत नेत्र, एक जोड़ी एन्टीनी तथा एक सूँड (proboscis) होते हैं ।
3. वक्ष पर 2 जोड़ी पंख तथा 3 जोड़ी टाँगें होती है ।

4. लार्वा (कैटरपिलर) का शरीर सिर, धड़ व उदर में विभाजित होता है । इसका जीवनकाल 15 दिन होता है । इसके सिर की लेबियल ग्रंथियों द्वारा रेशम निर्माण होता है ।
5. पूर्व विकसित लार्वा अपने ऊपर रेशम का आवरण बना लेता है जो कोकून (cocoon) कहलाता है व स्वयं प्यूपा में बदल जाता है । इससे 1000 से 1500 मीटर धागा प्राप्त होता है ।
6. कोकून के 12-13 दिन पश्चात् प्रौढ़ अर्थात् इमैगो (imago) बाहर आता है ।
7. रेशम प्राप्त करने के लिये इसे खोलते गर्म पानी में डुबोया जाता है जिससे प्यूपा मर जाता है व धागा रोल पर लपेट दिया जाता है ।

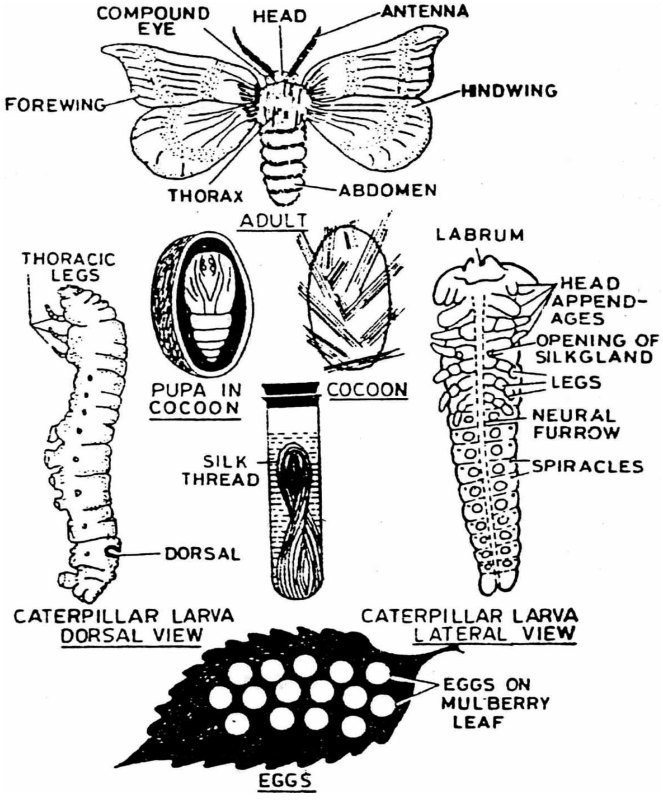

चित्र 6.26 : रेशम के कीड़े का जीवन चक्र

विशिष्ट लक्षण

इससे विभिन्न प्रकार के सिल्क की प्राप्ति होती है ।

भृंग (Beetle)

संघ -	आथ्रोपोडा
उपसंघ -	मेण्डीब्यूलेटा
वर्ग -	इनसेक्टा
उपवर्ग -	टेरीगोटा
गण -	कॉलिओप्टेरा (Coleoptera)

अग्र पंख मोटे इलिट्रा में रूपान्तरित तथा ऊपर, पश्च पंख झिल्लीरूपी तथा अग्र पंख के नीचे स्थित होते हैं ।

श्रेणी - भृंग

आवास एवम् प्रकृति

ये गोबर के ढ़ेरों पर, अनाज की बोरियों पर तथा खेत खलिहानों में पाये जाते हैं । प्राय: गड्ढा बनाकर रहते हैं ।

वितरण

यह भारत, मलेशिया, बर्मा, सीलोन तथा अमरिका में पाया जाता है । भारत में ये राजस्थान, पंजाब, गुजरात, तथा हरियाणा में पाये जाते हैं ।

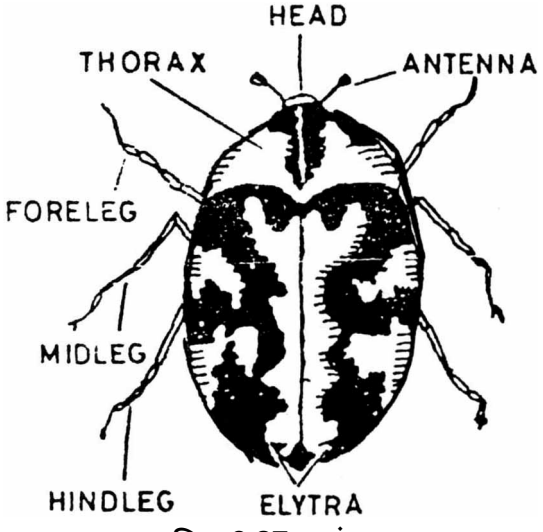

चित्र 6.27 : भृंग

सामान्य लक्षण

सामान्यत: गुबरेला कहलाते हैं । (गोबर में पाये जाने वाले)

1. शरीर गहरे रंग का, कठोर तथा सिर, वक्ष और उदर में विभाजित होता है ।
2. सिर पर एक जोड़ी बड़े संयुक्त नेत्र, एक जोड़ी खण्डयुक्त एन्टीनी होते हैं ।
3. मुखांग काटने व चबाने के अनुकूल होते हैं । मेण्डीबल विकसित, बड़े तथा कठोर होते हैं
4. अग्र वक्ष लम्बा होता है तथा सिर से जुड़ा रहता है ।
5. वक्ष कठोर तथा काइटिन का बना होता है ।
6. उदर 10 खण्ड युक्त होता है पश्च खण्ड छोटा होता है व उस पर काइटिन का शिश्न (penis) होता है ।
7. देह पर दो जोड़ी पंख पाये जाते हैं । अग्र पंख कड़े तथा मध्य रेखा पर एक दूसरे से मिले रहते हैं । पश्च पंख झिल्ली के समान होते हैं ये अग्र पंखों के नीचे तथा उदर को पूरी तरह ढ़के रहते हैं ।
8. 3 जोड़ी टाँगें पायी जाती है ।

विशिष्ट लक्षण

ये अनाज को नुकसान पहुँचाते हैं । इसके अलावा ये ऊन, फर, भूसा आदि को भी हानि पहुँचाते है । इसके अलावा गोबर व मल को खाकर स्वच्छता रखता है । इस प्रकार बनी खाद से मृदा का उपजाऊपन बढ़ता है ।

श्वेत सूँडी (White Grub)

वर्गीकरण - भृंग के समान

आवास एवम् प्रकृति

यह फलों सब्जियों तथा फूलों पर पाया जाता है । यह खरीफ की फसल को नुकसान पहुँचाता है। लार्वा व प्यूपा जमीन के अंदर रहते हैं । वयस्क रात्रिचर होता है ।

वितरण

विश्वव्यापी, भारत में पंजाब, हरियाणा, गुजरात, तथा राजस्थान में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. यह हल्के भूरे या काले रंग का लगभग 18 मिमि. लम्बा तथा 7 मिमि. चौड़ा होता है ।
2. रात्रिचर, तथा पौधों की जड़ों तथा पत्तियों (बेर, नीम, गूलर) को भोजन के रूप में प्रयोग में लाता है ।

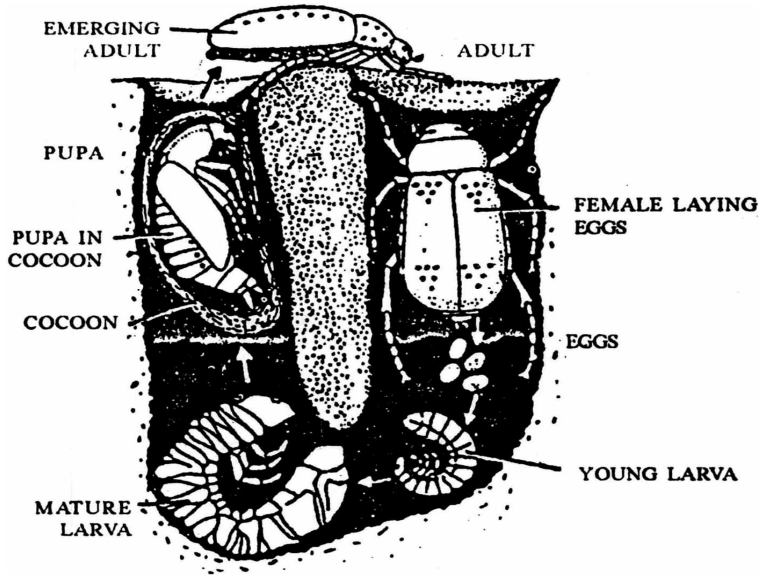

चित्र 6.28 : भृंग (सिटोफिलस)

3. इसका सिर भूरे रंग का, देह धुँधले रंग की तथा पश्च भाग चमकीला तथा चिकना होता है।
4. इसमें 6 विकसित टाँगें पायी जाती है ।
5. देह को अंतिम खण्ड पर सूक्ष्म रोमों की 2 पंक्तियाँ पायी जाती है ।
6. इनका जीवन चक्र 1-4 वर्ष में पूरा होता है ।
7. यह अपने अण्डें मिट्टी में लगभग 30 से 150 मिमि. गहराई तक देते हैं
8. लार्वा व वयस्क दोनों ही फसल को नुकसान पहुँचाते हैं ।

काइटन (Chilton)

संघ - मॉलस्का (Mollusca)

अविखण्डित, द्विपार्श्वसम्मित, प्रवार (mantle) तथा अधरीय पाद (foot) उप.

वर्ग - एन्फीन्यूरा (Amphineura)

सिर छोटा, स्पर्शक व आँख अनुपस्थित,

गण - पॉलीप्लेकोफोरा (Polyplacophora)

पाद चपटा, पृष्ठीय कवच 8 पट्टियों का बना होता है ।

श्रेणी - काटनन (Sea Mouse) समुद्री चूहा

आवास एवं प्रकृति

समुद्री, छिछले पानी में चट्टान, खाली कवच, कोरल (coral) पत्थरों से चिपका हुआ पाया जाता है । यह रात्रिचर होता है दिन में चट्टानों की दरारों में रहता है संकट के समय शरीर को गोल (roll) कर लेता है । यह डायटम तथा शैवाल (algae) को खाता है (रेडुला (radula) की सहायता से) ।

वितरण

यह विश्वव्यापी होता है, छिछले पानी में पाया जाता है । किन्तु कुछ प्रजाति गहरे समुद्र में पायी जाती है ।

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: समुद्री चूहा (sea mouse) कहलाता है ।
2. शरीर तर्कु आकार का द्विपार्श्व सम्मित 1 से 10 सेमी. लम्बा होता है ।
3. शरीर में एक अस्पष्ट सिर, एक लम्बा, चपटा पाद (foot) तथा पृष्ठ पर प्रवार (mantle) के ऊपर कवच होता है । यह 8 अनुप्रस्थ पट्टियों का बना होता है ।

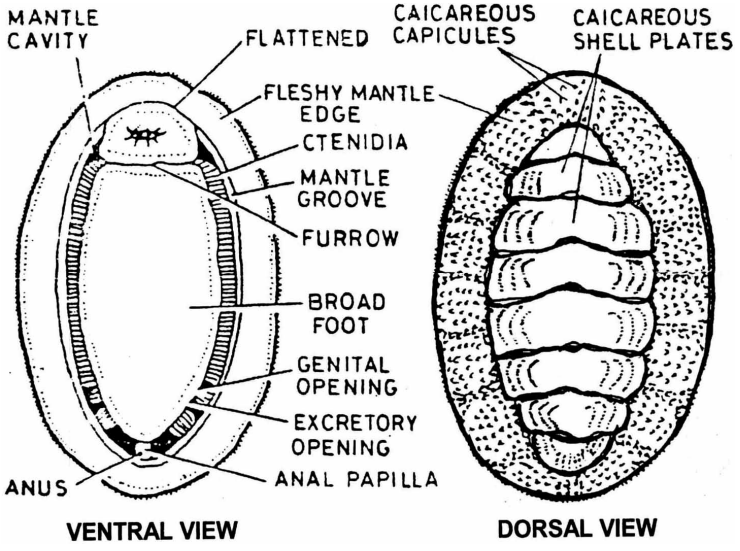

चित्र 6.29 : काइटन

4. सिर पर मध्य अधरीय मुख होता है । सिर के नीचे की ओर (foot) पाद होता है । सिर पर नेत्र तथा स्पर्शक अनुपस्थित होते हैं ।
5. प्रवार कवच के चारों ओर पेटी कीं तरह बाहर होता है इसके ऊपर अनेक नुकीली कंटिकायें पायी जाती है ।
6. पाद (foot) के चारों ओर क्लोम (gill) होते हैं ।
7. पाद (foot) के पश्च में एक मध्य अधरीय गुद्रछिद्र होता है इसके आगे एक जोड़ी उत्सर्जन छिद्र (excretory pare) उत्सर्जन छिद्र के आगे एक जोड़ी जननछिद्र होता है ।

विशिष्ट लक्षण

यह भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है । इसका पाद (seabeal) सीबीएल कहलाता है वैज्ञानिक प्रमाण है कि इसके कैरोटिन, जेन्थोफिन विटामिन A तथा क्लोरोफिल पाया जाता है।

एप्लीसिया (Aplysia)

फाइलम संघ:	मॉलस्का
वर्ग:	गेस्ट्रोपोडा (Gastropoda)
	सिर पर नेत्र व स्पर्शक उपस्थित, एक कपाटीय कवच
गण:	ऑप्रिस्थोब्रेकिया (Opisthobranchia)
	गिल हृदय के पीछे, कवच छोटा या अनुपस्थित
श्रेणी:	एप्लीसिया (Sea Hare)

आवास एवं प्रकृति

यह समुद् के छिछले जल में खरपतवार के आसपास पाया जाता है । यह आसपास के वातावरण के अनुसार रंग बदल लेता है । यह शाकाहारी होता है ।

वितरण

यह प्रशान्त महासागर हिन्द महासागर व अटलांटिक महासागर, भारत, वेस्टइंडीज तथा फ्लोरिडा के तटों पर पाया जाता है ।

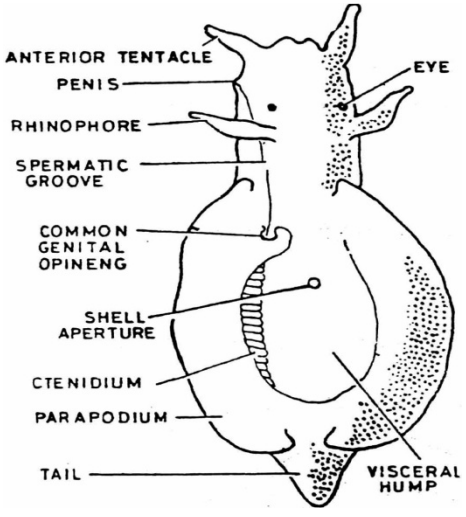

चित्र 6.30 : एप्लीसिया

सामान्य लक्षण

1. सामान्यतया: समुद्री खरगोश (sea hare) कहलाता है ।
2. शरीर कोमल, माँसल सफेद व हरे रंग का होता है ।
3. सिर पर 2 जोड़ी स्पर्शक पाये जाते हैं अग्र स्पर्शक लम्बे तथा पश्च स्पर्शक छोटे (राइनोफोर) होते है । इनके आधार पर 1 जोड़ी नेत्र पाये जाते है ।
4. देह का मध्य भाग पृष्ठ सतह पर उठा हुआ होता है यह कूबड (visceral hump) कहलाता है ।
5. प्रवार गुहा में वास्तविक कंकल-क्लोम (ctenidium) पाया जाता है ।
6. पैर पेशीय तथा लम्बा होता है इसके पार्श्व में पार्श्वपाद पाये जाते है जो माँसल अतिवृद्धियाँ होती है ।
7. कवच आन्तरिक होता है ।
8. यह उभयलिंगी होता है । इसमें एक जननननली व सामान्य जननछिद्र होता है ।

विशिष्ट लक्षण

छेड़ने पर यह बैंगनी गुलाबी रंग का द्रव छोड़ता है व अपना बचाव करता है । छोटे स्पर्शक राइनोफोर घ्राण अंग (olfactory organ) का कार्य करते है ।

साइप्रिया (Cypraea)

संघ- मॉलस्का

वर्ग- गैस्ट्रोपोडा

गण- पेक्टिनिब्रैंकिएटा

एक -कंकती (mono pactinate), गिल उपस्थित अथवा कंधे के समान

श्रेणी- साइप्रिया

आवास एवं प्रकृति

यह छिछले समुद्री जल में, व चट्टानों के आस-पास पथरीली जमीन पर पाया जाता है ।

वितरण

प्राय: हिन्द महासागर, प्रशान्त महासागर. अफ्रीका व संयुक्त राज अमेरिका में पाया जाता है ।

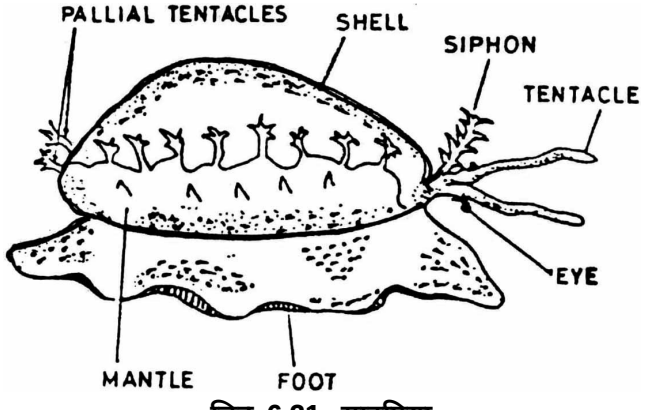

चित्र 6.31: साइप्रिया

सामान्य लक्षण

1. सामान्यतया: कौड़ी कहलाता है ।
2. कवच एककपाटीय, चमकीला, अण्डाकार व चिकना होता है । इसका द्वार लम्बा संकरा नलिका के समान होता है । पार्श्व में खाँच होती है ।
3. मेन्टल अर्थात् प्रवार तथा माँसल पाद (foot) सुंदर होता है ।
4. प्रवार के पार्श्ववलन कवच को पूरी तरह ढ़के रहते हैं इन पर प्रवार स्पर्शक (pallial tentacles) पाये जाते हैं ।
5. सिर पर एक जोड़ी नेत्र व स्पर्शक होते हैं ।
6. पैर (foot) रंगने में सहायक होता है ।

विशिष्ट लक्षण

इसके कवचों का उपयोग आभूषण बनाने में, घर तथा मंदिर में पूजा व सजावट आदि में होता है । प्राचीन काल में चौपड़ खेल में गोटी के रूप में काम में लिया जाता था । अफ्रीका के कबिलाई लोग मुद्रा के रूप में प्रयोग करते है ।

माइटिलस (समुद्री सीपी) [Mytilus (Sea mussel)]

संघ: मॉलस्का

वर्ग: पेलेसीपोडा (Pelycepoda) - द्विकपाटीय कवच

गण: फिलीब्रोकिएटा (Fillibranchiata)

गिल तंतु के समान लम्बे, पाद छोटा व बाइसल (byssal) ग्रंथि उप.

श्रेणी: माइटिलस

आवास एवं प्रकृति

यह समुद्र में 2 से 3 फेदम (fathams) नीचे चट्टान अथवा लकड़ी की सतह से चिपकी हुई पायी जाती है । यह स्थायी प्रकृति (sedentary) की होती है व प्लवक (planktous) को भोजन के रूप में प्रयोग में लेती है । यह छनित्र भक्षी (filter feeder) है ।

वितरण

सर्वव्यापी किन्तु मुख्यता: भारत, यूरोप और अमेरिका में पाया जाता है ।

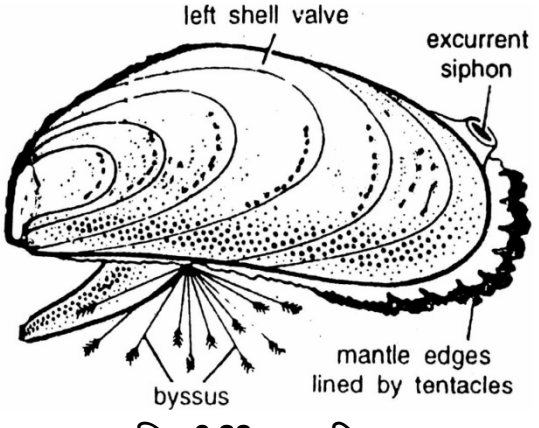

चित्र 6.32 : माइटिलस

सामान्य लक्षण

1. यह सामान्यत: समुद्री सीपी (sea mussed) कहलाता है ।
2. कवच के दोनों कपाट समान होते है । इसका अगला सिरा जहाँ अम्बों (umbo) होता है नुकीला एवं पिछला सिरा गोल होता है । कवच पर वृद्धि रेखायें पायी जाती है ।
3. पैर बेलनाकार होता है । जिसके पीछे (byssus threads) बाइसस तंतु पाये जाते हैं जो चिपकने में मदद करते है ये तंतु बाइसस ग्रंथि के स्रावण से बनते है ।
4. प्रवार (mantle) के सिरे झालर के समान होते है । इन पर स्पर्शक पाये जाते है, पास ही बर्हिवहि साइफन (exhalent siphon) पाया जाता है ।
5. अग्र सिरे को एडक्टर माँसपेशी (adductor muscles) बहुत छोटी व हासित होती है ।
6. गिल प्लेट की भाँति होते है ।

विशिष्ट लक्षण

इसे भोजन के रूप में खाया जाता है ।

पिंकटेडा (मुक्ता शक्ति) [Pinctada (Pearl Oyster)]

संघ- मालस्का

वर्ग- पैलेसीपोडा

गण- स्यूडोलेनेजी ब्रेकिएटा (Pseudo lamellibrabnchiata) साइफन अनुपस्थित

श्रेणी- पिंकटेडा

आवास एवं प्रकृति

यह केलीफोर्निया की खाड़ी में तथा समुद्र में किसी चट्टान पत्थर आदि से चिपकी रहती है ।

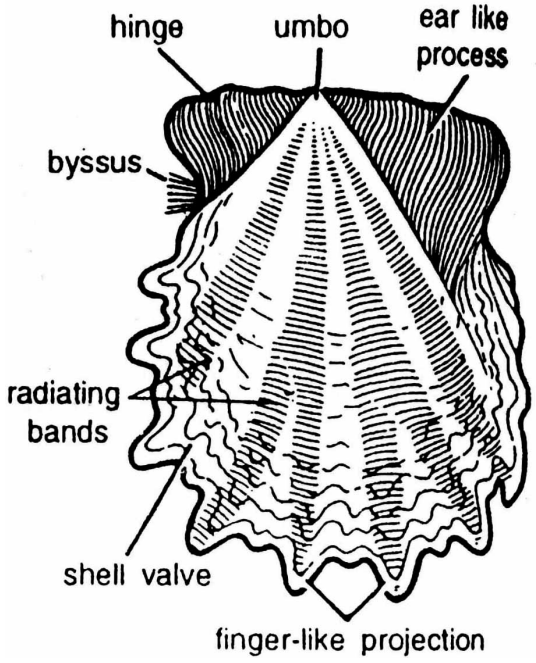

चित्र 6.33 : पिंकटेडा

वितरण

यह ठंडे प्रदेशों के अलावा सभी स्थानों पर पाया जाता है । यह हिन्द महासागर, जापान, अटलांटिक महासागर, श्रीलंका, आस्ट्रेलिया तथा फारस की खाड़ी आदि में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: पर्ल आयस्टर कहलाता है ।
2. कवच कपाट असमान होते हैं बांया पाट बड़ा तथा दायां पाट छोटा होता है ।
3. बांया पाट उत्तल व चट्टानों से चिपका रहता है जबकि दाहिना कपाट आंतरांगों को ढके रखता है ।
4. कवच की सतह खुरदुरी व अनियमित होती है ।
5. पैर अनुपस्थित होता है ।
6. कवच के अर्धांश के बाहरी तल अरीय दरारों युक्त होते हैं । इसके किनारे अंगुली रूपी प्रवर्धों में विभेदित होते हैं ।

विशिष्ट लक्षण

इनसे मोती प्राप्त किए जाते हैं । जो आभूषण बनाने के काम आती है । इसे मुक्ता निर्माण के लिए पाला जाता है । मोती उद्योग बड़ा व लाभकारी समुद्री उद्योग है ।

डेन्टेलियम [Dentalium (Elephant's tuschell)]

फाइलम: मॉलस्का

वर्ग: स्कैफोपोडा

अस्पष्ट सिर, कवच बेलनाकार अथवा नलिकाकार, दोनों सिरों से खुला होता है ।

श्रेणी: डेन्टेलियम

आवास एवं प्रकृति

यह समुद्र में पाया जाता है । उथले जल में रेत में बिल बनाकर रहता है । यह प्रोटोजोआ एवं डायटम को भोजन के रूप में प्रयोग में लेता है ।

वितरण

यह ध्रुवों के अलावा सभी समुद्रों में पाया जाता है । यह अमेरिका, यूरोप तथा प्रशान्त महासागर में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. सामान्यतया: इसे हाथी दाँत कवच कहते है ।
2. कवच नलिकाकार हल्का मुड़ा हुआ, लगभग 5cm. लम्बा होता है ।

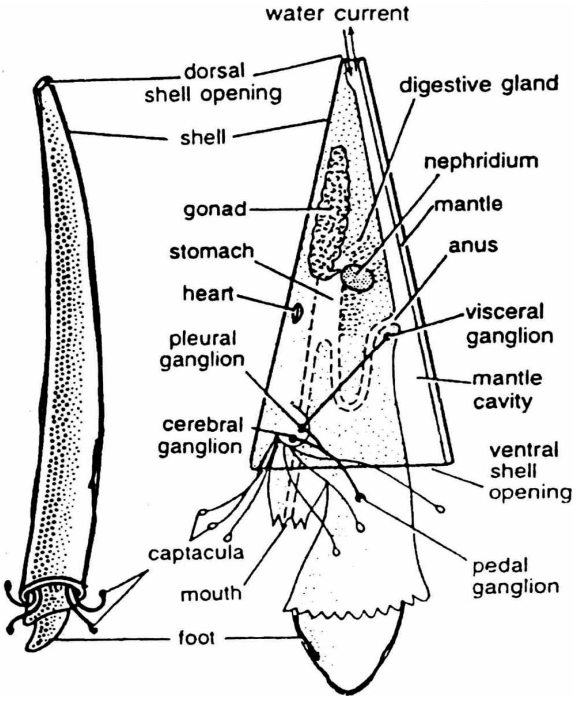

चित्र 6.34 : डेन्टेलियम

3. सिर अस्पष्ट व अवशेषी होता है व सुण्डिका (proposcis) के समान कवच से बाहर निकला हुआ होता है । सिर पर नेत्र व स्पर्शक अनुपस्थित होते है ।
4. पैर शंकु के समान, नुकीला, सुदृढ़ जो मिट्टी व कीचड़ में धँसने तथा बिल बनाने में सहायक होता है ।
5. श्वसन प्रवार (mantle) द्वारा होता है । गिल अनुपस्थित होते है ।
6. मुख के चारों तरफ केप्टेकुला (captacula) स्वाद ग्राही संरचनायें पायी जाती है । व इनके अंतिम सिरे पर चूषक होते है ।
7. लिंग (sexes) अलग-अलग होते है ।

विशिष्ट लक्षण

अमेरिका में लाल भारतीय (Red Indian) इनके खाली कवचों को मुद्रा के रूप में उपयोग करते है । अधिक लम्बे डेन्टोलियम से अधिक मुद्रा प्राप्ति होती है । लगभग 6.5 cm. के कवच की कीमत 5 डॉलर होती है ।

लोलिगो (स्किवड) [Loligo (sea squid)]

संघ : मॉलस्का

वर्ग : सिफेलोपोडा

सुविकसित सिर, नेत्र व रेडुला उप., पैर भुजाओं में रूपान्तरित व सिर पर पाये जाते हैं ।

गण : डेकापोडा (Decapoda)

दस भुजायें (8 भुजायें + 2 स्पर्शक) कवच आंतीरक

श्रेणी : लोलिगो

आवास एवं प्रकृति

समुद्र में पाया जाने वाला जन्तु है यह गर्म समुद्रो, तटों पर व कभी-कभी गहरे पानी में भी पाया जाता है । यह रंग बदलने की क्षमता रखता है । प्राय: स्लेटी रंग का लाल धब्बों वाला जन्तु है ।

वितरण

सर्वव्यापी, प्रशान्त महासागर, अटलांटिक महासागर, चीन भारत तथा संयुक्त राज अमेरिका में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. देह द्विपार्श्व सममित, बेलनाकार, सिर व धड़ में विभाजित व भूरे रंग की होती है ।
2. शीर्ष पर एक जोड़ी नेत्र, मुख, 8 भुजायें व 2 स्पर्शक पाये जाते है । छोटी भुजाओं पर कतारों में चूषक होते है जो शिकार को पकड़ने के काम आते हैं । लम्बी भुजाओं में चूषक अंतिम सिरे पर होते हैं तथा ये दूर से शिकार पकड़ लेते हैं ।

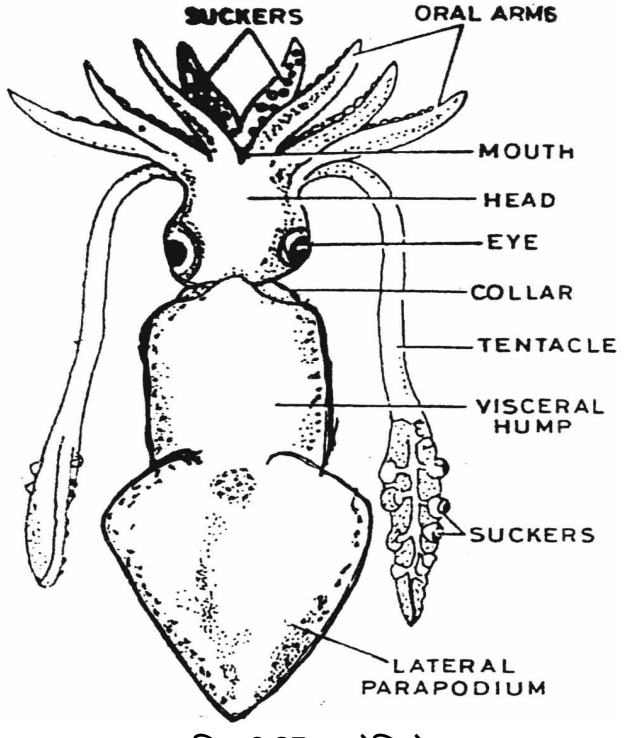

चित्र 6.35 : लोलिगो

3. मुख के नीचे नलाकार फनल (साइफन) होता है जो जेट प्रोपल्सन (jet propulsion) आधार पर कार्य करता है । जिसके फलस्वरुप प्राणी तेज गति से तैरता है ।
4. धड़ के ऊपर मोटा माँसल प्रवार (mantle) होता है । पार्श्व में मेनल दो त्रिकोणाकार प्रवर्धों अर्थात् पंखों (jins) में विभेदित होता है ।
5. यह एक लिंगी होता है व प्रत्यक्ष परिवर्धन पाया जाता है ।

विशिष्ट लक्षण

इसमें स्याही ग्रंथि (ink gland) पायी जाती है खतरे के समय काली स्याही छोड़कर अपना बचाव करता है । चीन और इटली में इसे भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है ।

नॉटिलस (Nautilus)

संघ - मॉलस्का

वर्ग - सिफेलोपोडा

गण - टेट्राब्रेंकिया (Tetrabranchea)

गिल, वृक्क व आलिद संख्या में 4-4 होते हैं ।

श्रेणी - नॉटिलस

आवास एवं प्रकृति

यह रात्रिचर समुद्री तट पर रेंगने वाला जंतु है यह रात के समय भोजन की खोज में निकलता है व केकड़े व कवच चाले जंतुओं को खाता है ।

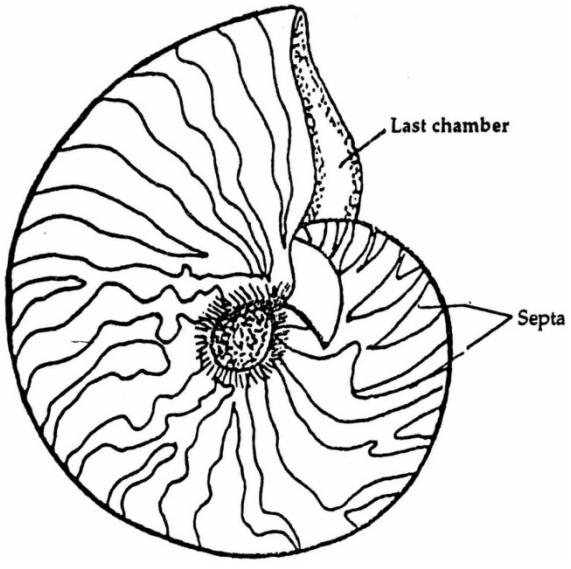

चित्र 6.36 : नॉटिलस

वितरण

यह प्रशान्त महासागर तथा हिन्द महासागर में पाया जाता है ।

सामान्य लक्षण

1. सामान्यतया: पर्ली नॉटिलस (pearly nautilus) कहलाता है ।
2. कवच सर्विलाकार, कुंडलित, बाहर पीले पूरे रंग की धारियाँ पायी जाती है अंदर से यह कपाट द्वारा 2 भागों में बँटा रहता है । पट्टिकायें मध्य में छिद्रित होती है ।
3. शीर्ष सुस्पष्ट, बड़ा तथा शंक्वाकार होता है । इस पर मध्य में मुख (जबड़े युक्त) तथा एक जोड़ी संयुक्त नेत्र हाते हैं ।
4. मुख के चारों ओर दो चक्रो में परिग्राही (prehensile) स्पर्शक लगे होते हैं किन्तु उन पर चूषक नहीं होते है ।

5. दो बड़े तथा पृष्ठीय स्पर्शक एक पृष्ठीय स्पर्शक एक पृष्ठीय छत्र (hood) में विभेदित होते हैं छत्र शेष स्पर्शक तथा मुख को ढकता है । जब शरीर कवच में चला जाता है तब यह छत्र कवच के मुख को बंद करने का कार्य करता है ।
6. शीर्ष के नीचे एक साइफन होता है जिससे तैरते समय जल की तेज धारा छोड़ी जाती है तथा जन्तु तेजी से गमन करता है ।

विशिष्ट लक्षण

सिफैलोपोडा वर्ग को टेट्राबेटिकया गण का यह केवल एक ही जीवित सदस्य है । इसका कवच सजावट के काम आता है । इस गण के सभी सदस्य विलुप्त हो चुके है ।

संघ (Phylum) : इकाइनोडर्मेटा (Echonodermata)

तारा मीन (Starfish)

संघ : इकाइनोडर्मेटा (Echenodermata)

सीलोम युक्त, पंच अरीय सम्मित, त्वचा कंटकीय, जल संवहनी तत्र उपस्थित

उपसंघ : इल्यूथिरोजोआ (Eleutherozoa)

स्वतंत्र जीवी, मुख निचले तल पर

वर्ग : एस्टीरॉइडिया (Asteroidea)

देह पंचकोणीय, पाँच भुजायें उप. भुजाओं पर खुली वीथि खाँचे उप.

गण : फोर्सिपुलोटा (Forcipulata)

सवृन्त छोटी, चिमटी समान पेडिसिलेरी उप.

आवास एवं प्रकृति

यह समुद्री जल में लगभग 200 फेदम गहराई तक पाया जाता है । तथा रात्रि को अधिक सक्रिय रहता है ।

यह प्रशान्त महासागर हिन्द महासागर, भारत, दक्षिणी अमेरिका, पनामा, ब्रिटेन आदि में पाया जाता है ।

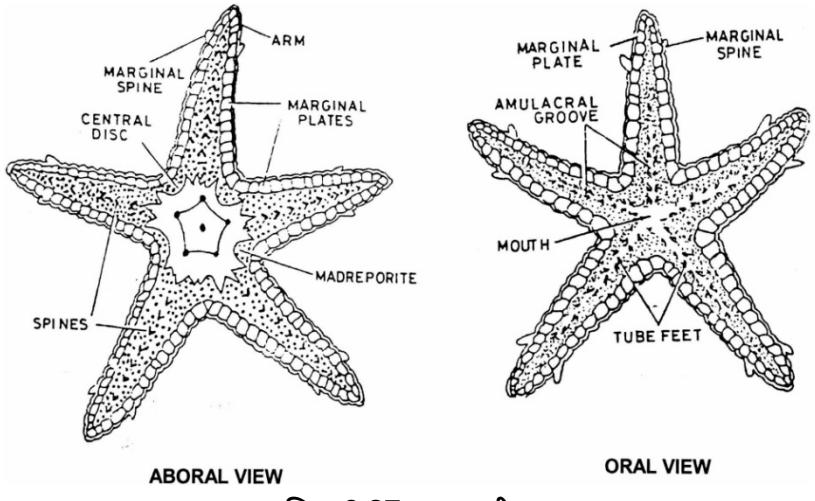

चित्र 6.37 : तारामीन

सामान्य लक्षण

1. सामान्यतया: सी पेन्टागोन (sea pentagon) कहलाता है ।
2. शरीर पंच अरीय सम्मित, पृष्ठ से प्रतिपृष्ठ की ओर चपटा होता है ।
3. मध्य डिस्क (central disc) तथा भुजायें समेकित (fused) रहती है ।
4. सतही पट्टी चौड़ी व स्पष्ट होती है ।
5. शरीर में अपमुख तल (aboral surface) तथा मुखीय तल (oral surface) पायी जाती है ।
6. मुखीय तल पर मुख व एम्बूलेक्रल खाँच पाई जाती है तथा गमन के लिए 2 पंक्तियों में नालपाद (tube feet) पाये जाते है । अपमुखीय तल पर गुदा होती है ।
7. अपमुखीय तल पर केन्द्रीय चक्रिका पर मेडिरपोराइट (madreporite) पाया जाता है यह जल स्वतंत्र तंत्र का भाग है ।
8. परिवर्धन अप्रत्यक्ष होता है । बाइपिन्नेरिया (bipinnaria) लार्वा पाया जाता है जो कुछ सप्ताह पश्चात् ब्रेकियोलेरिया (brachiolaria) में बदल जाता है ।

विशिष्ट लक्षण

इसमें पुनरुदभवन की क्षमता पायी जाती है । क्षतिग्रस्त भाग पुन: निर्मित हो जाता है ऑटोटोमी (autotomy) पायी जाती है अर्थात् यदि कोई इसकी भुजा पकड़ लेता है तो यह वहाँ से भुजा को तोड़ लेती है तथा वह भाग पुन: विकसित हो जाता है यह हानिकारक जीव है मोती की सीप का भक्षण कर उसे हानि पहुँचाता है ।

इकाइनस (Echinus)

संघ : इकाइनोडर्मेटा

उपसंघ : इल्यूथिरोजोआ

वर्ग : इकाइनोइडिया (Echinoidea)

शरीर अण्डाकार, गोल, कवचयुक्त व कवच के अंदर विभिन्न अंग उप.

गण : डाइडीमेटोइडिया (Diademotoidea)

अरस्तु की लालटेन (Aristotle's lantern) उप. खोल कड़ा, एबओरल सतह पर गुदा द्वारा उप.

श्रेणी : इनकाइनस

आवास एवं प्रकृति

विश्वव्यापी यह समुद्र में तटवर्ती सतहों पर लगभग लगभग 5000 मीटर गहराई तक पाया जाता है ।

वितरण

यह प्रशान्त महासागर अटलांटिक महासागर तथा मेडिटेरियन सागर में पाया जाता है ।

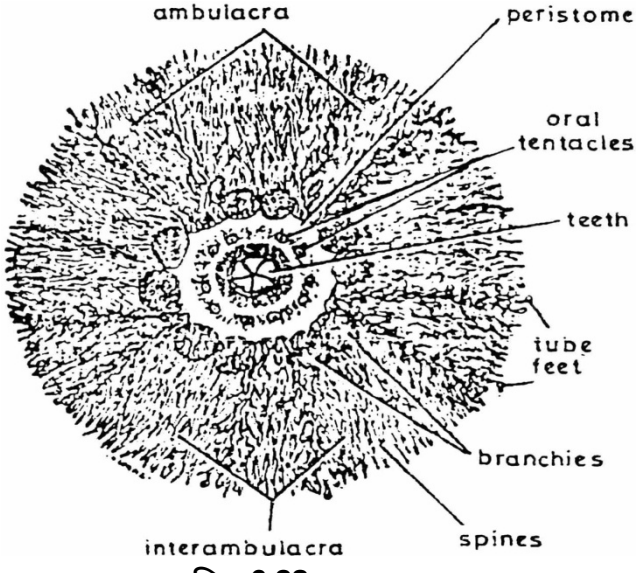

चित्र 6.38 : इकाइनस

सामान्य लक्षण

1. सामान्यतया: सी अर्चिन कहलाता है ।
2. यह गोलाकार, कंटिकीय भूरे अथवा काले रंग का होता है ।
3. शरीर कैल्शियम कार्बोनेट के कोरोन से ढ़की रहती है । कवच के ऊपर कंटिकायें पायी जाती है ।
4. मुखीय तल चपटा व अपमुखीय तल गुम्बदाकार होता है ।
5. शरीर पर 5 वीथि तथा 5 अन्तरवीथि क्षेत्र पाये जाते हैं प्रत्येक वीथि क्षेत्र में नाल पाद की 2 पंक्तियाँ होती है । नालपादों पर चूषक पाये जाते हैं ।
6. कंटकों के बीच बीच में वृन्त युक्त पाद पेडिसिलेरी पाये जाते है ये 3 जबड़े वाले होते हैं ।
7. मुखीय सतह पर मुख तथा उसमें धवर्ण उपकरण या अरस्तु की लालटेन (Aristotle's lantern) पाये जाते हैं । मुख के चारों ओर पीर मुख या ओष्ठ पाये जाते हैं ।

विशिष्ट लक्षण

पाचनतंत्र अरस्तु की लालटेन (Aristotle's lantern) नामक धवर्ण उपकरण पाया जाता है । इसके 5 भाग होते हैं एलवियोलस (alveolus), एपीफाइसिस (ephiphysis), रेतुला (Ratula), रेडियस (Radius) तथा टूथ (tooth). कुछ देशों में इनके अंगों को शौक से खाते है।

ओफियोथ्रिक्स (Ophiothrix)

संघ : इकाइनोडर्मेटा

उपसंघ : इल्यूथ्रेरोजोआ

वर्ग : ऑफियूरॉइडिया (ophiuroidea)

केन्द्रीय बिम्ब व भुजायें स्पष्ट व ठोस

गण : ओफियूरी (Ophiural)

5 भुजायें पार्श्व से मुड़ी हुई

श्रेणी : ओफ्रियोथ्रिक्स

आवास एवं प्रकृति

यह समुद्री किनारों पर छिछले पानी में पाया जाता है यह सूक्ष्मजीवी को भोजन के रूप में प्रयोग करता है ।

वितरण

विश्वव्यापी होता है ।

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: भंगुर तारा (Brittle star) कहलाता है ।

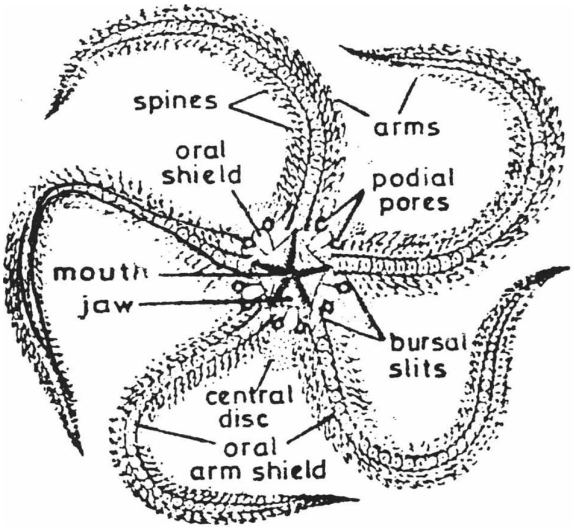

चित्र 6.39 : ओफियोथ्रिक्स

1. शरीर के मध्य में केन्द्रीय बिम्ब (Central disc) पायी जाती है । जिसके बाहरी किनारे पर पाँच लम्बी ठोस भुजायें पायी जाती है ।
2. मिट्रिपारोइट ओरल सतह पर पाया जाता है ।
3. प्रत्येक भुजा की बाहरी सतह पर कंकाली प्लेटों की 4 अनुदैर्ध्य पंक्तियाँ पायी जाती है ।
4. भुजाओं पर नुकीले काँटों की 3 पंक्तियाँ पायी जाती है तथा छोटे -छोटे नाल पादों (tube feet) की पंक्ति पायी जाती हे ।

विशिष्ट लक्षण

भुजा को पकड़ने पर यह बिखर जाती है अत: इसे ब्रिटलस्टार कहते हैं बाद में यह पुनरुदभवन द्वारा पुन: विकसित हो जाती है ।

कुकुमेरिया (समुद्री जीव) [Cucumaria (Sea-cucumber)]

संघ: इकाइनोडर्मेटा

उपसंघ: इल्यूथेरोजोआ

वर्ग: होलोपूरॉइडिया Holophuroidea)

देह लम्बी मुख व अपमुख सतह के सापेक्ष

गण: डेन्ड्रोकाइरोटा (Dendrochirota)

श्रेणी: कुकुमेरिया (Cucumaria)

आवास एवं प्रकृति

यह समुद्र में 200 फेदम गहराई तक मिट्टी व कीचड़ में धँसा हु आ पाया जाता है । यह प्लवक व अपरद को भोजन के रूप में प्रयोग करता है ।

वितरण

सर्वव्यापी, विशेष रूप से भारत यूरोप तथा अमेरिका में पाया जाता है ।

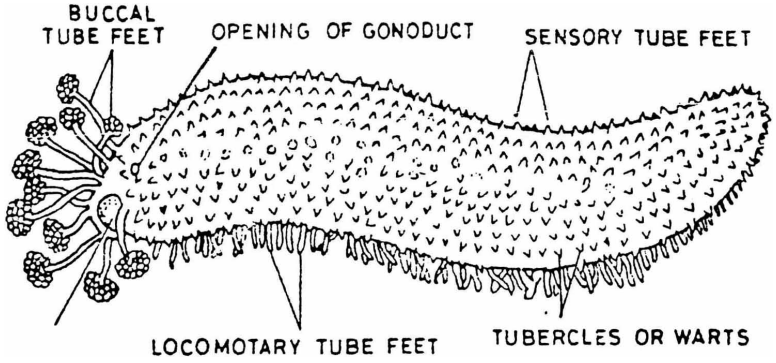

चित्र 6.40 : कुकुमेरिया (समुद्री खीरा)

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: समुद्री खीरा कहलाता है ।
2. देह लम्बी, बेलनाकार, काले रंग की, अगले सिरे पर मुख तथा पश्च सिरे पर गुदा पाये जाते हैं ।
3. मुख के चारों ओर 10 स्पर्शक पाये जाते है ।
4. नाल पाद दो कतारों में व्यवस्थित रहते हैं । अधर सतह के नाल पाद पर चूषक पाये जाते है । ये गमन का कार्य करते हैं सतह पर पाये जाने वाले नाल पाद संवदी होते हैं ।
5. शरीर पर केल्केरियस अस्थिकाएँ पायी जाती है ।
6. क्यूवियर नलिकाएँ (cuvier tubes) तथा श्वसन वृक्ष (respiratory tree) पाये जाते हैं ।

विशिष्ट लक्षण

जन्तु को पकड़ने के लिए श्वसन वृक्ष बाहर निकालकर उससे श्लेष्म स्रावित कर जंतु को उलझाकर उसका शिकार कर लेता है ।

एन्टीडोन (Antedon)

संघ : इकाइनोडमैटा

उपसंघ : पेल्मेटोजोआ (Pelmatoza)

स्थिर अवस्था में रहने वाला

वर्ग : क्रिनोइडिया (Crinoidea)

वृन्त द्वारा, अपमुख सतह से आधार से चिपका रहता

गण : आर्टिकुलेटा (Articulata) द्वारा ढ़की रहती है ।

आवास एवं प्रकृति

यह समुद्र में आधारी सिरसो (cirsso) द्वारा चट्टानों से चिपका हुआ पाया जाता है । भोजन के रूप में सूक्ष्म जीवों को खाता है ।

वितरण

विश्वव्यापी, हिन्द महासागर, प्रशान्त महासागर, अटलांटिक तट, न्यूफ़ाउण्ड लैण्ड की खाड़ी के किनारों पर पाया जाता है ।

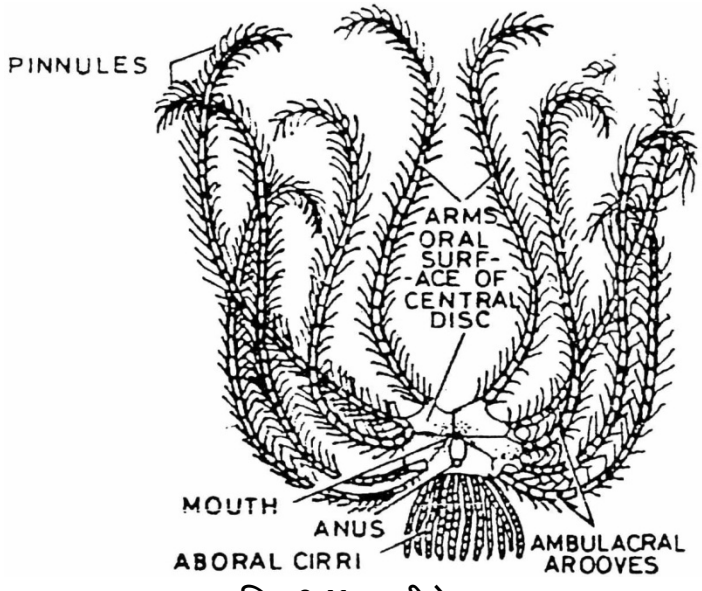

चित्र 6.41: एन्टीडोन

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: सी लिलि या फेदर स्टार (feather star) के नाम से जाना जाता है ।
2. देह प्याले के समान केंदद्रय बिम्ब व उससे निकलने वाली 10 भुजाओं में विभाजित होता है।
3. केंद्रीय बिम्ब पर ऊपर की ओर मुख व गुदा होते हैं, जबकि उपमुख सतह पर चिपकने के लिए सिराई (cirri) होते हैं ।
4. मुख आहार खाँचों में खुलता है, प्रत्येक खाँच 2 भागों में विभाजित हो भुजाओं में खुल जाती है ।
5. वृन्त दंश नामक घुण्डी समान संरचना अपमुख सतह पर उपस्थित होती है ।
6. मुख के चारों ओर संवेदी नाल पाद पाये जाते हैं किन्तु उनमें चूषक अनुपस्थित होते हैं ।
7. लिंग पृथक होते है । अप्रत्यक्ष परिवर्धन अर्थात् सिस्टिअन लार्वा पाया जाता है ।

विशिष्ट लक्षण

यह आधा समूह है इनके जीवाश्म भी बन चुके है ।

बेलेनोग्लॉसस (Balanoglossus)

संघ: हेमीकार्डेटा (Hemichordata)

देह के अग्र भाग (सिर) में नोटोकार्ड पायी जाती है, समुद्री तथा देह गुहा आंत्रगुहीय होती है ।

वर्ग: एन्टेरोपेन्यूस्टा (Enteropneusta)

देह तीन भागों अर्थात् शुण्ड (Proboscis) कॉलर तथा धड़ (trunk) में विभाजित

श्रेणी : बेलेनोग्लॉसस

आवास एवं प्रकृति

समुद्र के पेंदे में तथा छिछले जल में U आकार के बिल बनाकर रहता है ।

वितरण

सर्वव्यापी

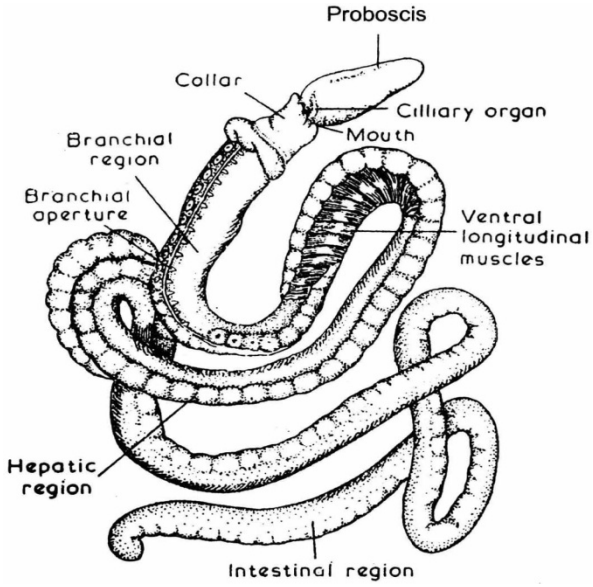

चित्र 6. 42 : बेलोनोग्लॉसस

सामान्य लक्षण

1. सामान्यत: जिव्हा कृमि (tongue worm) या एक्रोन कृमि (Acron worm) नाम से जाना जाता है ।
2. शरीर लम्बा, बेलनाकार शुण्ड, कॉलर व धड़ में विभाजित होता है ।
3. शुण्ड शंम्वाकार होती है इसमें मुख अंधवर्ध (buccal divertiula) तथा हृदय वेश्व (heart veside) पाये जाते है ।
4. कॉलर की के समान मध्य भाग होता है इसमें मुख व कॉलर गुहा (सीलोम) पाये जाते है ।
5. धड़ लम्बा, बेलनाकार होता है इसमें ग्रसनी, आहार नाल, यकृत (hepatic caeca) तथा जनद (gonads) पाये जाते है ।
6. आहार नाल पूर्ण विकसित होती है । परिसंचरण तंत्र में संकुचन शील हृदय होता है ।

7. यह एक लिंगी होता है व लैंगिक द्विरूपता पायी जाती है ।

8. पुनरुदभवन क्षमता पायी जाती है ।

विशिष्ट लक्षण

बाह्य निषेचन व अप्रत्यक्ष परिवर्धन में टॉरनेरिया लार्वा (tornaria larva) पाया जाता है ।

ISBN - 13/978-81-8496-010-5